5397

शोधादर्श

४२

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

नवम्बर २०००

संस्थापक एवं आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
प्रबन्ध/प्रधान सम्पादक एवं प्रकाशक : श्री अजित प्रसाद जैन
महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.
पारस सदन, आर्यनगर, लखनऊ-२२६ ००४
सम्पादक मण्डल : डॉ. शशि कान्त, श्री रमा कान्त जैन

णाणं णरस्स सारं - सच्चं लोयम्मि सारभूयं

शोधादर्श-४२

वीर निर्वाण संवत् २५२७ — नवम्बर २००० ई.

विषय-क्रम

१. गुरुगुण-कीर्तन : महाकवि पुष्पदन्त	श्री रमा कान्त जैन	२३१
२. जैन स्तोत्र-साहित्य	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	२३८
३. सम्पादकीय : बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर में भ. ऋषभदेव-मूर्ति स्थापना का विरोध	श्री अजित प्रसाद जैन	२४२
४. शिवमहिम्नःस्तोत्र विमर्श	डॉ. अमर पाल सिंह	२४६
टिप्पणी : जैन परम्परा में शिव	डॉ. शशि कान्त	२५७
५. पउमचरियं	डॉ. राजमल बोरा	२५६
टिप्पणी : रामकथा और विमलसूरि	डॉ. शशि कान्त	२६३
६. आदिपुराण में नारी का चित्रण	डॉ. (कु.) मालती जैन	२६५
'भरत' : शब्द-यात्रा	श्री वेद प्रकाश गर्ग	२६६
८. विचार बिन्दु : साधु समाज में फैलता शिथिलाचार	श्री गुलाब चन्द्र जैन	२७२
चिन्तन कण : उपेक्षा-अपेक्षा द्वन्द	श्री सुखमाल चन्द जैन	२७४
१०. चिन्तन कण : जैन धर्म : कुछ परिभाषायें, कुछ जिज्ञासायें	श्री मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त'	२७५
११. विचार बिन्दु : ज्वलन्त प्रश्न - मुनिचर्या पर	पं. धन्य कुमार जैन	२७६
१२. विचार बिन्दु : जैन समाज का यथार्थ-बोध	डॉ. शशि कान्त	२७८
१३. परिचर्चा : तीर्थंकरों की संख्या और जैन धर्म की प्राचीनता	जस्टिस एम. एल. जैन	२८५
१४. शोध विमर्श : खारवेल का हाथीगुम्फा शिलालेख : कुछ विचारणीय बिन्दु	डॉ. शशि कान्त	२८८

१५.	सामयिक परिदृश्य : क्षणिकायें	श्री रमा कान्त जैन	२६५
१६.	सामयिक परिदृश्य : जनगण नादान, टोपी महान!	श्री राजीव कान्त जैन	२६६
१७.	डॉ. शशि कान्त को 'बीसवीं शताब्दी रत्न' सम्मान	डॉ. बीजेन्द्र कुमार जैमिनी	२६८
१८.	तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश - प्रगति प्रतिवेदन वर्ष १९९९-२०००	श्री अजित प्रसाद जैन	३०१
१९.	साहित्य सत्कार :		
	कुण्डलपुर का सच; शल्योद्धार भव आलोचना; गौरवगाथा आचार्य श्री विद्यानन्द; बनना एक आत्मा का बहिरात्मा से अन्तर्आत्मा; हंसते-हंसते जीना, हंसते-हंसते मरना; जैन दर्शन-पारिभाषिक कोश; जैन तत्त्व विद्या; स्तुतिविद्या; ABC of Jainism - A Way of Noble Life; डॉ. नेमीचन्द जैन - सन्दर्भ साहित्य : सहचिन्तन, १-२; माटी का सौरभ; श्री सम्मेद-शिखर मंगल पाठ	श्री अजित प्रसाद जैन	३०५
	पुण्यास्रव-कथा (-कोश); आख्या ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन; जैन दर्शन की प्राचीनता, कर्म सिद्धान्त एवम् आत्मा का स्वरूप; छन्द शतक; भव आलोचना एवं प्रतिज्ञा; श्री अवध दि. जैन समाज निर्देशिका २०००; Indian Cattle Weath; असली पञ्चांग वि.स. २०५७; भावत्रयफलदर्शी तथा बोधामृतसार गीत के गांव	श्री रमा कान्त जैन	३०८
	The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka	डॉ. ए. एल श्रीवास्तव	३१२
	आपकी समस्या - हमारा समाधान; शिवांजलि २०००; समाज प्रवाह; दिशाबोध; सम्पर्क; श्रमण; कल्लोल; मांस-भक्षण-परिवर्त; भारतीय कला-प्रतीक; कच्ची माटी पकती धूप; Spiritual Insights; Spiritual Enlightenment; The Path to Enlightenment	डॉ. शशि कान्त	३१४
२०.	समाचार विमर्श :	श्री अजित प्रसाद जैन	
	शिखरजी में पानी-बिजली व्यवस्था फिर चरमराई		३२१
	श्री सम्मेदशिखर जी में जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर		३२२
	'वीर' और अब 'अति वीर' भी		३२२
	पाठ्य पुस्तकों से आपत्तिजनक अंश हटाये जाने की घोषणा		३२३
	जैन संत 'पामिस्ट ऑफ दि मिलेनियम' अवार्ड से सम्मानित		३२३

२१वीं सदी का पुरुषमेध सोत्रामणी महायज्ञ ३२४
चन्द्रमा पर इंसान के पैर अभी पड़े ही नहीं - अमरीकी दावा झूठा ३२५
भाषा समिति का विचित्र पालन ३२६
जैन मन्दिर बनाम मैरिज हाउस ३२६
नन्दीश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक ३२७
२१. अभिनन्दन ३२८
२२. समाचार विविधा ३३०
२३. शोक संवेदन ३३३
२४. पाठको की दृष्टि में ३३४
प्रा. डॉ. कुलभूषण लोखंडे, श्री मदन मोहन वर्मा, श्री मूलचन्द जैन अजमेरा, श्री महाबीर प्रसाद जैन सर्राफ, श्री दामोदर जैन, डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, डॉ. अनिल कुमार जैन, श्री मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त', श्री शैलेश कापड़िया, श्री मिलाप चन्द डंडिया, प्रो. डॉ. एम.डी. बसन्तराज
२५. सम्पादकीय : अलविदा! ३३९
२६. अनुक्रमणिका : शोधादर्श १-४२
खण्ड-क : लेखक वृंद : ३४१
खण्ड-ख : सम्पादक मण्डल : डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ३५७
श्री अजित प्रसाद जैन ३६०
श्री रमा कान्त जैन ३६७
डॉ. शशि कान्त ३७१
खण्ड-ग : पारखी पाठक ३७६

वार्षिक शुल्क रु. ५०/- (मनी-आर्डर द्वारा प्रेष्य)

एक प्रति का मूल्य रु. २०/-

आवश्यक सूचना

कृपया वर्ष २००१ का वार्षिक शुल्क ५० रु. (पचास रुपये) मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६ ००४', को भेजने का अनुग्रह करें। चेक अथवा ड्राफ्ट न भेजें।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमन्त्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिए और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिएं। यथासम्भव लेख ३-४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। **लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें।**

शोधादर्श में **समीक्षार्थ** पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की दो प्रतियां भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु **शोधादर्श** का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधि पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा उद्‌बोधन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

— प्रबन्ध/प्रधान सम्पादक

मुद्रक : रत्न-ज्योति प्रेस, चारबाग, लखनऊ-४ (उ. प्र.)

महाकवि पुष्पदन्त

सारल्येन प्रबोधाय, पुष्पदन्तेन धीमता
अपभ्रंश्यां तु भाषायां, ग्रन्थाः हि परिग्रन्थिताः।। ४।।
माधुर्येण हि संपृक्तं, द्विरेफैः संचितं मधु
भारती मधुरा तद्वत्, पुष्पदन्तस्य रोचते।। ५।।
पुष्पदन्तद्विरेफेण, साहित्योद्यानतो द्रुतम्
मधुना भरितोऽयं वै, स्थापितश्चषको महान्।। ६।।
एवं हि पुष्पदन्तोऽसौ, काव्याकाशे महाकविः
चकाशे सूर्यसंकाशः, स्वीय प्रज्ञा शुभांशुभिः।। ७।।
माहात्म्यं श्रुतपंचम्या, व्याख्यातुं काव्यकर्मणा
नागकुमारचारित्र्यं, चर्चितं चारूरूपतः।। ८।।
श्री यशोधरचारित्र्यं, स्वीयमाचरितं यथा
प्रबन्धकाव्यसिद्धान्तैः, प्रशस्तं पूरितं ध्रुवम्।। ११।।
महापुराणसंज्ञेयं, तृतीया महती कृतिः
सहस्राणां त्रिषष्ट्या च, गदितं काव्यमद्भुतम्।। १२।।

– श्री रमेश मुनि शास्त्री : प्रशस्तिका

(**जैन विद्या**, पुष्पदंत विशेषांक, २, पृ. ९७-९८)

भावार्थ – धीमान पुष्पदन्त ने सरलता से प्रबोध देने (समझाने) के लिये अपभ्रंश भाषा में ही ग्रन्थ रचे। **भ्रमरों** द्वारा संचित मधु जैसे माधुर्य से युक्त होता है (अर्थात् मीठा होता है और अच्छा लगता **है), उसी प्रकार** पुष्पदन्त की मधुर वाणी (साहित्य अर्थात् कृतियां) अच्छी लगती हैं। साहित्य रूपी **उद्यान से पुष्पदन्त** रूपी भ्रमर द्वारा यह साहित्य शीघ्रता से मधु से भरकर एक महान चषक (मधु **का प्याला) के** रूप में तैयार किया गया है, अर्थात् उनकी कृतियां माधुर्य से परिपूर्ण हैं। इसी प्रकार वह **महाकवि पुष्पदन्त** अपनी प्रज्ञा की शुभ किरणों से काव्य रूपी आकाश में सूर्य सम प्रकाशित हुए। **श्रुतपंचमी का** माहात्म्य काव्य कर्म द्वारा (कविता द्वारा) व्याख्यायित करने के लिये उन्होंने चारू रूप (सुन्दर रूप) में **नागकुमार चरित्र** रचा। प्रबन्ध काव्य के सिद्धान्तों से निश्चय ही पूरी तरह पूरित, मानों अपना चरित्र लिख रहे हों, उन्होंने **श्री यशोधर चरित्र** की रचना की। और **महापुराण** नामक तृतीय महान कृति को तिरसठ सहस्र लोगों ने अद्भुत काव्य बताया है।

कविपिशाच! अभिमान चिह्न! अभिमान मेरू! कवि आप्त।

महापुराण सदृश जीवन में रसधारा है व्याप्त।।

बाधारहित धर्ममय जीवन, धन्य तुम्हारा नाम।

पुष्पदन्त कविवर! स्वीकारो हार्दिक शब्द प्रणाम।।

– पण्डित विष्णुकान्त शुक्ल

(**जैन विद्या**, पुष्पदन्त विशेषांक,१, पृ. ५०)

ऊपर अपभ्रंश भाषा के जिन महाकवि पुष्पदन्त का सादर स्मरण किया गया है, उन्होंने अपने **तिसट्ठिमहापुरिस-गुणालंकार महापुराण** की अन्तिम प्रशस्ति में आत्म परिचय निम्नवत् दिया है – "अमीरों और गरीबों के प्रति समदृष्टि रखने वाला मैं मुक्तिरूपी वधू का दूत हूँ। माँ मुग्धा देवी और पिता केशव भट्ट। गोत्र काश्यप। सरस्वती के साथ विलास करने वाला। पाप पटल से दूर रहने वाला। सूने घरों और मन्दिरों में निवास करने वाला। पुराने वल्कल और चीवरों को धारण करने वाला। न घर-बार और न स्त्री। नदियों, बावड़ियों और तालाबों में नहा लेना, और दुर्जनों से दूर रहना। धूल-धूसरित शरीर, धरती का बिछौना और हाथों का आच्छादन। सदैव सन्यास मरण की इच्छा रखने वाला। अर्हत् के ध्यान का योगी, और भरत के आश्रय में रहने वाला। अपने सृजन से लोगों को पुलकित करने वाला। कविकुलतिलक अभिमान-मेरू।"

दसवीं सन्धि के प्रारम्भिक प्रशस्ति छन्द में भी कवि कहता है –

जगं रम्मं हम्मं दीवओ चन्दबिम्बं

धरित्ती पल्लंको दो वि हत्था सुवत्थं।

पिया णिद्धा णिच्चं कव्वकीला विणोओ

अदीणत्तं चित्तं ईसरो पुप्फदन्तो।।

अर्थात्, यह सुन्दर संसार जिसका घर है, चन्द्रबिम्ब दीपक है, धरती पलंग है और दो हाथ भर जिसके पास वस्त्र हैं, नित्य आने वाली नींद प्रिया है, काव्यक्रीड़ा विनोद है और चित्त अदीन है, ऐसा पुष्पदन्त ईश्वर है (अर्थात् वह अपने को ईश्वर से कम नहीं समझता है)।

ऐसे फक्कड़, निष्परिग्रह किन्तु आत्माभिमानी कवि पुष्पदन्त के सम्बन्ध में डॉ. पी.एल. वैद्य ने **महापुराण** के अपने परिचय में सूचित किया है कि वह ब्राह्मण परिवार के थे, इनके माता-पिता दोनों शिव के भक्त थे, बाद में उन्होंने जैन धर्म ग्रहण कर लिया, पुष्पदन्त का रंग काला और शरीर दुबला-पतला था।

महापुराण की प्रथम सन्धि (सर्ग या पर्व) से विदित होता है कि पुष्पदन्त दुर्गम लम्बी यात्रा करके राजाधिराज तुडिग के राज्य में मेपाडि नगर की सीमा पर स्थित उद्यान में पहुँचकर जब वहाँ विश्राम कर रहे थे तब वहाँ अम्मयइ और इन्द्रराज नामक दो नागरिकों ने उनका अभिनन्दन कर उन्हें नगर में एक सज्जन पुरुष भरत का आश्रय ग्रहण करने को प्रेरित किया, जो जिन भक्त थे,

श्रीमती अम्बा देवी के पुत्र और अण्णइया के पौत्र थे, शुभतुंगदेव के अमात्य थे, कवियों का सम्मान करने वाले थे और दानवीर थे। उन नागरिकों के आग्रह पर पुष्पदन्त भरत के पास गये जिसने उन्हें बहुत आवभगत के साथ आश्रय प्रदान किया और पुरुदेव-चरित्र (पुरुएवचरिय) लिखने का अनुरोध किया। यह भी विदित होता है कि इसके पूर्व किसी वीर भैरवराजा के आश्रय में रहकर अपने आश्रयदाता की प्रशस्ति में किसी काव्य की रचना वह कर चुके थे, किन्तु बाद में उस राजा द्वारा अपमानित किये जाने पर उससे रुष्ट होकर सम्पत्तिवान और सत्तावान व्यक्तियों के प्रति मन में क्षोभ धारण कर काव्य सृजन से भी उदासीन हो चले थे, और यह बात भरत को सुविदित थी। उक्त भैरवराजा कौन और कहाँ का राजा था और उसके सम्बन्ध में उन्होंने किस कृति की रचना की थी, यह कवि ने स्पष्ट नहीं किया है। प्रभाचन्द्र के **टिप्पण** के आधार पर पं. नाथूराम 'प्रेमी' ने कृति का नाम 'कथा-मकरन्द' अनुमानित किया है। यह भी विदित नहीं है कि वह किन अन्य कृतियों का सृजन कर चुके थे, किन्तु इतना स्पष्ट है कि उनकी प्रतिभा की ख्याति प्रसार पा चुकी थी।

[मेपाडि नगर से तात्पर्य राष्ट्रकूटों की राजधानी मान्यखेट (मलखेड) से है। राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज तृतीय अकालवर्ष (६३६-६७ ई.) के अन्य नाम तुडिग और शुभतुंग थे, तथा उसने चोल राजा पर विजय प्राप्त की थी। उसका उल्लेख भी 'चोलराजा के केशपाश वाले भ्रूभंग से भयंकर सिर को नष्ट करने वाला' के रूप में किया गया है। पुरुदेव से तात्पर्य आदिनाथ ऋषभदेव का है, परन्तु न तो सन्धि १० में जहां ऋषभदेव के विभिन्न विरुद दिये गये हैं और ना ही अन्यत्र कवि ने यह स्पष्ट किया है कि 'पुरुदेव' शब्द का प्रयोग क्यों किया है।]

प्रथम सन्धि के कडवक ६ में कवि ने अपने लिये 'खंडु' शब्द का प्रयोग किया है जो कदाचित् उनका घरेलू नाम रहा होगा, 'पुष्पदन्त' (पुप्फयंत) उनका कवि नाम रहा प्रतीत होता है। उनकी कृतियों की भाषा को देखते हुए, पं. नाथूराम 'प्रेमी' उन्हें कर्नाटक या उससे और दक्षिण के प्रान्तों का नहीं मानते। मार्कण्डेय ने अपने **प्राकृत-सर्वस्व** में अपभ्रंश भाषा के तीन भेद नागर, उपनागर और ब्रांचड बताये हैं और इनमें से ब्राचड को लाट (गुजरात) और विदर्भ की भाषा बतलाया है। यद्यपि विदर्भ की भाषा मराठी है और इसीलिए श्री ग.वा.तगारे ने पुष्पदन्त को प्राचीन मराठी का महाकवि बतलाया है, प्रेमी जी ने पुष्पदन्त की कृतियों की भाषा ब्राचड अपभ्रंश मानते हुए और उन्हें **सिद्धान्तशेखर** नामक ज्योतिष ग्रन्थ के कर्ता श्रीपति भट्ट, जो बुलढाना जिले के रोहिणीखेड (रोहनखेड) के निवासी और केशवभट्ट के पौत्र थे, को कवि पुष्पदन्त का भतीजा अनुमानित करते हुए, कवि का मूल स्थान विदर्भ (बरार) प्रदेश अनुमानित किया है।

२४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ वासुदेव, ९ बलदेव और ९ प्रति-वासुदेव के चरित्र का वर्णन करने वाले **तिसट्ठिमहापुरिस गुणालंकार महापुराण** की रचना महाकवि पुष्पदन्त ने शक संवत् के सिद्धार्थ वर्ष (९५९ ई.) में प्रारंभ की थी और उसे उक्त संवत् के क्रोधन वर्ष (९६५ ई.) में पूर्ण किया था। डॉ पी.एल. वैद्य और डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन ने यह महापुराण १०२ सन्धियों में १९०७ कड़वकों में पूरा हुआ बताया है, जबकि प्रेमी जी ने संधियों की संख्या ८०+४२ = कुल १२२ उल्लिखित की है और इसका श्लोक-परिमाण लगभग बीस हजार सूचित किया है। प्रथम ३७ सन्धियों

में आदि तीर्थंकर ऋषभदेव और प्रथम चक्रवर्ती भरत की कथा के साथ-साथ प्रथम कामदेव बाहुबलि, जो उपर्युक्त ६३ महापुरुषों में परिगणित नहीं हैं, का चरित निबद्ध है और यह भाग **नाभेयचरिउ आदिपुराण** के नाम से जाना जाता है। शेष सन्धियों में शेष २३ तीर्थंकरों, शेष चक्रवर्तियों और अन्य महापुरुषों के चरित्र वर्णित हैं और वह भाग **उत्तरपुराण** कहलाता है। उसके अन्तर्गत रामकथा का जैन रूप और हरिवंश की कथा भी समाहित है।

महापुराण की रचना के अनन्तर कवि ने अमात्य भरत के पुत्र नन्न के आश्रय में और उसकी प्रेरणा से **णायकुमारचरिउ** और **जसहरचरिउ** काव्यों की रचना की थी। नन्न अपने पिता के उपरान्त उनकी भांति पहले राष्ट्रकूट नरेश शुभतुंगराज (कृष्णराज तृतीय) का और तदनन्तर उसके छोटे भाई खोट्टिगदेव नित्यवर्ष (९६७-७२ ई.) का अमात्य रहा था। नागकुमार-चरित्र का वर्णन करने हेतु नन्न के अलावा अपने शिष्य गुणधर्म, नाइल्ल और शीलभट्ट (शीलैय्या) के अनुरोध पर कवि ने 'श्री पंचमी व्रत' का फल स्पष्ट करने हेतु ९ संधियों में **णायकुमारचरिउ** की रचना की और तदनन्तर यशोधर का आख्यान वर्णित करने हेतु ४ संधियों में १३८ कड़वकों में **जसहरचरिउ** की रचना की।

यद्यपि महाकवि पुष्पदन्त की उपर्युक्त तीनों कृतियां प्रमुख रूप से अपभ्रंश भाषा में निबद्ध हैं, वह संस्कृत के भी सिद्धहस्त कवि थे। यह तथ्य उपरोक्त कृतियों की उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियों में विभिन्न संधियों के प्रारम्भ में अंकित प्रशस्ति श्लोकों से स्पष्ट है। **महापुराण** की ५०वीं सन्धि के प्रारम्भ में ९७२ ई. में घटित धारा नरेश परमारवंशी सीयक श्री हर्षदेव द्वारा मान्यखेट की लूटपाट का उल्लेख करने वाला निम्नलिखित श्लोक अंकित है -

दीनानाथधनं सदाबहुजनं प्रोत्फुल्लवल्लीवनं
मान्यखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम्।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियं
क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः।।

भावार्थ - दीनों और अनाथों का धन, सदा बहुजनों को प्रफुल्लित करने वाले वल्लीवन के समान, इन्द्रपुरी की लीला हरने वाला (उसके सौन्दर्य को मात देने वाला) सुन्दर मान्यखेटपुर धाराधीश की कोपाग्नि में जलकर भस्म हो गया है। श्री पुष्पदन्त कवि अब फिर कहाँ जाकर रहेगा (अर्थात् उसका रहा सहा आश्रय समाप्त हो गया है)।

९६५ ई. में पूर्ण हुए **महापुराण** में सात वर्ष बाद ९७२ ई. में घटित ऐतिहासिक घटना का वर्णन करने वाले इस श्लोक का पाया जाना इस बात का सूचक है कि वह बाद में जोड़ा गया है। आश्रयदाता भरत और नन्न तथा स्वयं कवि की प्रशास्ति में रचित श्लोक व छन्द जो **महापुराण** और **जसहरचरिउ** की अधिकांश प्रतिलिपियों में विभिन्न संधियों के प्रारम्भ में पाये जाते हैं, के विषय में काफी ऊहापोह के उपरान्त डॉ. पी.एल. वैद्य इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि ये प्रशस्ति श्लोक/छन्द भले ही बाद में जोड़े गये हों, स्वयं कवि पुष्पदन्त द्वारा ही रचित हैं क्योंकि कृतियों की रचना के सैकड़ों

वर्ष पश्चात् की गई प्रतिलिपियों में प्रतिलिपिकारों को कवि के आश्रयदाता भरत और नन्न से क्या लेना-देना था जो वे इस प्रकार उनकी प्रशस्ति में श्लोक/छन्द रचकर कृतियों में जोड़ते, यह कार्य तो उपकृत कवि द्वारा ही संभव था। मान्यखेट के विध्वंस का उपर्युक्त वर्णन उक्त नगर में तत्समय रह रहे कवि द्वारा ही संभव था। अतः उनका अनुमान है कि ये प्रशस्ति श्लोक/छन्द आदि कवि ने कृतियां पूर्ण करने के उपरान्त स्वयं यथाइच्छा-यथासुविधा रचे और बाद में अपनी पाण्डुलिपियों में जोड़े होंगे।

इसी अंक में प्रकाशित पुष्पदन्त (९५९-७४) ई. द्वारा रचित एक **शिव-महिम्नि-स्तोत्र** का उल्लेख डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने 'जैन स्तोत्र-साहित्य' के अंतर्गत किया है। डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' के अनुसार ''पुष्पदंत के नाम से एक **शिवमहिम्नः स्तोत्र** मिलता है, जिसे कवि की शैशवावस्था एवं जैन धर्म में दीक्षित होने से पूर्व की रचना होना स्वीकार किया जाता है। इस **स्तोत्र** में शैवमत को मानने वाले किसी भैरव नरेन्द्र नामक राजा की प्रशंसा है। जैन-साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् श्री नाथूराम प्रेमी ने **शिवमहिम्नः स्तोत्र** के रचनाकार पुष्पदंत एवं **महापुराण** के रचयिता पुष्पदंत को भिन्न माना है।'' (**जैन विद्या**, पुष्पदंत विशेषांक १)

प्रेमी जी का अभिमत है कि ''स्तोत्र साहित्य में **शिवमहिम्न-स्तोत्र** बहुत प्रसिद्ध है और उसके कर्ता का नाम भी **पुष्पदन्त** है। परन्तु राजशेखर ने अपनी **काव्य-मीमांसा** में **शिव-महिम्न** का एक श्लोक उद्धृत किया है। अतएव उसका समय राजशेखर से पहले का होना चाहिए और तब अभिमानमेरू पुष्पदन्त से **शिव-महिम्न** के कर्ता भिन्न और पूर्ववर्ती होने चाहिए।'' (**जैन साहित्य और इतिहास**, पृ. २२६)

हमारे अनुरोध पर वयोवृद्ध विद्वान डॉ. अमरपाल सिंह ने 'शिवमहिम्नःस्तोत्र विमर्श' लिखा है, जो आगे इसी अंक में प्रकाशित है। उन्होंने सूचित किया है कि **शिवमहिम्नः स्तोत्र** का पाँचवां श्लोक 'किमीहः किं कायः....' राजशेखर ने अपनी **काव्य मीमांसा** में न्याय-वैशेषिक दर्शन के उदाहरणस्वरूप उद्धृत किया है और चूंकि राजशेखर का समय ८८०-९२० ई. माना जाता है, अतः **शिवमहिम्नः स्तोत्र** का रचनाकाल ईस्वी सन् ८०० के आसपास अथवा इसके पूर्व हो सकता है। उन्होंने यह भी सूचित किया है कि शिखरिणी छन्द में निबद्ध, प्राचीनकाल से शिवभक्तों को अत्यन्त प्रिय रहे इस स्तोत्र में यद्यपि अब ४३ श्लोक मिलते हैं, मूलतः ३१ श्लोक रहे प्रतीत होते हैं क्योंकि इसके अधुनाज्ञात सर्वप्राचीन शिलालेखीय अंकन जो विक्रम संवत् ११२० (१०६३ ई.) का है, में प्रथम ३१ श्लोक ही उत्कीर्ण हैं और उन्हीं पर परवर्ती पण्डितों ने टीका लिखी हैं। तदनन्तर जुड़े १२ श्लोकों में से ४ श्लोकों में 'पुष्पदन्त' नाम आने से पुष्पदन्त को इसका कर्ता बताया जाने लगा।

इस स्तोत्र के ४३ श्लोकों में से किसी भी श्लोक में, शिव के पर्यायवाची रूप में भी 'भैरव' शब्द के प्रयोग का अभाव होने से डॉ. शर्मा का यह कथन कि 'इस स्तोत्र में शैवमत को मानने वाले किसी भैरव नरेन्द्र नामक राजा की प्रशंसा है', मान्य करना कठिन प्रतीत होता है।

महापुराण की प्रथम सन्धि के कड़वक ९ में रचनाकार ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों,

साहित्यकारों, कवियों आदि का सादर स्मरण किया है। उक्त नामावलि में राजशेखर, जो उनसे पूर्ववर्ती रहे, का नाम तो नहीं है, किन्तु न्याय-वैशेषिक दर्शन के प्रस्तोता कणाद (कणयर) का नाम है। दसवीं संधि में ऋषभ जिन की स्तुति की गई है। इसमें कड़वक ५ का निम्नांकित अंश ध्यातव्य है, जिसमें ऋषभ को शिव के विभिन्न पर्यायवाची नामों से सम्बोधा गया है –

'कंकाल, त्रिशूल, मनुष्य-कपाल, साँप और स्त्री से रहित, आपकी जय हो। हे भगवान, सन्त, **शिव**, कृपावान, मनुष्यों के द्वारा वन्दित चरण और दूसरों का भला करने वाले आपकी जय हो। सुकवियों के द्वारा कथित अशेष नाम वाले, भय को दूर करने वाले, अपने अन्तरंग शत्रुओं के लिये भयंकर, आपकी जय हो। स्त्री से विमुक्त संसार के लिये प्रतिकूल **त्रिपुर** (जन्म, जरा और मरण) **का अपहरण करने वाले**, धैर्य के धाम हे **हर**, आपकी जय हो। शाश्वत स्वयम्भूभाव को प्रकट करने वाले और पदार्थों के ज्ञाता **शम्भु** आपकी जय हो, शान्ति के विधाता **शंकर** आपकी जय हो, कुवलय (पृथ्वीमण्डल, कुमुद मण्डल) को कान्ति प्रदान करने वाले आपकी जय हो। उग्रतप के लिये अग्रगामी **रूद्र** आपकी जय हो, हे भवस्वामी और जन्म को शान्त करने वाले आपकी जय हो। महान गुण समूह के आश्रय हे **महादेव**, आपकी जय हो। **प्रलयकाल के लिये उग्रकाल महाकाल** आपकी जय हो। **गणपतियों को जन्म देने वाले गणेश आपकी जय हो।**'

चूंकि महापुराणकार पुष्पदन्त मूलतः शिव के उपासक थे; भरत के आश्रय में आने के पूर्व शैव मतानुयायी भैरवराजा के आश्रय में रहे थे; उन्होंने ऋषभ-जिन की स्तुति में शिव और उनके विभिन्न पर्यायवाची शब्दों का भी प्रयोग किया है; वह कणाद और उनके न्याय-वैशेषिक दर्शन, जिसके उदाहरणस्वरूप राजशेखर ने **काव्यमीमांसा** में वह श्लोक उद्धृत किया है जो **शिवमहिम्नः स्तोत्र** में भी संयोग से पाया जाता है, से परिचित रहे; उनकी उपर्युक्त प्रसिद्ध ३ कृतियों का रचनाकाल ९५९-९७२ ई. है; **शिवमहिम्नः स्तोत्र** के रचनाकार के रूप में पुष्पदन्त का नाम लिया जाता है तथा इस स्तोत्र का अधुनाज्ञात सर्वप्राचीन शिलालेखीय अंकन उनके बाद १०६३ ई. का है; - ये सभी तथ्य समग्र रूप से **महापुराण** के रचयिता पुष्पदन्त के इस स्तोत्र के रचनाकार होने की संभावना में कोई बाधा उपस्थित करते प्रतीत नहीं होते।

डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन शास्त्री ने महाकवि पुष्पदन्त का उनकी कृतियों के आधार पर मूल्यांकन करते हुए उन्हें मानवीय संवेदनाओं के कुशल चित्रकार, बिम्ब-विधान में अनुपम, प्रतीक-संयोजना में सफल, प्रकृति की पृष्ठभूमि में मानवीय चेतना का सजीव वर्णन करने में रससिद्ध कवि, प्रकृति की सूक्ष्म संवेदनाओं को मानवीय धरातल पर अंकित करने वाला, विविध रंगों की चित्रशाला में सौन्दर्य का सफल अंकन करने वाला, तथा उत्तर एवं दक्षिण भारत के मध्य देशी भाषा का सेतु निर्माण कर शास्त्रीय परम्परा को बहुआयामी रूप प्रदान करने वाला यथार्थ में सशक्त कलाकार बताया है। और डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरूण' ने 'सरस्वती निलय' एवं 'अभिमान मेरू' विरुदों से अभिमण्डित इस महाकवि को अपभ्रंश काव्याकाश का दीप्तिमान चन्द्रमा कहा है। इन दोनों मनीषियों के स्वर में स्वर मिलाता हुआ और महाकवि पुष्पदन्त को नमन करता हुआ मैं अपनी लेखनी को विराम देता हूँ।

सन्दर्भ :

१. पुष्पदन्त : **तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकार महापुराण**, संपादन - डॉ पी.एल. वैद्य,
हिन्दी अनुवाद - डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, ५ भाग, १९७९-८३
जसहरचरिउ - सं. डॉ. पी.एल. वैद्य, हि.अनु.-डॉ. हीरालाल जैन, १९७४
णायकुमारचरिउ - सं. डॉ. हीरालाल जैन, १९७४

२. प्रभाचन्द्र : **टिप्पणकं**

३. मार्कण्डेय : **प्राकृत सर्वस्व**

४. राजशेखर : **काव्यमीमांसा**

५. पं. नाथूराम प्रेमी : **जैन साहित्य और इतिहास**, १९५६

६. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन : **सचित्र भक्तामर रहस्य** में 'आविर्भाव' (१.६.१९७७)

७. **जैन विद्या**, पुष्पदंत विशेषांक - १ व २ (अप्रैल १९८५, नवम्बर १९८५)

- रमा कान्त जैन

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६ ००४

जैन स्तोत्र-साहित्य

- डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

युग के आदि में सौधर्मेन्द्र ने आदि तीर्थंकर की स्तुति की थी। वस्तुतः प्रत्येक तीर्थंकर के जन्मोत्सव तथा अन्य कल्याणकों के अवसर पर भी पूर्ण श्रुतज्ञानी परम-भक्त देवराज भगवान की भावभीनी स्तुति करता है। मानव भक्तों के लिए उक्त शक्रस्तव स्तोत्रों का आदर्श समझा जाता रहा है। अनगिनत भक्तों ने अपनी भक्ति एवं शक्ति के अनुसार इष्टदेव का स्तुति गान किया है। अन्तिम तीर्थंकर वर्धमान महावीर के प्रधान गणधर इन्द्रभूति गौतम ने भी अर्धमागधी भाषा में भगवान का भावपूर्ण स्तोत्र रचा था। आचार्य भद्रबाहु ने **उवसग्गहर स्तोत्र** रचा बताया जाता है। आचार्य कुन्दकुन्द की भक्तियाँ प्रसिद्ध हैं। गत साधिक दो सहस्र वर्षों में प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, तमिल, कन्नड, हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, सिन्धी, मराठी, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि विभिन्न भाषाओं में जिन-भक्तों ने असंख्य स्तुति, स्तोत्र, विनती, पद आदि रचे हैं। भारतीय साहित्य के सुप्रसिद्ध इतिहासकार विन्टरनित्ज़ के अनुसार जैनों ने अति प्राचीनकाल से ही धार्मिक ज्ञेय कविताओं-स्तुति -स्तोत्रादि की रचना में अन्य धर्मावलम्बियों के साथ सफल प्रतिद्वन्दिता की है और अनेक उत्तमोत्तम स्तोत्र भारतीय साहित्य को प्रदान किये हैं, विशेषकर संस्कृत भाषा के जैन स्तोत्र तो भक्ति साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। ज्ञात एवं उपलब्ध स्तोत्रकारों एवं स्तोत्रों में प्रमुख निम्नोक्त हैं-

स्वामि समन्तभद्र	२ री शती ई.	देवागम, स्वयंभू, जिन-स्तुति-शतक (स्तुति-विद्या)
मानदेव	३ री शती ई.	शान्तिस्तव
सिद्धसेन क्षपणक	४ थी शती ई.	महावीर द्वात्रिंशिका एवं अन्य कई द्वात्रिंशिकाएं
पूज्यपाद	५ वीं शती ई.	शान्त्यष्टक, सरस्वती-स्तोत्र, जैनाभिषेक, दशभक्तिः
पात्रकेशरि स्वामि	६ ठीं शती ई.	पात्रकेशरि-स्तोत्र
वज्रनन्दि	६ ठीं शती ई.	नव-स्तोत्र
मानतुंग	७ वीं शती ई.	भक्तामर-स्तोत्र (आदिनाथ-स्तोत्र)
भट्टाकलंकदेव	७ वीं शती ई.	अकलंकाष्टक
जिनसेन पुन्नाट प्रथम	७ वीं शती ई.	जिनेन्द्रगुण-संस्तुति
धनञ्जय	७ वीं शती ई.	विषापहार-स्तोत्र
बप्पभट्टि	८ वीं शती ई.	चतुर्विंशतिजिनस्तुति, सरस्वती-स्तोत्र
विद्यानंद	८ वीं शती ई.	श्रीपुर-पार्श्वनाथ-स्तोत्र
नंदिषेण	६ वीं शती ई.	अजित-शान्ति-स्तव (प्रा)

जिनसेन स्वामि	६ वीं शती ई.	श्री-जिन-सहस्रनाम-स्तोत्र
जम्बूसूरि	६४८ ई.	जिन-शतक
पुष्पदन्त	६५६-७४ ई.	शिव-महिम्नि-स्तोत्र
पोन्न	६६०-६० ई.	जिनाक्षर-माले (क)
शोमन मुनि	६७० ई.	शोमन-स्तुति
धनपाल काश्यप	६७०-१०१५ ई.	ऋषभ-पंचासिका (ग)
गोल्लाचार्य भूपाल	ल. ६७५ ई.	भूपाल चतुर्विंशति
अमितगति	६७५-१०२० ई.	भावना-द्वात्रिंशिका
वादिराज	१०२५ ई.	एकीभाव-स्तोत्र (कल्याण-कल्पद्रुम), अध्यात्माष्टक-स्तोत्र, ज्ञान-लोचन-स्तोत्र
रामनंदि	१०२५ ई.	जिन-शतक
मल्लिषेण	१०४७ ई.	ऋषिमंडल-स्तोत्र, पद्मावति-स्तोत्र
इन्द्रनंदि	ल. १०५० ई.	पार्श्वनाथ-स्तोत्र
अभयदेव सूरि	१०६३-७८ ई.	जयतिहुअण-स्तोत्र (प्रा)
जिनचन्द्र सूरि	१०६८ ई.	संवेग-रंग-शाला
पम्पा देवी	ल. १०७५ ई.	चतुर्भक्ति (क)
माघनंदि मुनि	ल. ११०० ई.	अर्हन्नुतिमाला, चतुर्विंशति-स्तुति
हेमचन्द्राचार्य	११०६-७२ ई.	वीतराग-स्तोत्र, महादेव-स्तोत्र, दो महावीर-द्वात्रिंशिकाएँ
जिन बल्लभ सूरि	१११० ई.	अजित-शांति-लघुस्तवन, भावारि-वारण-स्तोत्र, वीरस्तव, जिन-कल्याण-स्तोत्र
मुनिचन्द्र सूरि	११११-१६ ई.	प्राभातिक-स्तुति
मौक्तिक	११२० ई.	चन्द्रनाथाष्टक (क)
ब्रह्मशिव	११२५ ई.	त्रैलोक्यचूड़ामणि-स्तोत्र (क)
जिनदत्त सूरि	११२५ ई.	स्वार्थाधिष्ठायि-स्तोत्र, विघ्नविनाशि-स्तोत्र
धर्मघोष सूरि	११२५ ई.	ऋषिमंडल-स्तोत्र
कुमुदचन्द्राचार्य	ल. ११२५ ई.	कल्याणमन्दिर-स्तोत्र
भानुकीर्ति	११३६-७७ ई.	शंखदेवाष्टक
वाग्वल्लकी वैणिक	११४३ ई.	चन्द्रप्रभु-स्तुति (क)
राजसेन	ल. ११५० ई.	पार्श्वनाथाष्टक

विष्णुसेन	ल. ११५० ई.	समवशरण-स्तोत्र
श्रीपाल कवि	११५२ ई.	शतार्थी
पद्मप्रभ मलधारि	११६७-१२१७ ई.	पार्श्वनाथ-स्तोत्र (लक्ष्मी-स्तोत्र)
रामचन्द्र सूरि	११७५-१२०० ई.	षोडशस्तवन आदि सात स्तोत्र
विद्यानन्दि	११८१ ई.	पार्श्वनाथ-स्तोत्र
आसड	ल. १२०० ई.	जिन-स्तोत्र
सिद्धसेन	ल. १२०० ई.	शक्रस्तव
शुभचन्द्र	"	जिनपति-स्तवन
वादिराज द्वि.	"	नवग्रह-स्तोत्र
धर्मवर्द्धन	"	षड्भाषा निर्मित पार्श्वजिन-स्तवन
हस्तिमल्ल	ल. १२००-१२२५ ई.	समवशरण-स्तोत्र, संजीवन-स्तोत्र
आशाधर	१२००-१२५० ई.	जिन-सहस्रनाम-स्तवन, सिद्धगुण-स्तोत्र, सरस्वति-स्तोत्र, महावीर-स्तुति
सोमदेव	१२०५ ई.	चिन्तामणि-स्तवन
देवनन्दि	१२२५ ई.	सिद्धिप्रिय-स्तोत्र, स्वयंभूपाठ, लघु-चतुर्विंशति-जिन-स्तवन
गुणवर्म	१२३५ ई.	चन्द्रनाथाष्टक (क)
महेन्द्रसूरि	१२३७ ई.	तीर्थमाला-स्तोत्र, जीरावल्ली-पार्श्व-स्तोत्र
पद्मप्रभ	"	पार्श्वस्तव भुवन-दीपक
सोमसुन्दर	१२४७-६० ई.	श्रीयुगादिदेवमहिम्नःस्तव
वाग्भट	ल. १२५० ई.	सुप्रबोधन-स्तोत्र
नरचन्द्र	"	चतुर्विंशति-जिन-स्तुति
चारुकीर्ति	"	गीत-वीतराग-प्रबन्ध
रत्नकीर्ति	१२७५ ई.	शम्भू-स्तोत्र
जिनप्रभ सूरि	१२९५-१३३३ ई.	चार-पांच स्तोत्र
धर्मघोष	ल. १३०० ई.	यमक-स्तुति, चतुर्विंशति-जिन-स्तुति
रत्नाकर	"	रत्नाकर-पंचविंशतिका
वीरगणि	"	अजित-शान्ति-स्तव (प्रा)
जयशेखर	"	अजित-शान्ति-स्तव
शुभचन्द्र अध्यात्मि	१३१३ ई.	मदालसा स्तोत्र

जिनपद्म	१३३५-४४ ई.	षड्भाषा विभूषित शांतिनाथ-स्तवन
जयतिलक	ल. १३५० ई.	चतुरहारावलि-चित्रस्तव
पद्मनन्दि भट्टारक	१३६०-६५ ई.	अनेक स्तोत्र
मुनि सुन्दर	१३७६ ई.	जिन-स्तोत्र-रत्नकोश
मेरु विजय	१५ वीं शती ई.	चतुर्विंशति-स्तुति
भट्टारक सकलकीर्ति	,,	अर्हन्नाम जिनसहस्रनाम
देवविजय गणि	१६ वीं शती ई.	जिनसहस्रनाम
विनय विजय	१७ वीं शती ई.	जिनसहस्रनाम
भागेन्दु	१६ वीं शती ई.	महावीराष्टक

उपरोक्त सूची से प्रकट है कि लगभग आधी दर्जन **जिनसहस्रनाम स्तोत्र** और एक दर्जन से अधिक **जिन चतुर्विंशतिकाएं** रची गयीं। कई **अजित-शान्ति स्तव** भी हैं। एकाकी तीर्थंकरों में ऋषभ, चन्द्रप्रभु, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर के स्तोत्र ही मुख्यतया रचे गये। कल्याणक, समवशरण आदि विषयों को लेकर भी कुछ स्तोत्र रचे गये। कुछ स्तोत्रों में दार्शनिकता, कुछ में आध्यात्मिकता तथा कुछ में हितोपदेशिता का प्रभाव लक्षित होता है। किन्तु शेष अधिकांश भक्ति परक ही हैं। तीर्थंकरों के अतिरिक्त अन्य देवी-देवताओं में सरस्वती स्तोत्रों की प्रथा ४थी-५वीं शती से मिलने लगती है, और १०वीं-११वीं शती से चक्रेश्वरी, अम्बिका, पद्मावती आदि विशिष्ट प्रभाव वाली शासनदेवियों के स्तोत्र रचे जाने लगे। कई स्तोत्र मंत्रपूत अथवा मांत्रिक शक्ति से युक्त माने जाते रहे हैं, अतएवं उनके साथ सम्बद्ध चमत्कारों की आख्यायिकाएं भी लोक प्रसिद्ध हुईं। ऐसे चमत्कारी स्तोत्रों में समन्तभद्र के **स्वयंभू स्तोत्र**, मानदेव के **शान्तिस्तव**, सिद्धसेन की **महावीर स्तुति**, पूज्यपाद के **शान्त्यष्टक**, पात्रकेशरि के **पात्रकेशरि स्तोत्र**, मानतुंग के **भक्तामर स्तोत्र**, धनञ्जय के **विषापहार**, वादिराज के **एकीभाव**, मल्लिषेण के **ऋषिमंडल** तथा कुमुदचन्द्र के **कल्याण-मन्दिर** की विशेष ख्याति रही है। **भक्तामर, विषापहार, भूपाल चतुर्विंशति, एकीभाव** और **कल्याण-मन्दिर सामूहिक रूप से पंच स्तोत्र** भी कहलाते हैं, और विशेषकर दिगम्बर आम्नाय में ये पंच स्तोत्र अति लोकप्रिय रहे हैं। जैनों के स्तोत्र साहित्य की विपुलता, भव्यता, भावप्रवणता और माधुर्य की अनेक पौर्वात्य एवं पाश्चात्य जैनेतर मनीषियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

[सूची में कोष्ठक में प्रा,क और ग क्रमशः प्राकृत, कन्नड, और गुजराती भाषा का संकेत देते हैं। अन्य सभी संस्कृत भाषा में हैं।

जैन विद्या और भारतीय साहित्य व संस्कृति के विश्व-विश्रुत विद्वान स्व. इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन द्वारा उपर्युक्त विवेचना/सूचना दिनांक १.६.१६७७ को **सचित्र भक्तामर रहस्य** हेतु **आविर्भाव** के अन्तर्गत लेखबद्ध की गई थी।]

सम्पादकीय

बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर में भ. ऋषभदेव–मूर्ति–स्थापना का विरोध

कुछ वर्ष पूर्व राष्ट्र संत आचार्य श्री विद्यानन्द मुनि जी ने बदरीनाथ धाम की पद यात्रा करके विशाल बदरीनाथ पर्वत शिखर को ही प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की **सही निर्वाण स्थली** घोषित किया था। दुर्गम पर्वत शिखरों के मध्य स्थित इस शीत प्रधान स्थल की किसी दिगम्बर जैन मुनि की कदाचित् यह प्रथम ही यात्रा थी। पूज्य आचार्य श्री ने बदरीनाथ के विग्रह के (वहां के रावल जी के सहयोग से) वस्त्र-आभूषण-विहीन मूल रूप में दर्शन करके उसे भी भगवान ऋषभदेव की ही प्रतिमा बताया था। तथापि जैन समाज ने उक्त मूर्ति पर कभी भी अपना दावा नहीं जताया; ना ही कभी आगे जताने का प्रश्न है। यह सर्व विदित है कि देश में ऐसे कई जैन-जन विहीन स्थान हैं जहां पर स्थित जैन तीर्थंकरों की भव्य प्रतिमाओं को स्थानीय लोग अन्य देवों के रूप में पूज रहे हैं पर जैन समाज ने स्थानीय जनता की भावनाओं का आदर करते हुए कभी भी उन मूर्तियों को अपने अधिकार में लेने की चेष्टा नहीं की।

आचार्य श्री की घोषणा से जैन समाज का ध्यान इस तीर्थ धाम की ओर आकर्षित हुआ। दिगम्बर जैन समाज ने बदरीनाथ धाम में एक मन्दिर का निर्माण कर दिनांक २६ जून, १९९८, को एक भव्य समारोह में उसमें आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव सहित चौबीसों तीर्थंकरों के चरणों की स्थापना कर दी। तब से श्री बदरीनाथ धाम में जैन धर्मावलम्बी यात्रियों की आवाजाही भी प्रारम्भ हो गई है। श्वेताम्बर जैन समाज ने भी वहां पर जमीन खरीद कर जैन यात्रियों की सुविधा के लिए एक धर्मशाला का निर्माण कराया है। जैन तीर्थ यात्रियों को देव दर्शन, पूजा, अर्चना की सुविधा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से उनकी योजना धर्मशाला के ही एक भाग में भगवान आदिनाथ की एक प्रतिमा प्रतिष्ठित करने की थी, जैसा कि प्रायः प्रत्येक जैन धर्मशाला में होता है जहां जिन मन्दिर निकट में नहीं होता।

श्वेताम्बर समाज द्वारा अपनी धर्मशाला में भगवान आदिनाथ की प्रतिमा स्थापित करने की योजना की भनक पड़ते ही धर्म नगरी बदरीनाथ की डिमरी, पंडे, पुजारी व महंतों की समाज में मानों भूचाल आ गया। उन्होंने इसे बदरीनाथ के विग्रह की महत्ता नष्ट करने की कुचेष्टा बताया तथा व्यापक विरोध में नारे बाजी, क्रमिक अनशन, प्रदर्शन, यहां तक कि आत्मदाह की धमकियों, का दौर भी शुरू हो गया। जैन समाज एक शान्तिप्रिय, पूर्ण अहिंसक समाज है जो न तो किसी अन्य धर्म की सार्वजनिक आलोचना करता है, ना ही विरोध करता है। यद्यपि भगवान आदिनाथ को भगवान विष्णु का प्रथम पुरुष अवतार घोषित करते हुए **श्रीमद्भागवत** में महर्षि वेदव्यास ने उनकी पूजा स्तुति की है, तथापि सनातन धर्म के स्थानीय नेताओं के प्रबल विरोध को देखते हुए श्वेताम्बर जैन समाज के धर्म गुरु एवं प्रतिनिधि पू. मुनि श्री जम्बूविजय जी ने ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य स्वामी जी

सहित बदरीनाथ मंदिर के पदाधिकारियों, स्थानीय महंतों, धर्म नेताओं एवं गणमान्य नागरिकों के साथ हुई एक सामूहिक वार्ता में यह स्पष्ट घोषणा कर दी तथा लिखित आश्वासन भी दे दिया कि बदरीनाथ धाम में श्वेताम्बर जैन समाज द्वारा कोई मन्दिर-मूर्ति स्थापित नहीं की जाएगी। शान्ति प्रिय श्वेताम्बर जैन समाज का यह निर्णय उचित ही था और हम इसकी सराहना करते हैं, किन्तु इस घोषणा एवं लिखित आश्वासन से भी स्थानीय धर्म नेताओं की आशंका समाप्त नहीं हुई तथा बदरीनाथ मंदिर के मुख्य पुजारी रावल नम्बूदरीपाद तथा तीर्थ धर्म रक्षक संघर्ष समिति के अध्यक्ष योगी राकेशनाथ ने बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर निर्माण व मूर्ति स्थापना के विरोध में समूचे देश में जनमत तैयार करने के लिए कश्मीर से रामेश्वरम् तक एक संकल्प यात्रा निकालने का फैसला किया है। यह तब है जबकि जैनेतर समाज एक भी दृष्टान्त नहीं दे पाई है जब जैन समाज ने अपनी किसी सार्वजनिक घोषणा का अनुपालन न किया हो।

इस प्रकरण के उपरोक्त समाचार विस्तार के साथ **दैनिक जागरण** लखनऊ के दिनांक ४,१३ व २६ जुलाई, ६ अगस्त, ४ व १५ सितम्बर तथा १६ नवम्बर, २०००, के अंकों में प्रकाशित हुए हैं। अब जरा इस प्रकरण में सनातन धर्म के स्थानीय प्रमुख नेताओं द्वारा व्यक्त किए गए उद्‌गारों का भी अवलोकन करें -

संघर्ष समिति के अध्यक्ष महंत राकेशनाथ योगी : "हमारी आस्थाओं को नष्ट करने का अधिकार किसी को नहीं दिया गया है। ...."

रामानुज सम्प्रदाय के प्रकाण्ड विद्वान भ्रगुवंशाचार्य एवं धर्म रक्षक समिति के संयोजक उदय सिंह रावत : "हिन्दू धर्मावलम्बियों की आस्था के केन्द्र बदरीनाथ में जैन मन्दिर का निर्माण अनौचित्य पूर्ण ही नहीं अपितु अनैतिक विचार भी है। ..." विद्वान-द्वय ने कहा कि "हिन्दुओं और जैन पंथियों में हमेशा विपरीत दिशा का चलन रहा है। ....." श्री रावत ने आत्मदाह की धमकी भी दी।

बदरीनाथ मन्दिर समिति के अध्यक्ष विनोद नौटियाल : "जैन समाज को कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे बदरीनाथ पीठ की महत्ता पर आँच आए और अधिसंख्य लोगों की भावनाओं को ठेस पहुंचे। ....."

बदरीनाथ मन्दिर के मुख्य धर्माधिकारी जगदम्बा प्रसाद : "सर्वमान्य बदरीधाम में जैन समुदाय के मन में किसी दूसरे मन्दिर निर्माण की सोच पैदा होना चिन्तनीय विषय है .....। हमारी दृष्टि में कोई दूसरा देवता नहीं है।"

बदरीनाथ मन्दिर समिति के मुख्य कार्याधिकारी जगत सिंह बिश्ट : "जैन मन्दिर निर्माण के विरोध में न्यायालय में वाद दायर कर दिया गया है।"

पंडा समाज के अध्यक्ष मुकेश अलखालिया : "इस पवित्र भूमि पर किसी दूसरे धर्म का मन्दिर स्वीकार नहीं किया जायेगा। .... इस पवित्र एवं शान्त भूमि को विवादित करने वालों को बख्शा नहीं जाएगा। ....."

ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य स्वामी माधवाश्रम जी : "सवाल अहं का नहीं बल्कि मर्यादा का

है और इस धाम की मर्यादा व गरिमा को तो बनाए रखना चाहिए ही। .... कहीं ऐसा न हो कि जिस प्रकार हस्तिनापुर का नाम जम्बूद्वीप रख दिया है वैसे ही बदरीनाथ का नाम भी आदिनाथ रख दिया जाय।"

नव उत्तरांचल राज्य के मुख्यमंत्री श्री नित्यानंद स्वामी १५ नवम्बर को बदरीनाथ व जोशीमठ में आयोजित सभाओं में : "बदरीनाथ धाम में भगवान बदरीनाथ के मन्दिर के अलावा किसी भी धर्म के मन्दिर का निर्माण नहीं होगा। .... उत्तरांचल सरकार सभी धर्मों का आदर करती है लेकिन किसी भी धर्म के लोगों को दूसरे धर्म के लोगों की भावनाओं को आहत करने की कतई इजाज़त नहीं दी जा सकती। ...."

उपरोक्त समाचारों-वक्तव्यों को पढ़कर तो ऐसा लगता है कि बदरीनाथ धाम के पंडों, पुजारियों, महंतों व धर्माचार्यों की ही नहीं वरन् उत्तरांचल राज्य के माननीय मुख्यमंत्री जी की दृष्टि में बदरीनाथ धाम एक ऐसा स्थान है जो या तो धर्म-निरपेक्ष स्वतंत्र भारत का अंग ही नहीं या वहां पर (किसी विशेष व्यवस्था के अन्तर्गत जिसकी कोई सार्वजनिक जानकारी नहीं दी गई है?) देश के धर्म समभाव विषयक सामान्य नियम-कानून लागू ही नहीं होते। हमारी समझ में तो यह भी नहीं आता कि क्या करोड़ों जनों की आस्था के केन्द्र भगवान बदरीनाथ के पवित्र प्राचीन विग्रह की गरिमा इतनी सतही है कि वह बदरीनाथ धाम में किसी अन्य धर्म के पूज्यदेव की प्रतिमा की स्थापना मात्र से ही छिन्न-भिन्न हो जायेगी। कितना विचित्र और दुखद लगता है जब ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य जैसे जगदगुरु की उपाधि से विभूषित महामान्य धर्माचार्य भगवान आदिनाथ की मूर्ति स्थापना के विरोध के समर्थन में कुतर्क का सहारा लेते नजर आते हैं। हम उनकी तथा उनके श्रद्धालु भक्तों की जानकारी के लिए बताना चाहते हैं कि प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ के मुनि-दीक्षा उपरान्त प्रथम आहारदान के पुण्य से पवित्र हुई स्थली के कारण हस्तिनापुर इतिहासातीत काल से ही जैन धर्म का एक प्रमुख तथा प्राचीनतम तीर्थ क्षेत्र है जो **आज भी हस्तिनापुर जैन तीर्थ क्षेत्र** के नाम से ही विख्यात है और जिसका आगे भी जैन धर्मावलम्बियों द्वारा नाम बदलने का कोई प्रश्न या संभावना नहीं है। जम्बूद्वीप न तो जैन धर्म का कोई देवी-देवता है और न कोई इस धर्म का रूढ़ शब्द ही। कुछ वर्ष पूर्व पू. आर्यिका ज्ञानमती जी ने हस्तिनापुर क्षेत्र में स्थित अपने आश्रम में जम्बूद्वीप की जैन भौगोलिक अवधारणा के अनुसार एक प्रतीक रचना का दर्शनीय निर्माण कराया था जो इतनी मनोज्ञ एवं लोकप्रिय हुई कि उनका आश्रम ही जम्बूद्वीप स्थल के नाम से जाना जाने लगा। जिस प्रकार 'शांतिकुंज' आश्रम के हरिद्वार में होने से हरिद्वार का नाम 'शांतिकुंज' नहीं हो गया या 'स्वर्गाश्रम' के ऋषिकेश में स्थित होने से ऋषिकेश का नाम 'स्वर्गाश्रम' नहीं हो गया, उसी प्रकार 'जम्बूद्वीप' रचना के हस्तिनापुर में होने से हस्तिनापुर जैन तीर्थ क्षेत्र का नाम 'जम्बूद्वीप' नहीं हो गया है। इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि हस्तिनापुर की गिनती सनातन धर्म के तीर्थ स्थलों में नहीं की जाती, उसका महत्त्व उनके लिए केवल एक प्राचीन ऐतिहासिक नगरी का स्थल होना भर है।

आश्चर्य और दुख तो इस बात का है कि श्री बदरीनाथ धाम में आदिनाथ मन्दिर निर्माण के विरोध में चलाए गए उग्र अनैतिक अभियान की सनातन धर्मावलम्बियों की धार्मिक सहिष्णुता एवं

सौहार्द का ढोल पीटने वाले किसी भी समाजनेता या धर्माचार्य ने भर्त्सना की हो, यह भी कहीं पढ़ने में नहीं आया। सर्वाधिक क्षोभ और दुख तो उत्तरांचल राज्य के माननीय मुख्यमंत्री जी के वक्तव्य से हुआ जिसमें उन्होंने बदरीनाथ धाम में भगवान बदरीनाथ के मन्दिर के अलावा किसी और धर्म के मन्दिर के निर्माण की संभावना को ही नकारते हुए तथा जैन समाज को परोक्षरूप से चेतावनी देते हुए अधिकारिक रूप में यह घोषणा की कि किसी भी धर्म के लोगों को दूसरे धर्म के लोगों की भावनाओं को आहत करने की कतई इजाजत नहीं दी जा सकती। यद्यपि श्वेताम्बर जैन समाज की इस स्पष्ट सार्वजनिक घोषणा के बाद कि बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर-मूर्ति की स्थापना नहीं की जाएगी, यह केवल सैद्धान्तिक (theoretical) वाद-विवाद का ही प्रश्न रह गया है, देश के किसी भी भाग में अपनी विधिवत खरीदी गई जमीन पर अपनी ही उपासना के लिए अपने धर्मानुसार मन्दिर-मूर्ति की स्थापना करने का अल्प संख्यक जैन धर्मावलम्बियों का धार्मिक अधिकार है जिसे कदाचित् कोई भी मुख्यमंत्री देश के संविधान को बदलवाए बिना नहीं छीन सकता। जैन धर्मावलम्बियों ने तो बदरीनाथ धाम में अभी तक कोई ऐसा कार्य नहीं किया है जिससे वहां के इतर धार्मिक लोगों की भावनाएं आहत होतीं, पर मुख्यमंत्री जी के उपर्युल्लिखित वक्तव्य से अल्पसंख्यक जैन धर्मावलम्बियों की धार्मिक भावनाएं अवश्य ही आहत हुई हैं।

जैन समाज को अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षार्थ 'अल्पसंख्यक धार्मिक समुदाय' की मान्यता प्राप्त करने का विरोध करने वालों को बदरीनाथ प्रकरण के प्रकाश में अपने दृष्टिकोण पर गंभीरता पूर्वक पुनः विचार करना होगा।

- अजित प्रसाद जैन

प्रधान सम्पादक

पारस सदन, आर्य नगर, लखनऊ-२२६ ००४

शिवमहिम्नःस्तोत्र विमर्श

- **डॉ. अमर पाल सिंह**

भूतपूर्व निदेशक, सूचना एवं प्रसारण, भारत सरकार;
वयोवृद्ध गंभीर अध्येता एवं तलस्पर्शी शोधक विद्वान;
ए-१/८, सेक्टर बी, बसन्त विहार, अलीगंज, लखनऊ-२२६ ०२४

संस्कृत के विशाल स्तव साहित्य में **शिवमहिम्नःस्तोत्र** का विशिष्ट स्थान है। प्राचीनकाल से यह स्तोत्र देश के विभिन्न धार्मिक समुदायों में समान रूप से समादृत रहा है। शिव के अभिषेक में प्रायः इसका पाठ होता है। स्तोत्र शिखरिणी छन्द में निबद्ध है। गेय होने के कारण लोग इसे कंठस्थ कर लेते हैं। इसकी भाषा ललित किन्तु प्राचीनता लिये हुए है। साहित्यिक गुणों से विभूषित, गंभीर दार्शनिक भाव एवं भक्तिरस से पूर्ण, शिवचरित्र के विविध प्रसंगों से युक्त यह स्तोत्र शिव भक्तों को अत्यंत प्रिय रहा है। संस्कृत में इसकी पचीस से अधिक टीकाएं मिलती हैं। कुछ लोगों ने तो यहाँ तक कहा है कि इससे बढ़कर कोई दूसरा स्तोत्र नहीं है। इतना होने पर भी इसके मूलरूप, रचनाकाल और कर्ता के संबंध में अनिश्चितता रही है। अतएव इन पर किंचित विचार करना उपयुक्त होगा।

शिवमहिम्नःस्तोत्र के मूल रूप पर विचार करने के लिए हमें पीछे लौटना होगा। मध्य प्रदेश के नीमाड़ जनपद में नर्मदा तट पर स्थित ओंकारेश्वर शिवाराधना का प्रमुख केन्द्र है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों में एक की स्थिति वहाँ बतायी गयी है। ओंकारेश्वर में अमलेश्वर (अमरेश्वर) के प्राचीन मन्दिर में कुछ स्तोत्र शिलाओं पर उत्कीर्ण कर लगाये गये हैं। इनमें **शिवमहिम्नःस्तोत्र** भी है। इसका समय शिलालेख में ११२० वि. सं. (=१०६३ ई.) अंकित है। इसे उत्कीर्ण कराकर भट्टारक गंधध्वज ने वहाँ स्थापित कराया था। अब तक प्राप्त **शिवमहिम्नःस्तोत्र** का यह सबसे प्राचीन आलेख है। इसमें ३१ श्लोक हैं। इकतीसवें श्लोक के पश्चात पुष्पिका है – "इति महिम्नः स्तवं समाप्तमिति"। इससे ज्ञात होता है कि ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य तक इस स्तोत्र में इकतीस श्लोक थे।

तेरहवीं शताब्दी के मध्य में भी यही स्थिति थी। देवगिरि के यादव राजा कृष्णदेव (१२४७-६० ई.) के राज्यकाल में जैनाचार्य मुनिराज जयचन्द्र के शिष्य सोमसुन्दर ने **श्रीयुगादिदेवमहिम्नःस्तव** की रचना की थी। इसका नाम **युगादिदेव स्तुति** भी मिलता है। इसके प्रत्येक श्लोक के अंतिम चरण की पूर्ति **शिवमहिम्नःस्तोत्र** के प्रत्येक श्लोक के चौथे चरण से की गयी है। इस जैन स्तव में भी **शिवमहिम्नःस्तोत्र** के ३१ श्लोकों के ही अंतिम चरण लिये गये हैं। अमरेश्वर के लेख में जिस प्रकार स्तोत्र 'वरद चरणयोस्ते वाक्य पुष्पोपहारम्' से समाप्त होता है, उसी प्रकार

श्रीयुगादिदेवमहिम्नःस्तव की समाप्ति भी इसी चरण से हुई है। इसके पश्चात पुष्पिका दी गयी है।

शिवमहिम्नःस्तोत्र की शिव-विष्णु-महिमा प्रतिपादित करने वाली एक टीका मधुसूदन सरस्वती की मिलती है। वे कदाचित् बंगाल के निवासी थे और वाराणसी में रहते थे। उनका समय १५७५-१६५० ई. माना गया है। मधुसूदन सरस्वती अपने समय के प्रकांड पंडित थे। उन्होंने अनेक ग्रन्थों की टीकाएँ लिखी थीं। **शिवमहिम्नःस्तोत्र** के इकतीस श्लोकों की ही टीका उन्होंने भी लिखी है। इससे ज्ञात होता है कि इस स्तोत्र का मूलरूप ३१ श्लोकों का ही मान्य रहा है। किन्तु आजकल की प्रतियों में न्यूनाधिक संख्या में क्रमभेद के साथ ४३ श्लोक तक मिलते हैं। यह अनुमान असंगत न होगा कि ३१वें श्लोक के पश्चात जो बारह श्लोक और मिलते हैं वे पीछे जोड़े गये हैं, प्रक्षिप्त हैं। बाहरी प्रभाव अथवा भक्तों की भक्ति प्रदर्शन की उत्कट अभिलाषा श्लोक-वृद्धि के कारण हो सकते हैं।

३१ वें श्लोक के पश्चात 'असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिंधुपात्रे' से आरंभ होने वाले ३२ वें श्लोक का भावार्थ है – समुद्र को यदि मसिपात्र बना दिया जाय, कज्जलगिरि के समान भारी मात्रा में मसि उसमें डाल दी जाय, कल्पवृक्ष की शाखा को लेखनी बनाया जाय, पृथ्वी को कागज बनाया जाय और शारदा सर्वकाल लिखती रहे, हे ईश, तब भी वह आपके गुणों का पार नहीं पा सकती। यह श्लोक सुबन्धु (छठी शताब्दी) की कृति **वासवदत्ता** (पृ. ३०६-३०७) के एक प्रसंग की छाया पर निर्मित भी हो सकता है और इस श्लोक की रचना का कारण बाहरी प्रभाव भी हो सकता है। इस्लाम के धर्मग्रन्थ **कुरान** में एक आयत है जिसका भावार्थ है कि 'सारे समुद्र के जल को स्याही बना दिया जायँ और धरती के कागज पर सारे वृक्षों को लेखनी बनाकर ईश्वर के गुणों को लिखा जाय, तब भी ईश्वर के गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता'। इतिहास के मध्यकाल में इस्लामी शासन के समय देश में बाहरी विचारों का प्रसार हुआ था और उनका प्रभाव पड़ना असंभव नहीं।

शिवमहिम्नःस्तोत्र का पांचवा श्लोक 'किमीहः किं कायः' राजशेखर ने अपने ग्रन्थ **काव्यमीमांसा** में न्याय-वैशेषिक दर्शन के उदाहरण स्वरूप उद्धृत किया है। कविराज राजशेखर कन्नौज के प्रतिहार राजा महेन्द्रपाल के गुरु थे और उनके पुत्र तथा उत्तराधिकारी महीपाल के समय में भी थे। सीयदोनी तथा ऊन से मिले लेखों के अनुसार महेन्द्रपाल ८९३-९०७ ई. में तथा महीपाल ९१७ ई. में राज्य कर रहे थे। इस प्रकार इनका राज्यकाल नवीं शताब्दी का अन्त और दसवीं शताब्दी का आरंभ ज्ञात होता है। राजशेखर का समय ८८०-९२० ई. माना गया है। राजशेखर के इस उद्धरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि **शिवमहिम्नःस्तोत्र** का रचनाकाल ईसवीं सन् ८०० के आसपास अथवा इसके पूर्व हो सकता है।

शिवमहिम्नःस्तोत्र के मूल ३१ श्लोकों में कर्ता का नाम नहीं आया है। इसके पश्चात के बारह श्लोकों में जो प्रक्षिप्त जान पड़ते हैं पुष्पदन्त को इसका कर्ता बताया गया है और इन बारह श्लोकों में उनके नाम का उल्लेख चार बार हुआ है। उन्हें 'गंधर्वराज पुष्पदन्त' कहा गया है। इस संबंध में किंवदन्ती है कि गंधर्वराज पुष्पदन्त किसी राजा के उद्यान से पुष्प तोड़ लिया करते थे। उन्हें

पकड़ने में असफल होने पर उन्हें दिव्य शक्ति संपन्न जान राजा ने उद्यान में शिव निर्माल्य विकीर्ण करा दिया जिसे लांघने से शिवरोष के कारण वे शक्ति रहित हो गये। विचार करने पर उन्हें भूल का ज्ञान हुआ। तब उन्होंने **शिवमहिम्नःस्तोत्र** की रचना कर आराध्य शिव को प्रसन्न किया जिससे उन्हें पुनः शक्ति प्राप्त हो गयी।

कथासरित्सागर (रचना काल ५ वीं शताब्दी ई. से पूर्व) में शिव के दास पुष्पदन्त से जुड़ी एक और कथा मिलती है कि शिव-पार्वती की गुप्त वार्ता सुन लेने के कारण उन्हें शाप दिया गया था कि 'उनका जन्म मर्त्यलोक में कौशाम्बी में होगा और उनका नाम वररुचि (ई. पू. चौथी शताब्दी) होगा।' कश्मीरी पण्डित जयन्त भट्ट (६ वीं शताब्दी ई.) ने अपने ग्रन्थ **न्याय मंजरी** में पुष्पदन्त के शापित होने की चर्चा की है। स्तोत्र के रचना काल के सम्बन्ध में ऊपर जो अनुमान किया गया है उसके अनुसार उसके कर्ता की स्थिति आठवीं शताब्दी ई. अथवा इसके पूर्व संभव है। **शिवमहिम्नःस्तोत्र** के कर्ता का नाम पुष्पदन्त हो सकता है, किन्तु उसके सम्बन्ध में और प्रमाण व गवेषणा की अपेक्षा है।

शिवमहिम्नःस्तोत्र की मान्यता, उसकी ख्याति और लोकप्रियता पिछले हजार वर्षो से निरन्तर बनी रही है। इस स्तोत्र का मूल पाठ, मूल ३१ श्लोकों के भावार्थ सहित, यहाँ दिया जा रहा है। श्लोक ३२ का भावार्थ ऊपर दिया जा चुका है। शेष में से श्लोक ३३, ३७, ३८ व ४३ में पुष्पदन्त नाम का उल्लेख है और श्लोक ३४, ३६, ३८, ४२ व ४३ में स्तोत्र-पाठ की महिमा का बखान है। श्लोक ३५, ३६, ३६, ४०, ४१ व ४२ भिन्न छन्द में हैं। बाद के १२ श्लोकों की भाषा भी भिन्न है।

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मदीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमति परिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपावादः परिकरः।।१

(हे हर, आप की महिमा की परमावधि मैं नहीं जानता। इस कारण मेरी स्तुति यदि अनुचित है तो पूर्व में ब्रह्मा आदि की वाणी भी तो आपकी महिमा का वर्णन करने में थक चुकी है। ऐसी स्थिति में अपनी बुद्धि सामर्थ्य के अनुसार मैं आपकी स्तुति करता हूँ, मेरा यह उद्योग आपकी कृपा से निर्विघ्न सफल हो।)

अतीतः पंथानं तव च महिमा वाङ्मनसयो
रतद्व्यावृत्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः।।२

(आप की महिमा मन और वाणी की सामर्थ्य के परे है। श्रुति [वेद] भी चकित हो आप की महिमा का नेति-नेति कहकर अभेदवाक्यों से प्रतिपादन करती है। ऐसी आपकी स्तुति कौन कर

सकता है, कौन आपके गुण गिना सकता है और कौन इन्द्रिय कैसे आपको अपना विषय कह सकती है। फिर भी ऐसा कौन है जिसकी मन और वाणी आपके चरणों में समर्पित न हो जाती हो।)

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत-
स्तव ब्रह्मन्किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणीं गुणकथन पुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता।।३

(हे पुरमथन, मधुर रस से परिपूर्ण परम अमृत वेदवाणी के रचयिता सुरगुरु ब्रह्मा द्वारा की गयी आप की स्तुति क्या विस्मयकारी हुई? अर्थात् नहीं हुई। फिर मेरी बुद्धि में तो यह बात आयी है कि मैं भी आपके गुणगान द्वारा अपनी वाणी को पवित्र कर लूँ।)

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्
त्रयीवस्तुं व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जड़धियः।।४

(हे वरद, संसार में कुछ जड़बुद्धि ऐसे भी हैं जो वेदत्रयसाररूप, त्रिगुणभिन्न त्रिमूर्तियों में स्थित, जगत का आविर्भाव, उसकी रक्षा और तिरोभाव करने वाले आपके ऐश्वर्य को नष्ट करने के लिएँ बकवाद करते हैं जो ऊपर से रमणीय किन्तु वास्तव में कुत्सित होती है।)

किमीहः किं कायः स खलु किमुपायास्त्रिभुवनं
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः।।५

(सृष्टिकर्त्ता का सृष्टि-रचना में स्वार्थ क्या है, उसका शरीर कैसा है, त्रिभुवन-रचना के उपाय, उपादान और आधार क्या हैं, आदि कुतर्क कुछ हतबुद्धि जन आपके अतर्क्य ऐश्वर्य के प्रति लोगों को मोह में डालने के लिए करते हैं।)

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-
मधिष्ठातारं किं भवविधिननादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद्भुवनजनने कः परिकरो,
यतो मन्दास्तां प्रत्यमरवर संशेरत इमे।।६

(हे अमरवर, यह सावयव [उत्पत्ति-तिरोभाव सहित] संसार उत्पत्ति-रहित कैसे हो सकता है? अधिष्ठाता के अभाव में सृष्टि रचना-क्रम कैसे संभव है? अनीशकर्त्ता है तो भुवनोत्पत्ति सामग्री का अधिग्रहण कैसे करता है? अतएव जो मंद बुद्धि हैं वे ही आपके अस्तित्व के संबंध में संदेह करते हैं।)

त्रयी सांख्यं योगः पशुपति मतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यामिति च।
रुचीनां वैचित्र्याहजुकुटिलनानापथत्रुषां।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।७

(वेदत्रयी, सांख्य, योग, पाशुपत, वैष्णव आदि मतों को अपने रुचि-वैचित्र्य के कारण यह अच्छा है, वह अच्छा है, ऐसा मानते हुए सभी सीधे टेढे मार्गो के अनुसरण करने वालों के गम्य एक आप ही हैं। वे आप ही को प्राप्त होते हैं, पहुंचते हैं जैसे जल नदियों से होकर समुद्र में ही जा पहुँचता है।)

महोक्षः खट्वांग परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तंत्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां
नहि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति।।८

(हे वरद, आपकी गृहस्थी की सामग्री केवल महोक्ष [बूढ़ा बैल], खट्वांग, परशु, मृगचर्म, भस्म, सर्प और कपाल हैं जबकि प्राणी आपके कटाक्ष के संकेतमात्र से ऐश्वर्य का भोग करते हैं। निश्चय ही, विषय-मृगतृष्णा स्वात्मानन्दी को भ्रमित नहीं करती।)

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्येजगति गदति व्यस्ताविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिहेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता।।९

(हे पुरमथन, कोई कहता है कि सब कुछ ध्रुव है, कोई कहता है सब कुछ अध्रुव है और कोई कहता है कि जगत ध्रुवाध्रुव, नित्यानित्य हैं। इन बातों से विस्मित मैं आपकी स्तुति करने में लज्जित नहीं होता हूँ। मेरी वाचालता निश्चित ही मेरे स्वभाव की धृष्टता है। मुखरता धृष्टता होती ही है।)

तवैश्वर्यं यत्नद्यदुपरि विरंचिर्हरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कंधवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश य-
त्स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति।।१०

(हे कैलासवासिन, आप के तेजोमय विराट रूप को जानने के लिए ब्रह्मा ने ऊपर और विष्णु ने नीचे की ओर पूरा प्रयत्न किया किन्तु असफल रहे, और तब उन्होंने आप की स्तुति की। आपने कृपा कर उन दोनों पर अपना ऐश्वर्य स्वयं प्रकट कर दिया। आपकी सेवा नहीं फलती, ऐसा

कौन कह सकता है, अर्थात् अवश्य फलती है।)

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकंडूपरवशान्।
शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरूहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्।।११

(हे त्रिपुरहर, दशमुख रावण ने बिना प्रयास ही तीनों लोकों को शत्रुओं से रहित कर दिया, फिर भी उसकी भुजाएं युद्धार्थ खुजलाती रहीं। यह निश्चय ही उसकी दृढ़ एवं अनन्य भक्ति का फल है जिससे उसने आपके चरण कमलों में अपने शिर निरपेक्षता से चढ़ा दिये।)

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात्कैलासेऽपि त्वधिवसतौ विक्रमयतः।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितांगुष्टशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद्ध्रुवमुपचितोमुह्यति खलः।।१२

(आपकी उपासना से समृद्ध बलवीर्य वाली भुजाओं से आपके निवास कैलास को उखाड़ने में प्रवृत्त होने पर अंगुष्ठ के अणुभाग से अनायास दबाने पर उस रावण को पाताल में भी ठिकाना न मिला। ऐश्वर्य प्राप्त होने पर खल उद्धत हो जाता है।)

यद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयात्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरित्वच्चरयो-
र्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः।।१३

(हे वरद, त्रिभुवन को दासवत स्ववश करने वाले बाणासुर ने इन्द्र की परमोच्च समृद्धि को नीचा दिखा दिया। आपके चरणों को प्रणाम करने वाले उसके लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। आपको शिर नवाने वाले की क्या-क्या उन्नति नहीं होती, अर्थात् उसे मुक्ति सहित सभी ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं।)

अकांड ब्रह्मांडक्षयचकितदेवासुरकृपा-
विधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन विसं संहृतवतः।
स कल्मषः कंठे तव न कुरूते श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः।।१४

(हे त्रिनयन, असमय ही ब्रह्मांड के नाश से भयभीत देवासुरों पर कृपा कर विषपान कर लेने से आपके कंठ में उत्पन्न कालिमा क्या आपकी शोभा नहीं बढ़ाती, अर्थात् बढ़ाती है। जगतभय नाश करने वाले महापुरुष का विकार भी श्लाघ्य है।)

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तंते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिषाः।
स पश्यन्तीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत्
स्मरःस्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः।।१५

(हे ईश, देव, असुर और मनुष्य आदि पर संधान किये गये जिसके बाण कभी असिद्धार्थ नहीं लौटते उस कामदेव ने जब आपको अन्य साधारण देवता के समान देखा तब उसे आपने स्मृतिशेष कर दिया। आत्मवशी जनों का अनादर लाभदायी नहीं होता।)

महीपादाधातद्व्रजति सहसा संशयपदं
पद विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौदौस्थ्यं यात्यानिभृतजटाताडिततदा।
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता।।१६

(आप के पदाघात से पृथिवी सहसा अक्षभ्रष्ट होने की आशंका से संशय ग्रस्त हो जाती है, आपकी परिघ सदृश भुजाओं के परिभ्रमण से अंतरिक्ष के ग्रह, नक्षत्र, तारागण प्रभाहीन हो जाते हैं, आपकी खुली जटाएँ स्वर्गलोक तक फटकार मारती हुई उसे उखाड़ती सी प्रतीत होती हैं। जगत की रक्षा के लिए आप इस प्रकार तांडव नृत्य करते हैं। बड़ो के चरित अनुकूल होने पर भी प्रतिकूल दिखायी देते हैं, विभुता वाम प्रतीत होती है।)

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि-
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः।।१७

(आप के शिर पर जल विन्दु के समान दिखायी पड़ने वाला किन्तु वास्तव में संम्पूर्ण आकाश को व्याप्त करने वाला आकाशगंगा का जल प्रवाह, जो तारा समूह रूपी फेन की छटा से युक्त है, जगत को सागर की करधनी पहने द्वीपाकार कर देता है। क्या इससे आप के दिव्य शरीर की महिमा का ज्ञान नहीं होता, अर्थात् होता है।)

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथांगे चन्द्रार्कौ रथचरणपणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडंबरविधि-
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतंत्राः प्रभुधियः।।१८

(त्रिपुरदैत्य का वध करने की इच्छा से आपने पृथिवी को रथ, ब्रह्मा को सारथी, मेरू को धनुष, चन्द्र सूर्य को रथ के पहिये बनाकर आडंबर बनाया। अपनी बनायी वस्तुओं के साथ क्रीड़ा

करने में प्रभुजनों की बुद्धि परतंत्र नहीं होती।)

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-

र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम्।

गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा

त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहरजागर्ति जगताम्।।१९

(हे त्रिपुरहर, विष्णु ने आपके चरण कमलों में एक सहस्र कमल समर्पित कर जब उनमें एक कम पाया तब अपना नेत्र अर्पित कर दिया। उनकी भक्ति की यह चरम सीमा ही चक्र रूप धारण कर त्रिलोक की रक्षा के लिए जागती रहती है।)

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां

क्व कर्मप्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते।

अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं

श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा कृतपरिकरः कर्मसुजनः।।२०

(क्रतुओं के सो जाने पर अर्थात् अनुष्ठान के उपरान्त उसका फल देने के लिए केवल आप जागते रहते हैं। चेतनपुरुष आपकी आराधना के बिना समाप्त कर्म कैसे फल दे सकता है? इसका कारण क्रतुओं का फल देने के लिए आप को प्रतिभू [दिने का दायित्व लेने वाला] बनाकर श्रुतियों में विश्वास कर लोग कर्म में प्रवृत्त होते हैं।)

क्रिया दक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-

मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।

क्रतुभ्रेषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो

ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचारायहि मखाः।।२१

(हे शरणद, जीवों के स्वामी दक्ष, जो यज्ञ संपादन के ज्ञाता थे, स्वयं यजमान थे, ऋषि ऋत्विज थे, और देवता जहाँ सभासद थे, ऐसे यज्ञ का भी आप द्वारा, जिसे फल देने का व्यसन है, विध्वंस किया गया। श्रद्धारहित यज्ञादि कर्त्ता के नाश का कारण वनते हैं।)

प्रजानाथं नाथ प्रसभमधिकं स्वां दुहितरं

गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।

धनुष्पाणेर्यातं दिवमपिसपत्राकृतममुं

त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः।।२२

(हे नाथ, मृगया के उत्कट उत्साह से धनुष हाथ में लिए आप के बाण का भय ब्रह्मा को आज भी नहीं छोड़ता। ब्रह्मा अपनी मृगीरूपिणी कन्या के साथ कामोपभोग करने के लिए मृगरूप धारण कर स्वर्ग तक गये। इस कृत्य का निवारण करने के लिए आपका बाण ब्रह्मा के शरीर में प्रवेश

करने के लिए उनके पीछे गया। {आकाश में मृगशिर [हरिण हरिणी]-नक्षत्र,। उसके पीछे आर्द्रा नक्षत्र [बाण] और उसके पीछे लुब्धक तारे [शिव] की ओर संकेत इसके प्रसंग में आज भी किया जाता है।}

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणव-

त्पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि

यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटना-

दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः।।२३

(हे पुरमथन, हे योगेश्वर, अपने सौंदर्य का आश्रय लेकर आक्रामक कामदेव को तृणवत् भस्म करते देख कर भी देवी पार्वती आपका देहार्ध प्राप्त करने से आप को नारीजनासक्त समझती हैं तो यह उनके योग्य है। हे वरद, युवतीजन तो विमुग्ध मति होती ही हैं।)

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-

श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोरी परिकरः।

अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं

तथाऽपि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि।।२४

(हे कामदेव का नाश करने वाले, वरदान देने वाले शिव, आप शमशानों में क्रीड़ा करते हैं, पिशाच आपके सहचर हैं, शरीर पर आप भस्म लगाते हैं, कपाल की माला पहनते हैं। आप का संपूर्ण चरित्र अमंगल प्रतीत होता है। परन्तु स्मरण करने वालों को तो आप परम मंगल प्रदान करने वाले हैं, उन्हें वरदान देते हैं।)

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः

प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगतिदृशः।

यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये

दधत्यन्तस्तत्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान।।२५

(अंतर्हृदय में चित्तवृत्ति को विधि पूर्वक निरुद्ध कर, प्राणों को जीतकर रोमांचित और हर्षाश्रु से पुलकित योगीजन जैसे अमृतसरोवर में स्नान कर रहे हों, ऐसे जिस अनिर्वचनीय आनन्दतत्व का अनुभव कर परम आनन्द प्राप्त करते हैं वह तत्व आप ही हैं।)

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-

स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमधरणिरात्मा त्वमिति च।

परिच्छिन्नामेवं त्वयिपरिणता विभ्रतुं गिरं

न विद्मस्तत्तत्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि।।२६

(आप सूर्य हैं, आप चन्द्रमा हैं। आप पवन हैं, आप अग्नि हैं, आप जल हैं, आप आकाश हैं, आप पृथिवी हैं। आप आत्मा हैं। इस प्रकार आप के विषय में आप्त पुरुष वर्णन करते हैं। किन्तु

हम तो इस जगत में कोई ऐसा तत्व नहीं जानते जो आप न हों।)

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा-
नकाराधैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणाभ्योमितिपदम्।।२७

(हे शरण देने वाले शिव, तीनों वेदों को, तीनों वृत्तियों को, त्रिभुवन को, त्रिदेवों को अपनी सूक्ष्म ध्वनियों से आपके तुरीय धाम को घेरता हुआ समस्त और व्यस्त ओम् पद आप को ही प्रकट करता है, आप का ही वर्णन करता है।)

भवः शर्वो रूद्रः पशुपतिरयोग्रः सहमहां-
स्तथा भीमेशानाविति यदमिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रविहित नमस्योऽस्मि भवते।।२८

(हे देव, भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम और ईशान ये जो आठ नाम आपके हैं, इनमें प्रत्येक में श्रुति विचरण कर रही है, वेद प्रत्येक का वर्णन करते हैं। ऐसे परमधाम सब के शरण देने वाले आपको मैं मन-वाणी-कत्या सहित नमस्कार करता हूँ।)

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमितिसर्वाय च नमः।।२९

(हे विपिनविहारिन्, निकटतम और दूरतम आपको बारंबार नमस्कार, हे स्मरहर, सूक्ष्मतम और महत्तम आपको बारंबार नमस्कार, हे त्रिनयन, वृद्धतम और युवतम आपको बारंबार नमस्कार। सर्वरूप आपको मैं नमस्कार करता हूँ, सर्वरूप जिसमें है ऐसे आपको मैं नमस्कार करता हूँ।)

बहूलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृदाय नमो नमः
प्रमहसिपदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः।।३०

(विश्वोत्पत्ति में अत्यधिक रजोगुण वाले भव [ब्रह्मा] आपको बारंबार नमस्कार है। उसके संहार प्रबल तमोगुण वाले हर [रुद्र] आपको बारंबार नमस्कार है। जनसुख के लिए सतोगुणी मृद [विष्णु] आपको बारंबार नमस्कार है। इन तीनों गुणों से परे निस्त्रैगुण्य पद वाले शिव आप को बारंबार नमस्कार है।)

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लंघिनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा-
द्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम्।।३१

(कहाँ तो यह अल्पविषया विविध क्लेशादि के वशीभूत मेरी बुद्धि और कहाँ आपकी गुणसीमोल्लंघिनी शाश्वत विभूति। हे वरद, इस भांति सशंकित, चकित मुझको आपकी भक्ति ने ही आप के चरण कमलों में ये वाक्य पुष्पोपहार समर्पित करने के लिए विवश किया है।)

आजकल की प्रतियों में ये श्लोक और मिलते हैं –

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवर शाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।३२
असुरसुर मुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले-
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य।
सकलगुणवरिष्ठः **पुष्पदन्ताभिधानो**
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार।।३३
अहरहरनवद्यं धूर्जुटेः स्तोत्रमेतत्
पठतिपरमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाम
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च।।३४
महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः।
अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्वं गुरोः परम्।।३५
दीक्षादानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।
महिम्नःस्तव पाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।३६
कुसुमदशननामा सर्वगंधर्वराजः
शिशुशशिधरमौलेर्देवदेवस्य दासः।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट ऐवास्यरोषात्

स्तवनमिदमाकार्षीत् दिव्यदिव्यै महिम्नः ।।३७

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्रांजलिर्नान्यचेताः।
ब्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदमोघं **पुष्पदन्तप्रणीतम्**।।३८

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गंधर्व भाषितम्।
अनौपम्यं मनोहारि शिवमीश्वर वर्णनम्।।३९

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः।४०।

तव तत्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर।
यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमोनमः।।४१

एक कालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते।।४२

श्रीपुष्पदन्तमुखपंकजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण।
कंठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः।।४३

।। इति श्री शिवमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम्।।

[टिप्पणी :

शिवमहिम्नः स्तोत्र को सम्पूर्ण रूप से और अर्थ सहित देखने से यह जिज्ञासा स्वाभाविक है कि यह जैन स्तोत्र साहित्य में कैसे स्थान पा गया। इसका एक समाधान यह प्रतीत होता है कि मध्यकाल में जब भी इस स्तोत्र के साथ पुष्पदन्त का नाम जुड़ा, **महापुराण** के रचयिता पुष्पदन्त के नाम के साथ उसे भी जोड़ लिया गया। इसका एक कारण यह हो सकता है कि इस स्तोत्र के शब्द लालित्य से प्रभावित होकर किसी ने इसकी प्रतिलिपि भी किसी शास्त्र भण्डार में रख ली और इस आस्था से कि शास्त्र भण्डार में जो कुछ भी होगा वह जैनत्व सम्बन्धी ही होगा, इसको भी जैन स्तोत्र मान लिया गया। स्तोत्र का अर्थ जानने की आस्थावान को आवश्यकता नहीं थी, उसके लिए इतना ही यथेष्ट था कि यह शास्त्र भण्डार में मिला है और चूंकि **शिव** का सामान्य अर्थ जैन परम्परा में **मोक्ष** भी माना जाता है, अतः मोक्ष की महिमा के स्तवन के रूप में इसे ग्रहण कर लिया गया।

प्राचीन जैन साहित्य के शोधन से यह तथ्य भी प्रकाश में आया कि **पउमचरियं** (१ ली शती ई.) में ऋषभदेव की स्तुति करते हुए उन्हें 'शिव', 'शंकर', 'महादेव', 'महेश्वर', 'विष्णु' और 'स्वयंसम्बुद्ध' भी कहा गया है। जिनसेन के **आदिपुराण** (९ वीं शती ई.) में, हेमचन्द्राचार्य के **अर्हन्नामसहस्रसमुच्चय** (१२वीं शती ई.) में, आशाधर के **जिनसहस्रनामस्तवन** (१३ वीं शती. ई.) में और भट्टारक सकलकीर्ति के **अर्हन्नाम जिनसहस्रनाम** (१५वीं शती. ई.) में ऋषभदेव के जो १००८ नाम दिये हैं उनमें 'शिव', 'शंकर' तथा शैवमत में प्रचलित शिव के कितने ही अन्य नाम भी सम्मिलित हैं, यद्यपि उनका भाष्य भिन्न प्रकार से किया गया है। इस सम्बन्ध में **श्रमण** (जन.-जून २०००) में डॉ. पुष्पलता जैन, (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, एस. एफ. एस. कालेज, नागपुर विश्वविद्यालय), का शोधपूर्ण लेख 'महाभारत और जिनसेन के आदिपुराण में शिवतत्त्व' दृष्टव्य है। **शोधादर्श** – १५ में डॉ. रज्जन कुमार का लेख 'वैदिक-ब्राह्मणीय परम्परा में भगवान ऋषभ' भी प्रासंगिक है।

जैसा कि हम इसी अंक में अन्यत्र इंगित कर रहे हैं, **पउमचरियं** का उपलब्ध रूप भी छठी शती ई. के लगभग का है जब भारत में पुराण साहित्य की रचना का प्रवर्तन हुआ और ऊपर उल्लिखित सभी साहित्यकार ९वीं से १५वीं शती. ई. के हैं। उक्त साहित्य में शिव को जैन परम्परा में आदिनाथ ऋषभदेव नाभेय के रूप में अपने भाष्य के साथ स्वीकार कर लिया गया। विशुद्ध बौद्धिक दृष्टि से 'शिव' और 'ऋषभ' दोनों ही भारतीय लोक विचारधारा में आध्यात्मिकता के प्रणेता आदिपुरुष या आदिदेव के रूप में प्रतीक स्वरूप प्रतिष्ठित हैं। समय के प्रवाह के साथ जैन अनुश्रुति में ऋषभनाथ इस काल खण्ड के प्रथम तीर्थंकर के रूप में मान्य हुए और शिव ब्राह्मणीय अनुश्रुति में आदि-देव के रूप में मान्य हुए, परन्तु समग्र भारतीय मानस में वह दोनों ही एक विशिष्ट अवधारणा (concept) के रूप में मान्य रहे और परस्पर समन्वय का माध्यम भी रहे।

– शशि कान्त]

पउमचरियं

- डॉ. राजमल बोरा

पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय;
'रत्नदीप', ५, मनीषा नगर, केसरसिंहपुरा, औरंगाबाद-४३१ ००५

विमलसूरिकृत **पउमचरियं** प्राचीन जैन रामायण है। यह ईसा की प्रथम शती की रचना है। इसका सर्वप्रथम सम्पादन डॉ. एच. याकोबी (Dr. H. JACOBI) ने किया। द्वितीय संस्करण में मुनि श्री पुण्यविजय जी ने इसे पुनः सम्पादित किया और प्रो. शान्तिलाल एम. वोरा ने हिन्दी अनुवाद भी किया। (सन् १९६२ ई. में प्राकृत ग्रन्थ परिषद, वाराणसी-५, से प्रकाशित)।

पउमचरियं की भाषा प्राकृत है। डॉ. याकोबी ने इसे प्राचीनतम जैन महाराष्ट्री प्राकृत कहा है। ग्रन्थकर्ता तीर्थंकर देव महावीर की भाषा अर्द्धमागधी बतलाते हैं। **पउमचरियं** की भाषा उसी परम्परा में जैन महाराष्ट्री है।

एयं वीरजिणेण रामचरियं सिट्ठं महत्थं पुरा,
पच्छाऽऽखण्डल भूइणा उ कहियं सीसाण धम्मासयं।
भूओ साहु परंपराएं, सयलं लोए ठियं पायडं,
एत्तोह विमलेण सुत्तसहियं गाहा निबद्धं कयं।।१०२।।
पञ्चेव य वाससया, दुसमाए तीसवरि संजुत्ता।
वीरे सिद्धि मुव गए, तओ निबद्धं इमं चरियं।।१०३।। - पर्व २०८

अर्थात्, वीर जिनेश्वर ने पहले महान् अर्थवाला यह रामचरित कहा था। बाद में इन्द्रभूति गौतम ने धर्म का आश्रयभूत यह चरित शिष्यों से कहा। पुनः साधु-परम्परा से लोक में यह सारा प्रकट हुआ, अब विमल ने सुन्दर वचनों के साथ इसे गाथाओं में निबद्ध किया है। इस दुःषम काल में महावीर के मोक्ष जाने के बाद पांच सौ तीस वर्ष व्यतीत होने पर यह चरित्र लिखा है।

उपरोक्तानुसार, **पउमचरियं** महावीर के मोक्ष की तिथि ई. पू. ५२७ मानने पर ईसवी सन् ४ की रचना है जो महाराष्ट्र में सातवाहन राजाओं के राज्यकाल के अन्तर्गत आता है।

डॉ. श्रीधर व्यंकटेश केतकर ने कुरू युद्ध से शकारंभ तक का महाराष्ट्र का प्राचीन इतिहास अपनी पुस्तक **प्राचीन महाराष्ट्र** (प्रकाशित १९६३) में निबद्ध किया है। इस ग्रन्थ के लेखन में उन्होनें प्रधान रूप से प्राकृत के प्राचीन ग्रंथों को आधार बनाया है। वररुचि का **प्राकृत प्रकाश** और गुणाढ्य की **बृहत्कथा** (उपलब्ध रूप सोमदेव का **कथासरित्सागर** और क्षेमेन्द्र कृत **बृहत्कथा मंजरी**) को उन्होंने प्राकृत ग्रंथों में भी प्रधान माना है और इसी क्रम में विमलसूरि के **पउमचरियं** को भी महत्वपूर्ण माना है और यह भी कि गुणाढ्य के बाद की परम्परा **पउमचरियं** में सुरक्षित है।

पउमचरियं 'उद्देसो' (उद्देश्य) एवं 'पव्वं' (पर्वों) में विभाजित है। इसके दो भाग हैं। प्रथम भाग में एक से पैंतीस तक उद्देसो हैं और शेष छत्तीस से उनसठ तक पव्वं हैं। दूसरे भाग में साठ से एक सौ अठारह तक सभी पव्वं है। कथा संवाद शैली में लिखी गई है। भाषा शिष्ट साहित्यिक प्राकृत है। जिनवरेन्द्र महावीर ने यह कथा विपुल नामक पर्वत पर देवों और राजाओं के बीच समवसरण में सुनाई। संवाद प्रथम गणधर इंद्रभूति और श्रेणिक राजा के बीच होता है। श्रेणिक राजा प्रश्न पूछते हैं और इंद्रभूति गौतम प्रश्नों का उत्तर देते हैं। आरम्भ में चौबीस जिनवरों (तीर्थंकरों) की वन्दना है। बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत के काल में राम (पद्म) वर्तमान थे, अतः मुनिसुव्रत जी राम के समकालीन तीर्थंकर कहे गए हैं।

सेणियचिंताविहाणं (श्रेणिक-चिन्ता-विधान) नाम का दूसरा उद्देश्य है। इस उद्देश्य में श्रेणिक की रामकथा से सम्बन्धित जिज्ञासा है। जिज्ञासा का स्वरूप कुछ इस प्रकार है –

"श्रेणिक सोचते हैं – धर्म के कारण ही चक्रवर्ती आदि पुरुषों का इस लोक में जन्म होता है, ऐसा भगवान् महावीर ने कहा है। परन्तु पद्मचरित के बारे में विचार करने पर मेरा मन अत्यन्त संदेहशील होता है कि अति बलशाली राक्षसों को वानरों ने कैसे मारा? बल से गर्वित वे वीर राक्षस जिनवर के धर्म की वजह से बड़े-बड़े महान् कुलों में उत्पन्न हुए थे और सैकड़ों विद्याओं में पारंगत हुए थे। लौकिक शास्त्र में ऐसा सुना जाता है कि रावण आदि सभी राक्षस मांस, रक्त एवं चरबी आदि का भक्षण और पान करते थे। ऐसा भी सुना जाता है कि कुम्भकर्ण नाम का रावण का महाबलशाली भाई निर्भय होकर निरन्तर छः मास तक शैया में सोता रहता था। सोए हुए उसके अंग यदि बड़े भारी पर्वत के समान हाथियों से कुचले जायें, घड़ों तेल से उसके कान भरे जायें, अथवा बड़े-बड़े नगाड़ों और दूसरे वाद्यों से वज्र का भी भेद करे ऐसी ध्वनि उसके सामने की जाय तो भी समय पूर्ण न होने पर वह महात्मा शैया पर से नहीं उठता था। जगने पर उसका शरीर भूख से इतना व्याकुल हो उठता था कि उसके सामने हाथी, भैंस आदि जो कुछ आता उसे वह निगल जाता था। देव, मनुष्य, हाथी आदि बहुतों को अपने उदर में समाने के बाद वह निर्भय होकर पुनः छः मास के लिए शैया पर आरूढ़ होकर सो जाता था। ऐसा भी सुना जाता है कि इन्द्र को लड़ाई में हराकर और उसे श्रृंखला से बांधकर रावण उसे लंका नगरी में लाया था। जो सागर पर्यन्त फैले हुए जम्बूद्वीप को भी उठाने में समर्थ हो उस इन्द्र को देव एवं दानवों से युक्त इस त्रिलोक में कौन जीतने में समर्थ है? जिसके पास ऐरावत जैसा गजेन्द्र हो और अमोघ प्रहार के लिए वज्र हो उसका तो केवल विचार करने पर ही दूसरा (शत्रु) काजल का ढेर हो जाता है। 'मृग ने सिंह को मार डाला, कुत्ते ने हाथी को भगा दिया' – ऐसी विपरीत असम्भव बातों से भरी हुई **रामायण** कवियों ने रची है। यह सब झूठ है और तर्क एवं विश्वास के विरुद्ध है, जो पण्डित हैं वे ऐसी बातों में श्रद्धा नहीं रखते।"

(सीहो मएण निहओ, सापेण कुञ्जरो जहा भग्गो।
तह विवरीयपयत्थं, कईहि रामायणं रइयं।।११६।।
अलियं पि सव्वेमयं, उववत्तिविरुद्ध पच्चय गुणेहिं।
न य सद्दहन्ति पुरिसा, हवन्ति जे पण्डिया लोए।।११७।।)

इन जिज्ञासाओं और प्रश्नों को देखकर लगता है कि वाल्मीकि की **रामायण** से विमलसूरि परिचित थे, लोक में रामकथा प्रचलित थी और उससे कई लोगों के मन में जिज्ञासाएँ थीं जिसका वे समाधान चाहते थे।

विमलसूरि के **पउमचरियं** की तुलना फादर कामिल बुल्के ने वाल्मीकि की **रामायण** से अपने शोध-प्रबन्ध **रामकथा** (प्र.१९६२, द्वि.सं.) में निम्नवत की –

"**पउमचरियं** छः भागों में विभक्त किया जा सकता है –

१. रावण चरित (पर्व १ से २०) : रावण चरित वाल्मीकि के उत्तरकाण्ड से सम्बन्ध रखते हुए भी पर्याप्त मात्रा में भिन्न है। प्रारम्भ में विद्याधर-लोक, राक्षसवंश तथा वानरवंश का वर्णन दिया जाता है। राक्षस राजा रत्नश्रवा तथा केकसी की चार सन्तान हैं – दशमुख (रावण), भानुकर्ण (कुम्भकर्ण), चन्द्रनखा (सूर्पणखा) और विभीषण। मौसेरे भाई वैश्रमण (वैश्रवण) का विभव देखकर दशमुख अपने भाइयों के साथ तप करने जाता है तथा विभिन्न विद्याएँ प्राप्त कर लेता है। अनन्तर मन्दोदरी तथा अन्य ६००० विद्याधर-कन्याओं के साथ रावण के विवाह का वर्णन किया गया है। बाद में रावण वैश्रमण तथा यम को परास्त करता है और पुष्पक प्राप्त कर लंका में प्रवेश करता है।

रावण बालि के पास दूत भेजकर उसकी बहन रत्नप्रभा को पत्नी स्वरूप मांगता है तथा बालि को आकर प्रणाम करने का आदेश देता है। बालि जिनवरेन्द्र को छोड़कर किसी को प्रणाम करने से इन्कार करता है और अपने भाई सुग्रीव को राज्य देकर जैन दीक्षा लेने चला जाता है (पर्व९)।। सुग्रीव रावण को प्रणाम करता है तथा श्रीप्रभा का रावण के साथ विवाह सम्पन्न हो जाता है। बाद में बालि द्वारा रावण के पराजय के वृत्तान्त को सर्वथा नवीन रूप दिया गया है, जिसमें बालि रामायणीय कथा के शिव का स्थान लेकर रावण द्वारा उठाए हुए पर्वत को अपने पैर के अंगूठे से दबा देता है।.....

रावण का चरित्र-चित्रण वाल्मीकि **रामायण** से बहुत भिन्न है। वह एक धर्मभीरू जैनी है, जो जिन मन्दिरों का जीर्णोद्धार करता है तथा ऐसे यज्ञों पर रोक लगाता है जिनमें पशुओं को मारा जाता है (पर्व ११)। वह नलकूबर की पत्नी उपरंभा का प्रेम प्रस्ताव अस्वीकार करता है तथा अनन्तवीर्य का धर्मोपदेश सुनकर व्रत लेता है कि वह विरक्त परनारी के साथ रमण नहीं करेगा।.

हनुमच्चरित का पर्याप्त विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। ....

रावण चरित के अन्त में जिनवर तीर्थंकरों, बलदेवों, वासुदेवों और प्रतिवासुदेवों की नामावलियाँ दी गई हैं (पर्व २०)।

२. राम और सीता का जन्म और विवाह (पर्व २१ से ३२) : रामायण की आधिकारिक कथावस्तु का वर्णन जनक तथा दशरथ की वंशावली से प्रारम्भ होता है (पर्व २१-२२)। दशरथ के अपराजिता तथा सुमित्रा के साथ विवाह के उल्लेख के अनन्तर निम्नलिखित कथा मिलती है – किसी दिन नारद ने दशरथ के पास पहुंचकर समाचार दिया कि विभीषण उनको इसलिए मारना चाहता है कि एक नैमित्तिक ने कहा है – 'सागर के मार्ग से आकर दशरथ का पुत्र जनक की पुत्री सीता के कारण

रावण को युद्ध में मारेगा।' इसके बाद नारद ने जनक को भी सावधान किया। दोनों राजा अपना-अपना राज्य छोड़कर पृथ्वी पर भ्रमण करने लगे। मंत्रियों ने दशरथ तथा जनक प्रतिरूप बनवाकर उन्हें उनके-उनके महल में रखवा दिया। बाद में विभीषण ने दशरथ की मूर्ति का सिर कटवाया (पर्व २३)। परदेश में दशरथ तथा जनक कैकेयी के स्वयंवर में पहुंचे, स्वयंवरा ने दशरथ के गले में माला डाल दी। इस पर अन्य राजाओं के साथ युद्ध हुआ, जिसमें कैकेयी ने बड़े कौशल से दशरथ का रथ हाँका। विवाह सम्पन्न होने के पश्चात् दोनों राजा अपनी-अपनी राजधानी लौटे। घर पहुंचकर दशरथ ने कैकेयी को एक वर दिया किन्तु कैकेयी ने कहा – 'अवसर आने पर माँग लूँगी।' दशरथ की संतति इस प्रकार बताई जाती है – राम, अथवा पद्म, अपराजिता (कौशल्या) से जन्म लेते हैं, लक्ष्मण सुमित्रा से, और भरत तथा शत्रुघ्न दोनों ही कैकेयी से।

राजा जनक की विदेहा नामक महारानी के एक पुत्री सीता और एक पुत्र भामण्डल उत्पन्न हुए। राम म्लेच्छों के विरुद्ध जनक की सहायता करते हैं जिसके फलस्वरूप राम तथा सीता का वाग्दान हुआ, बाद में सीता–स्वयंवर के अवसर पर राम ने धनुष चढ़ाया और राम सीता का विवाह सम्पन्न हुआ। इसके बाद दशरथ को वैराग्य हुआ। उस समय कैकेयी ने अपने वर के बल पर भरत के लिए राज्य माँग लिया। यह सुनकर राम, लक्ष्मण और सीता दक्षिण की ओर चले जाते हैं। पश्चातापिनी कैकेयी के अनुरोध पर भरत वन में जाकर राम से राज्य को स्वीकार करने का अनुरोध करते हैं। राम के इन्कार करने पर वह अयोध्या लौटकर स्वयं राज्य भार ग्रहण करते हैं, बाद में भरत किसी मुनि के समक्ष यह प्रतिज्ञा करते हैं कि राम के प्रत्यागमन पर मैं दीक्षा ग्रहण करूँगा।

३. वन भ्रमण (पर्व ३३ से ४२)

४. सीता हरण और खोज (पर्व ४३ से ५३)

५. युद्ध (पर्व ५४ से ७७)

६. उत्तरचरित (पर्व ७८ से ११८)"

पउमचरियं के अनुसार बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत जी की कथा से कई बातें एक साथ उजागर होती हैं -

१. इसमें वर्णित रामकथा जैन-संस्कृति के अनुसार लिखी गई है।

२. जैन धर्म से सम्बन्धित चिन्तन और विचारधारा जगह-जगह मिलेगी और इसमें पाए जाने वाले पात्रों का जीवन भी जैन दर्शन के अनुरुप दिखलाई देगा।

३. मुनिसुव्रत तीर्थंकर की माता ने गर्भ से पहले १४ स्वप्न देखे।

४. मुनिसुव्रत जी के पुत्र सुव्रत हुए और इन्हीं सुव्रत मुनि से राम ने श्रमण दीक्षा ली।

५. राम को रजोहरण के साथ सामायिक देकर सुव्रत नामक श्रमण ने दीक्षा दी।

६. राम मुनियों की तरह विहार करते हैं। उनके भिक्षाय्न का वर्णन भी किया गया हैं। राम को

केवलज्ञान भी प्राप्त होता है। अरण्य में बेले और तेले के बाद गोचरी के लिए जाते हैं।

जैन संस्कृति विद्याधरों की संस्कृति से जुड़ी प्रतीत होती है। रावण विद्याधर था। उपसंहार के रूप में विमलसूरि कहते हैं –

"विषय रूपी मांस में आसक्त हलधर और चक्रधर का लंकाधिप के साथ स्त्री के लिए महान् युद्ध हुआ। काम से मोहित उस अनियमितात्म विद्याधर राजा ने अनेक हजार युवतियों से शान्ति न पाई और नरक में गया। यदि अनेक स्त्रियों द्वारा स्नेहपूर्वक पालन किये जाने पर भी उसने तृप्ति न पाई, तो फिर दूसरा बहुत थोड़ी स्त्रियों से कैसे सन्तोष प्राप्त करेगा? जो मूर्ख पुरुष तप, नियम एवं संयम से विहीन और विषयों में आसक्त होते हैं वे मानों रत्न का त्यागकर कौड़ी लेते हैं। परनारी के आश्रय से होने वाले वैर के इस निमित्त को सुनकर परलोक (मोक्ष) के आकांक्षी बनो और दूसरों का विनय करो। मनुष्य पुण्य के फलस्वरूप सुसंपत्तियों की निधि पाता है और पाप के फलस्वरूप दुर्गति पाता है। जगत का यह स्वभाव है। कोई किसी को आरोग्य, धन तथा उत्तम आयु नहीं देता। यदि देव लोगों को ये सब देते तो बहुत लोग दुखी क्यों हैं? काम, अर्थ, धर्म और मोक्ष – ये सब इस पुराण में कहे गये हैं। दुर्गुणों को छोड़कर, गुणों को, जो तुम्हारे हितजनक हैं, ग्रहण करो। अरे! लोक में बहुत कहकर क्या किया जाय? एक शब्द में ही तुम समझ जाओ। जिनवर के धर्म में तुम सदा रमण करो। जिनशासन में अनुरक्त होकर उत्तम धर्म का पालन करो जिससे बलदेव आदि जहाँ गये उस स्थान को तुम निर्विघ्न प्राप्त करो।

सभी श्रुतदेवता इस रामचरित का नित्य सन्निधान करें और लोगों को अपनी भक्ति से युक्त करें। समाधियुक्त, सौम्य मनवाले तथा जिनवर के धर्म में उद्यत बुद्धिवाले सूर्यादि सब ग्रह भव्यजनों का रक्षण करें। प्रमाद दोषवश मैंने जो यहाँ कमोबेश कहा हो उसे पूर्ण करके पण्डितजन मेरे सारे दोष क्षमा करें।" (पर्व १०४ से ११८)

उपरोक्त से काव्य का प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है। यह वृहत् महाकाव्य एक प्रकार से धार्मिक गाथा के रूप में लिखा गया है। काव्य ने पुराण और इतिहास का रूप लिया है। लोक में प्रचलित रामकथा से यह रामकथा बहुत भिन्न है। इसमें राम के युग के साथ बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत जी की कथा भी है और श्रमण-संस्कृति से राम और रावण को ही नहीं अपितु इसमें आए हुए अन्य सभी पात्र भी सम्बद्ध किए गए हैं। इस काव्य ने जैन रामकथा को पारम्परिक रूप प्रदान किया है। बाद के काव्यों को विमलसूरि के काव्य से सम्बद्ध कर परखना चाहिए।

[टिप्पणी :

रामकथा के सम्बन्ध में जैन परम्परा में दो अनुश्रुति हैं – एक अनुश्रुति विमलसूरि द्वारा प्राकृत में निबद्ध **पउमचरियं** में मिलती है और उसी के अनुसरण में वीर संवत् १२०३ (= ६७६ ई.) में दिगम्बर आचार्य रविषेण ने संस्कृत में **पद्मचरित** की रचना की और उसके बाद दिगम्बर आम्नायी गृहस्थ कवि स्वयंभू ने ८ वीं शती ई. में अपभ्रंश में **रामायण** की रचना की। दूसरी अनुश्रुति जिनसेन स्वामी के शिष्य गुणभद्र द्वारा **महापुराण** के **उत्तर पुराण** खण्ड में ९वीं शती ई. के उत्तरार्ध

में संस्कृत में निबद्ध की गई थी। यह **पउमचरियं** की कथा से काफी भिन्न है।

तीर्थंकर की माता को १४ स्वप्न दिखना, राम को पद्ममुनि के रूप में श्रमण-दीक्षा पर रजोहरण दिया जाना, उनका मुनि रूप में भिक्षाटन के लिए जाना और केवलज्ञान प्राप्ति के बाद गोचरी के लिए जाना, इस बात का संकेत करते हैं कि **पउमचरियं** के कर्ता विमलसूरि श्वेताम्बर आम्नाय से प्रभावित थे और ईस्वी सन् के प्रारम्भ तक श्वेताम्बर धारणायें महाराष्ट्री प्राकृत के प्रदेश में स्वरूप ग्रहण कर चुकी थीं तथा साहित्य में भी प्रसार पा चुकी थीं यद्यपि दिगम्बर-श्वेताम्बर का औपचारिक संघभेद ७९-८२ ई. में हुआ था। यह उल्लेखनीय है कि दिगम्बर परम्परा में तीर्थंकर माता १६ स्वप्न देखती हैं और मुनि मयूर-पिच्छि लेता है, भिक्षाटन के लिए नहीं जाता तथा केवलज्ञान प्राप्ति के बाद गोचरी के लिए नहीं जाता।

इस सन्दर्भ में **शोधादर्श** – ३९ में पृ. २२७-३० व २५७-५८ पर श्री रमा कान्त जैन का 'विमलार्य' पर लेख भी अवलोकनीय है।

– शशि कान्त]

आदिपुराण में नारी का चित्रण

- डॉ. (कु.) मालती जैन

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, श्री चित्रगुप्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय;
१४६, कटरा, मैनपुरी-२०५ ००१

आचार्य जिनसेन की अमर कृति **आदिपुराण** प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव तथा उनके पुत्र भरत व बाहुबलि के पुण्य चरित्र के साथ-साथ भारतीय संस्कृति एवं इतिहास के मूल स्रोतों एवं विकास-क्रम को आलोकित करने वाला महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। जैन-संस्कृति एवं इतिहास के अध्ययन के लिए इसकी उपयोगिता असंदिग्ध है। विषय प्रतिपादन की दृष्टि से इस पुराण में धर्म, दर्शन तथा इतिहास के साथ-साथ तत्कालीन समाज की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति का भी चित्र अंकित है।

नारी मानव-समाज का अभिन्न अंग है। स्त्री और पुरुष समाज शकट के दो चक्र हैं। "यथा एकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत्"- जिस प्रकार एक चक्र से रथ गतिशील नहीं हो सकता, उसी प्रकार स्त्री के सहयोग के बिना समाज की स्थिति एवं विकास संभव नहीं है। नारी अस्मिता के इस महत्व को स्वीकार करते हुए आचार्य जिनसेन ने अपने महाकाव्य **आदिपुराण** में अपने समकालीन समाज में नारी की स्थिति पर भी प्रकाश डाला है।

आचार्य जिनसेन की दृष्टि में कन्या का जन्म माता-पिता के लिए अभिशाप नहीं है। राजा वज्रदन्त और रानी लक्ष्मीमती के आँगन में पुत्री श्रीमती का जन्म उनके लिए खुशियों की सौगात लेकर आता है। (पर्व ६.८३)

कवि के विचार में कन्या-रत्न के अतिरिक्त और कोई उत्तम रत्न नहीं हैं। सुलोचना-स्वयंवर के संदर्भ से कवि कहता है कि अम्बुधि (समुद्र) व्यर्थ ही रत्नाकर होने का खोटा अहंकार अपनाये है, वस्तुतः जिनके यह कन्या-रत्न सुलोचना है वे राजा अकम्पन और उनकी रानी सुप्रभा रत्नाकर हैं। (पर्व ४३. २९८)

स्त्री-शिक्षा के विषय में भगवान ऋषभदेव के माध्यम से वह कहते हैं कि जिस प्रकार लोक में विद्यावान पुरुष पण्डितों द्वारा सम्मानित होते हैं उसी प्रकार विद्यावती नारी भी स्त्रियों के संसार में अग्रिम स्थान प्राप्त करती है। (पर्व १६.९८)

ऋषभदेव द्वारा स्वयं अपनी दोनों पुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी को अक्षर विद्या और अंक विद्या सिखाने तथा उन्हें व्याकरण, छन्द और अलंकार रूपी वाङ्मय का ज्ञान प्रदान करने का विशद वर्णन है। (पर्व १६. १०२-०४ में है)

विवाह के अवसर पर कन्याओं को वर-वरण की स्वतंत्रता प्राप्त थी। कन्यायें स्वयंवर में

उपस्थित होकर स्वेच्छानुसार अपने पति का चयन करती थीं। सुलोचना के विवाह के लिए चिंतित राजा अकम्पन से सुमति नामक मंत्री कहता है –

दृष्टः सभ्यगुपायोऽयं मयाऽत्तैकोऽविरोधकः।

श्रुतः पूर्व पुराणेषु स्वयंवर विधिर्वरः।। (पर्व ४३.१६६)

(इस विषय में किसी का विरोध न करने वाला एक उत्तम उपाय मुझे दिखाई पड़ा है। वह यह कि पूर्व पुराणों में स्वयंवर विधि श्रेष्ठ विधि सुनी गई है, अर्थात् मानी गई है।)

कन्याओं को आजीवन अविवाहित रहकर आत्मकल्याण करने का भी अधिकार प्राप्त था। ब्राह्मी और सुन्दरी का कौमार्य अवस्था में ही दीक्षा ग्रहण कर आत्म-कल्याण के पथ पर अग्रसर होना, इसका उदाहरण माना जा सकता है।

नारी की सामाजिक स्वीकृति के निर्धारण में उसकी आर्थिक स्थिति का महत्वपूर्ण स्थान है। **आदिपुराण** में गृहस्थ द्वारा गृह त्याग करते समय ज्येष्ठ पुत्र को गृहस्थी का भार सौंपते समय धन-संविभाग (सम्पत्ति का बंटवारा) करने हेतु यह निर्देश करने की बात लिखी है –

एकोऽंशोधर्मकार्येऽतो द्वितीयः स्वगृहव्यये।

तृतीयः संविभागाय भवेत् त्वत्सहजजन्मनाम्।।

पुनश्च संविभागर्हाः समं पुत्रैः समांशकैः।

त्वं तु भूत्वा कुलज्येष्ठः सन्ततिं नोऽनुपालय।। (पर्व ३८. १५३-१५४)

(अर्थात्, मैनें अपने धन के जो तीन भाग किये हैं उनमें से एक भाग धर्म कार्य के लिए, दूसरा भाग घर खर्च के लिए तथा तीसरा भाग सहोदरों में बाँटने के लिए है। पुत्रियों और पुत्रों में वह भाग समान रूप से बाँटना चाहिए। हे पुत्र, तू कुल में ज्येष्ठ होने के कारण हमारी सन्तानों का पालन कर।) इससे स्पष्ट है कि माता-पिता की सम्पत्ति में पुत्रियों का भी पुत्रों के समान अधिकार माना गया है।

सुलोचना ने कौमार्य अवस्था में ही जिनेन्द्र देव की अनेक प्रकार की रत्नमयी प्रतिमाओं का निर्माण करवाया और उनकी प्रतिष्ठा कराके पूजनाभिषेक किया (पर्व ४३. १७३)। यह इंगित करता है कि कन्याओं को कौमार्य अवस्था में भी वयस्क होने पर अपने पिता की सम्पत्ति में से स्वेच्छानुसार दानादि करने की भी स्वतंत्रता प्राप्त थी।

तत्कालीन समाज में सामान्यतया स्त्रियों का वैवाहिक जीवन सुखमय था। विवाहित स्त्री को घूमने-फिरने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। विवाहित स्त्रियाँ अपने पतियों के साथ तो वन-विहार करती ही थीं, कभी-कभी एकाकी भी वन-विहार को जाती थीं। पति और पत्नी एक दूसरे के पूरक थे। पति से ही स्त्री की शोभा नहीं थी, बल्कि पति भी स्त्री से शोभित होता था। राजा वज्रदन्त और रानी लक्ष्मीमती का वैवाहिक जीवन इसका उदाहरण है। (पर्व ६. ५६)

स्त्रियों का अपमान समाज में महान अपराध माना जाता था। (पर्व ४३. ६६)

शीलवती स्त्री समाज में विशिष्ट सम्मान और प्रतिष्ठा की अधिकारिणी थी। महान संकट में वह अपने शील और सदाचार के महात्म्य से अपने पति की रक्षा करती थी। जयकुमार-सुलोचना प्रसंग इसका उदाहरण है। (पर्व ४७.२७०)

मातृत्व नारी के व्यक्तित्व का चरम विकास है। आचार्य जिनसेन ने नारी के जननी रूप के चरणों में अत्यधिक आदर से अपनी भावांजलि अर्पित की है। (पर्व १३. ३०)

सामान्यतया समाज में विधवा की स्थिति अत्यधिक शोचनीय एवं कारुणिक होती है। तदपि **आदिपुराण** के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में विधवा को अपशकुन नहीं समझा जाता था वरन् उसे समाज आदर और सम्मान की दृष्टि से देखता था। विधवायें सांसारिक भोगों से विरक्त हो धर्म साधन में अपना अवशेष जीवन व्यतीत कर सकती थीं। ललितांगदेव की विधवा स्वयं-प्रभा के कार्यकलापों का वर्णन पर्व ६. ५०-५६ में अवलोकनीय है।

तत्कालीन समाज में वेश्याओं की स्थिति पर भी आचार्य ने प्रकाश डाला है। मांगलिक तथा धार्मिक अवसरों पर वेश्यायें बुलाई जाती थीं। इनकी गणना शुभ-शकुन के रूप में की गई है। जब भगवान ऋषभदेव दीक्षा के लिए चलने लगे तो एक ओर दिक्कुमारी देवियाँ मंगलद्रव्य लेकर खड़ी थीं तो दूसरी ओर उत्तम वारांगनायें मंगलद्रव्य लेकर प्रस्तुत थीं (पर्व १६. ८३)। जन्म और विवाह के अवसर पर भी वेश्याओं द्वारा मंगल गीत गाये जाने की प्रथा का उल्लेख है।

वेश्याओं का एक दूसरा चित्र भी प्राप्त होता है जिसमें उन्हें त्याज्य एवं निंद्य बताया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि समाज में दो प्रकार की वेश्यायें थीं - एक वे जो केवल नृत्य-गायन आदि का कार्य करती थीं, और दूसरी वे जो धन के लिए अपनी देह का सौदा करती थीं। वेश्यायें मद्यपान भी करती थीं।

कतिपय ऐसी प्रथाओं का उल्लेख है जो नारी-शोषण और स्त्री-निन्दा के उदाहरण कहे जायेंगे, यथा - लोक में ऐसी कहावत भी प्रसिद्ध थी कि कन्या चाहे हँसती हो या रोती हो, अतिथि उसका अधिकारी होता है। राजा वज्रबाहु, महाराज वज्रदन्त की श्रीमती नामक पुत्री से अपने पुत्र के विवाह का प्रस्ताव बलपूर्वक रखता हुआ इसी उक्ति को दोहराता है। (पर्व ७. १९९)

राजा जयकुमार के माध्यम से दुष्ट स्त्रियों के अवगुणों का वर्णन किया गया है -

वृश्चिकश्च विषं पश्चात् पन्ननास्य विषं पुरः।

योषितां दूषितेच्छानां विश्वतो विषमं विषम्।। (पर्व ४३. १०४)

(अर्थात्, विष बिच्छू के पीछे पूँछ पर और साँप के आगे मुँह में रहता है, परन्तु जिनकी इच्छायें दुष्ट हैं ऐसी स्त्रियों के सभी ओर विषम विष भरा रहता है।)

तत्कालीन समाज में बहु-विवाह की प्रथा भी प्रचलित थी जिसके कारण स्त्रियों को सपत्नीजन्य कष्टों को सहन करना पड़ता था।

नारी-सौंदर्य के वर्णन में पुराणकार का मन खूब रमा है। विभिन्न अलंकारों के माध्यम से नारी-देह का नख-शिख वर्णन अनेक स्थलों पर उपलब्ध होता है। ये स्थल पुराणकार की काव्य प्रतिभा के सुन्दर निदर्शन हैं। नारी-सौंदर्य के वर्णन में आध्यात्मिक उपमाओं का भी अद्भुत् प्रयोग है, यथा – सुलोचना के पयोधरों की स्याद्वाद से उपमा –

भिन्नौयुक्तौ मृदू–स्तब्धौ उष्णौ-सन्तापहारिणौ।

स्तनौ विरुद्धधर्माणौ स्याद्वाद स्थितिमूहतुः।। (पर्व ४३. १४७)

सामान्यतया **आदिपुराण** में नारी के विविध रूपों को सम्माननीय स्थान प्रदान किया गया है। पुत्री के रूप में यदि उसे अपने व्यक्तित्व के विकास के पूर्ण अवसर प्रदान किये गये हैं तो पत्नी के रूप में उसे वांछित अधिकार प्राप्त हैं। जननी के रूप में वह वंदनीय है, तो विधवा के रूप में भी उसे तिरस्कृत नहीं किया गया है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक - जीवन के सभी क्षेत्रों में नारी-अस्मिता को स्वतंत्र रूप से स्वीकृति प्रदान की गई है। प्रसंगवश प्राणियों के हृदय में भोग-विलासों से वैराग्य उत्पन्न करने के उद्देश्य से नारी के वासनोद्दीपक 'कामिनी' रूप की निन्दा यत्र-तत्र दृष्टिगत होती है, लेकिन दया, माया, ममता और मधुरिमा से अभिमंडित नारी के उदात्त एवं महान व्यक्तित्व के प्रति आचार्य जिनसेन सदैव श्रद्धावनत् रहे हैं।

'भरत' : शब्द यात्रा

– वेद प्रकाश गर्ग

भारतीय साहित्य, विशेषकर हिन्दी साहित्य, के शोधक वयोवृद्ध विद्वान;
११४, खटीकान, मुजफ्फरनगर-२५१ ००२

संस्कृत-हिन्दी शब्दकोशों में **भरत** शब्द के यद्यपि कई अर्थ दिए गए हैं, किंतु उनमें प्रसंग प्राप्त अर्थ ही विचारापेक्ष है। संस्कृत के **हलायुधकोशः** में 'भरतः' शब्द का संबंद्ध अर्थ-विवेचन इस प्रकार दिया है जो मननीय है–'भरतः पुं. (विभर्ति स्वाङ्गमिति, विभर्ति लोग निति वा। भृ+भृमृदृ शियजीति' अत च्) नाट्य शास्त्रकृन्मुनि विशेषः दौष्यन्तिः (शाकुन्तलेयः)' आदि अर्थ देने के बाद लिखा है- 'ऋषभदेवात् इन्द्रदत्त जयन्त्यां कन्यायां जात शत पुत्रान्तर्गत ज्येष्ठपुत्रः" और यही अर्थ हमें अभिप्रेत है।

हिन्दी विश्वकोश (नगेन्द्र नाथ वसु) में भी लगभग ऐसा ही व्युत्पत्ति सूत्र दिया है जिसमें उण् अधिक है, और अर्थ लिखा है–'ऋषभदेव के पुत्र'। इसके आगे कुछ और विवरण दिया है। साथ ही 'जड़भरत' का उल्लेख कर लिखा है–'ये लोक सङ्गविवर्जित रहने के अभिप्राय से जड़वत् रहते थे।'[2] जैन मतानुसार आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ भगवान् के पुत्र भरत छः खंड के अधिपति चक्रवर्ती थे परन्तु संसार से परम विरक्त रहते थे।

भारतवर्षीय प्राचीन चरित्रकोश (सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव) तथा अन्यान्य हिन्दी कोशों में 'भरत' का अर्थोल्लेखान्तर्गत – दुष्यन्त-पुत्र, नाट्यशास्त्रकर्त्ता, नट, आदि के साथ ही ऋषभ-पुत्र भरत को 'जड़भरत' के रूप में उल्लिखित किया गया है।[3]

वैसे 'भरत' शब्द का जहाँ तक शाब्दिक अभिप्राय है, तो उसका अर्थ है जो संसार का सुचारू रूप से 'भरण-पोषण' करता है, जैसा गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी **रामचरित मानस** में भरत नामकरण के संबंध में लिखा है–

'विस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (१/१९७/७)

इस संदर्भ में **श्रीमद्भागवत** का निम्न उद्धरण विशेष महत्त्वपूर्ण है–

'तस्माद् भवन्तो हृदयेन जाताः
सर्वे महीयांसममुं सनाभम्।
अक्लिष्ट बुद्धया भरतं भजध्वं
शुश्रूषणं तद्भरणं प्रजानाम्। (५।५।२०)

भगवान ऋषभदेव के कथन के रूप में इसका तात्पर्य यह है कि यह मेरा ज्येष्ठ पुत्र प्रजाओं के भरण-पोषण रूप सेवा कार्य करने के कारण 'भरत' नाम से विख्यात होगा।

इसी प्रकार **मत्स्यपुराण** में लिखा है –

भरणात् प्रजानाच्चेव मनुर्भरत उच्यते।

निरूक्ति वचनैश्चैव वर्ष तद् भारतं स्मृतम्।। (११४।५-६)

उक्त कथन से प्रतीत होता है कि इस पुराण में 'मनु' को ही प्रजाओं के भरण-रक्षण के कारण 'भरत' संज्ञा से अभिहित होने से यह देश 'भारत' कहलाया। यहाँ 'भरत' से 'भारत' बना, यह तो प्रकट है, किन्तु ऋषभ-पुत्र भरत का उल्लेख नहीं है। यहाँ 'मनु' को 'भरत' कहा गया है जिससे यह अन्य पुराणोल्लेख के विपरीत-सा जान पड़ता है, किन्तु ऐसा नहीं है। विचार करने पर ज्ञात होता है कि उक्त कथन भी सापेक्ष है। वस्तुतः उस काल में भारत के शासक को 'मनु' कहते थे और 'भरत' भी 'मनु' थे। इसीलिए 'मनु' एवं 'भरत' दोनों का एक साथ उल्लेख हुआ है। यहाँ आदि-जनक (स्वायम्भुव) मनु से तात्पर्य नहीं है।[४]

जिनसेनाचार्य के **आदिपुराण** में उल्लेख है–'सोऽजीजनत्तं वृषभं महात्मा, सोऽप्यग्र सूनुं मनुमादि राजम्' (३/२३७), अर्थात् उन्होंने (नाभिराय ने) वृषभ-जैसे महात्मा को जन्म दिया और वृषभदेव के ज्येष्ठपुत्र आदिराजा भरत भी 'मनु' हुए। इसी भाव को एक अन्य स्थान पर 'वृषभो भरतेशश्च तीर्थ चक्रभृतौ मनुः' (३/२३२), कहा है जिसका तात्पर्य है कि वृषभदेव (ऋषभ) मनु एवं तीर्थंकर थे, और भरत चक्रवर्ती भी थे जो मनु संज्ञा से भी अभिहित होते थे। भरत द्वारा प्रजा के भरण-पोषण का कर्त्तव्य निर्वाह मन से किये जाने के कारण उन्हें सोलहवां मनु कहा गया है, और इस प्रकार उनकी 'मनु' संज्ञा सार्थक है।

अपने लोक-हित कार्यों से भरत का यश विश्व में मनु, चक्रवर्तियों में प्रथम, षट्खंड भरत क्षेत्र (भारतवर्ष) के अधिपति, राजराज, अधिराट् और सम्राट् के रूप में उद्घोषित हो गया था। भरत के उदात्त चरित्र ने लोगों के हृदयों में अलौकिक भावनाओं को जन्म दिया था और उनके मन में यह धारणा जम गई थी कि अति शक्ति-सम्पन्न भरत के चरित्र को सुनने या सुनाने मात्र से कामनाएं स्वतः पूर्ण हो जाती हैं। ऐसी आस्था के परिणाम स्वरूप ही आगे चलकर पूज्य भाव से उनकी मूर्तियों का निर्माण किया गया। देश में कई स्थानों पर उनकी अति सुन्दर मूर्तियाँ मिलती हैं, जिनमें देवगढ़ की ध्यान-मग्न कायोत्सर्ग मुद्रा में उत्कीर्णित उनकी एक प्राचीन प्रतिमा अपनी भव्यता के कारण उल्लेखनीय है।

भागवत पुराण में भरत के यश का वर्णन करते हुए एक स्थान पर लिखा है– 'हे राजन्! भगवद् भक्ति से युक्त, निर्मल गुण, कर्मशील राजर्षि भरत का चरित्र कल्याण प्रद, आयु का संवर्धक, धनाभिवर्द्धक, यशः प्रदायी तथा स्वर्ग-अपवर्ग का कारण भूत है। और उन्होंने जिस तरह शासन किया, कोई अन्य नहीं कर सकता। उन उत्तम श्लोक भरत ने दुस्त्यज स्त्री-पुत्र, मित्र और राज्य की लालसाओं को मलवत् त्याग दिया।' वस्तुतः आदिजिन ऋषभ-पुत्र प्रथम चक्रवर्ती सम्राट् भरत की

शुभ्रा एवं अनश्वरी कीर्ति, जो पृथ्वी और स्वर्ग को व्याप्त करने वाली है, चिर स्थायी, है, शाश्वत है, नित्य है।

संदर्भ–संकेत :

१. **हलायुधकोशः**, (हिन्दी समिति, लखनऊ), पृ. ४६०

२. खंड–१५, पृ.७३०–३२

३. इस संबंध में **संस्कृत-हिन्दीकोश** (आप्टे), **वाचस्पत्यकोशः**, The Sanskrit-English Dictionary (मोनियर-विलियम्स), **हिन्दी राष्ट्रभाषाकोश** (इंडियन प्रेस, प्रयाग), **वृहत् हिन्दी कोश** (ज्ञान मंडल, काशी), **संक्षिप्त हिन्दी शब्दसागर** (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी), **मानक हिन्दी कोश** (सं. भृ+अतच्), चौथा खंड व दूसरा खंड (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग), **आदर्श हिन्दी-संस्कृत कोश** (चौखम्बा, वाराणसी), और **शब्दार्थ पारिजात** (चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा) आदि कोशों में देखें 'भरत' एवं 'जड़भरत' शब्द।

४. या फिर **मत्यस्य पुराण** की उक्त निरुक्ति बाद की आरोपित है। प्राचीन निरुक्ति के अनुसार भरत ही प्रजा का भरण-पोषण करने के कारण 'भरत' कहलाते थे। **पुराण विमर्श** (पं. बलदेव उपाध्याय), परिच्छेद ७ (चौखम्बा, वाराणसी) दृष्टव्य।

विचार विन्दु

साधु समाज में फैलता शिथिलाचार

- **गुलाबचन्द्र जैन**

वयोवृद्ध विचारक सुश्रावक;

राजकमल स्टोर्स, सावरकर पथ, विदिशा-४६४ ००१

मुनिजीवन की उपादेयता एवं चरम लक्ष्य स्वात्मकल्याण है, अतः मुनि समस्त वाह्य परिग्रह त्याग कर और निर्ग्रन्थ दिगम्बर वेष धारण कर २८ मूलगुणों का सम्यक् पालन करते हुए, मुक्तिपथ पर अग्रसर होता है। समस्त वाह्य परिग्रह का त्याग तपश्चरण में निमित्त होता है एवं मूलगुणों के सद्भाव में किया गया तपश्चरण उद्देश्य प्राप्ति में कार्यकारी बनता है। ऐसे मुनिजनों को श्रावक चलते-फिरते सिद्धों के रूप में स्वीकार कर एवं श्रेष्ठ आदर्शवत प्रतिष्ठापित कर श्रद्धा व आदर प्रदान करते हैं तथा उनके आदेशों को आगमाज्ञावत शिरोधार्य कर अपने चरित्र को परिमार्जित करते हैं।

किन्तु वर्तमान में मुनिजनोचित क्रिया-कलापों के विपरीत साधु समाज में व्याप्त शिथिलाचार के समाचार प्रायः पत्र-पत्रिकाओं में पढ़कर हृदय पीड़ा से भर जाता है। श्रमण तो धर्म एवं समाज के परम हितैषी एवं उपकारी होते हैं। वे तो भवसागर से पार उतारने वाली उस नाव के समान होते हैं जो स्वयं तो पार पहुंचती ही है, अपने में सवार यात्रियों को भी सहज ही पार लगा देती है। यदि श्रमण रूपी यह नाव स्वयं ही डगमगाने लगे तो उसमें सवार यात्रियों का क्या होगा? आचार्य हरिभद्रसूरि ने **संबोधिप्रकरण** में मुनियों के जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचरण पर गंभीर दुख एवं चिंता व्यक्त की है। **भगवती आराधना** में भी शिथिलाचारी मुनि की अपेक्षा निर्मोही सम्यक्दृष्टि श्रावक को उत्तम प्रमाणित किया गया है।

बनवास त्यागकर चैत्य व मठों में समय से अधिक ठहरना, जिनालय, शाला व जन कल्याणकारी संस्थानों के निर्माण एवं अत्यंत व्यय-साध्य पंच-कल्याणक-गजरथ आदि के प्रवर्तन हेतु अनुमोदन वा सहयोग देना, कुदेवों को सिद्ध कर मंत्र-तंत्र आदि द्वारा भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने का प्रयास करना, वैयावृत्ति के नाम पर कूलर, हीटर, पंखों या सुगंधित तेलों द्वारा की जाने वाली मालिश आदि हेतु मौन सहमति प्रदान करना, विशेष प्रकाशनों की ओट में प्राचीन आगम-साहित्य का स्वयं बहिष्कार करना या भक्तों को उसके लिए प्रोत्साहित करना, तथा एकल बिहार आदि कार्यों को शिथिलाचार कहा गया है। सांसारिक सुख-सुविधाओं के प्रति पुनः लालायित हो मुनिजनों में मठाधीश बनने तक की प्रवृत्ति भी जागृत हो रही है। उक्त सभी भ्रष्टाचार मोक्षमार्गी

साधु की अवनति का कारण बनता है। यद्यपि मुनिधर्म में शिथिलाचार श्रुतकेवलि आचार्य भद्रबाहु के काल से ही प्रवेश पा चुका था, जिसके कारण साधु समाज विभिन्न वर्गों में विभक्त हुआ था, किन्तु वर्तमान में उसका विवर्धित स्वरूप अत्यंत चिंता व दुख का कारण बनता जा रहा है। प्रबुद्ध वर्ग इस संबंध में कितनी ही बार सचेत करता रहा है। स्व. पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री ने **जैन सन्देश** (१४ जून, १९८३) के सम्पादकीय में लिखा था - "जैन धर्म में अन्ध श्रद्धा को स्थान नहीं है। विवेक शून्य श्रद्धा ही दिगम्बर मुनि मार्ग को बिगाड़ रही है। साधुओं की पीछी से आशीर्वाद प्राप्त कर धनी बनने की कामना वाले ही गुण-दोष का विचार किए बिना मात्र शरीर की नग्नता को ही पूज्य मानते हैं। .. .. आज तो मुनियों के परिग्रह परिमाण की सीमा निश्चित करने की आवश्यकता आ गई है - कितनी मोटरें, कितनी रसद सामग्री, कितना धन-धान्य आदि होना चाहिए। आज के युग में शास्त्रोक्त आचार का पालन करने वाले निरारम्भी अपरिग्रही सच्चे साधु नहीं हैं। जिसके पास जितना अधिक परिग्रह है वह उतना ही बड़ा साधु है। अब साधुओं का काम आत्म साधना नहीं किन्तु धन संग्रह कर मंदिर मूर्तियां आदि बनवाना है। धनिक लोग ऐसे ही साधुओं का सम्मान करते हैं। काला धन तो काले में ही जायगा। उसी काले धन का प्रभाव है कि मुनि मार्ग भ्रष्ट होता जा रहा है। उसकी ओर से आंखे मूंदने वाले ही सच्चे मुनिभक्त हैं व उनका विरोध करने वाले मुनि-विरोधी कहे जाते हैं। यह पंचम काल का ही प्रभाव है। अतः इस समय आवश्यकता है समीचीन दिगम्बर मुनि मार्ग की सुरक्षा करने वालों की, अन्यथा साधन के लोभी इसे बेच खा जायंगे।"

स्व. पं. चैनसुखदास ने भी शिथिलाचार के संबंध में काफी लिखा था। डॉ. हुकुमचन्द भारिल्ल ने भी **धर्म के दश लक्षण** में लिखा है - "शरीर पर तन्तु भी न रखने वाले नग्न दिगम्बरों को जब अनेक संस्थाओं, मन्दिरों, मठों आदि का रुचि पूर्वक सक्रिय संचालन करते हुए देखते हैं तो शर्म से माथा झुक जाता है।"

वर्तमान परिस्थितियों में प्रबुद्ध मनीषियों, संस्थाओं-समितियों-परिषदों आदि के अधिकारीगण को साधु मार्ग में प्रवृत्त एवं वृद्धिमान शिथिलाचार को अपनी पूर्ण शक्ति के साथ दूर करने का प्रयास करना चाहिए। धर्म विरोधी क्रियाओं को सभी प्रकार से दूर करके ही धर्म की रक्षा संभव है। अन्यथा जैन संस्कृति के ह्रास-विनाश का सम्पूर्ण दोष उन्हीं के नाम लिखा जायगा। परिषद सदृश समाज सुधार का दावा करने वाली संस्थाओं द्वारा व्यवस्था संबंधी कुछ प्रस्ताव पास कर लेने मात्र से काम नहीं बनेगा, जब तक कि उन्हें पूर्ण निष्ठा, शक्ति एवं गंभीरता पूर्वक प्रस्थापित न किया जाय। मुनिशिथिलाचरण से पीड़ित होकर ऐलक सुध्यान सागर जी ने भी **जैन संदेश** (२८ दिसम्बर, १९८९) में संस्थाओं के पदाधिकारी गणों को धर्म की रक्षा हेतु कठोर कदम उठाने की चेतावती दी थी।

उपेक्षा-अपेक्षा द्वन्द

- सुखमाल चन्द जैन

वयोवृद्ध चिन्तक-विचारक, भूतपूर्व वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी, भारत सरकार;
राज-राजेश्वर भवन, एफ-३, ग्रीन पार्क (मेन), नई दिल्ली-११० ०१६

ज्ञायक स्वभावी आत्मा के लिये शेष सब विश्व ज्ञेय है किन्तु ज्ञानी उसके प्रति परम उपेक्षा रखकर ही हर्ष-विषाद व सुख-दुख के अनुभव से मुक्त रहता है। यही परमात्मत्व की स्थिति है।

'शेष' शब्द सामने आते ही शेषनाग (पृथ्वी का पौराणिक आधार) और समुद्र-मंथन के आख्यान की मथानी का अर्थ समझ में आ गया। यही शेष तो शेषनाग है जो प्रत्येक प्राणी को अपने सहस्रों पाशों से अनादिकाल से जकड़े है।

प्रत्येक प्राणी चाहे मनुष्य हो या देव हो अथवा दानव, शेषनाग को पकड़े हुए अमृतमंथन के चिंरतन सर्वव्यापी खेल में हिस्सा ले रहा है। विष निकलता है तो बुद्धिमान त्यागी नीलकण्ठ (देव) की ही सामर्थ्य है कि उसे पीये ताकि एक-मात्र जीवन-लक्ष्य (सुख की प्राप्ति) का क्रम चलता रहे।

वैभव के १३ रत्न निकलते हैं तो विष्णु (राजनेता, धनाढ्य, शासक, अधिकारी) उनके मालिक बन बैठते हैं।

विषपायी महादेव (शिव, महेश) जो संहार का देवता है अब आणविक अस्त्र-शस्त्रों के विष को नहीं पी सकेगा। इसलिये प्रलय हो जायगी।

यह शेष विश्व ही प्रत्येक मनुष्य के लिए परिवार-समाज-राष्ट्र-मित्र-शत्रु-सहपाठी-सहयात्री के रूप में शेषनाग है। वैभव और अधिकार के पाश से उदासीन होकर, 'सादा जीवन, उच्च विचार' से प्राप्त विवेक का सुमेरू (सम्यक्दर्शन का पर्वत) शेषनाग द्वारा चलायमान नहीं किया जा सकेगा और परम-उपेक्षा द्वारा अविनाशी आत्मा निजानन्द-रसलीन अनन्त-चतुष्टय में निराकुल हो जायेगी।

अप्रिय घटनायें प्रारब्ध के कारण होती हैं, किन्तु उनसे शोक का अनुभव हमारा अज्ञान ही कराता है। शान्त धीर प्रकृति से ज्ञानी की परीक्षा हो जाती है। उपेक्षा अज्ञान को दूर करेगी व परिवार-समाज-राष्ट्र के संबंधों को निरपेक्ष बनाकर मधुर और शक्तिमान तथा समस्या रहित बनायेगी। अपेक्षा ही समस्यायें पैदा करती है। उपेक्षा में कोई समस्या नहीं है।

जैन धर्म : कुछ परिभाषायें, कुछ जिज्ञासायें

- मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त'
मनस्वी जिज्ञासु और चिन्तक;
पी.डब्लू.डी. क्वार्टर नं. ७, समद रोड, अलीगढ़-२०२ ००१

परिभाषायें :

सत्ता में स्थित परम, शाश्वत और निराकुल सुख को अन्ततः स्वयं में, अर्थात् स्वयं की आत्मा में, प्रकटाने की लक्ष्यपरक रीति जैन धर्म है।

जैन धर्म वह व्यवस्थित विज्ञान है जो प्राणी की सोच को सम्यक् रीति से परिष्कृत करता है एवं ज्ञान को सत्य से परिपूर्ण एवं सम्यक् श्रद्धा के अनुरूप बनाता है, तथा हमारे सर्वोत्कृष्ट संभाव्य आचरण को श्रद्धा (सोच) और ज्ञान की सत्यता के अनुरूप सुनिश्चित करता है।

जीवन जीने एवं समस्त प्राणियों को जीने देने की पद्धति, कला अथवा व्यावहारिक विज्ञान ही जैन धर्म है।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्, अर्थात्, प्रत्येक प्राणी एक दूसरे से उपकृत होता है, - ऐसी सह-अस्तित्वपूर्ण भावना एवं तदनुरुप व्यवहार जैन धर्म है।

दुखमयी एवं सुखाभासपूर्ण सांसारिक बंधन रूपी कीच में अपनी आत्मा को नवीन कर्म वन्धनों से कमलवत् निर्लिप्त रखकर और यथार्थ, परम, शाश्वत, निराकुल एवं अद्वितीय सुख को स्वयं में प्रकटाकर कर्म-विमुक्त हो जाना जैन धर्म है।

जैन धर्म वह अद्वितीय रंग है जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भरा जा सकता है एवं जिस जीवन क्षेत्र में भर दिया जांये, उसी को निकृष्टताविहीन तथा उत्कृष्टतम, अथवा महान से महानतम, बना देता है।

अनादि-निधन सुसंस्कृत एवं जीव-दयापूर्ण जीवन शैली जीने का नाम जैन धर्म है। वह अनादि-निधन जीवन-शैली विशेष कालावधियों में, क्षेत्रादि की अपेक्षा से, लुप्त (छिप/आच्छादित) तो हो जाती है किन्तु नष्ट कदापि नहीं होती।

भ्रमणशील संसारी-जीव को परम एवं शाश्वत सौख्यमयी मुक्त-जीव बना देने की अद्भुत एवं अद्वितीय कला या पद्धति जैन धर्म है।

वह विधा जो मात्र नर को ही नारायण न बनाये, अपितु प्रत्येक जीव की आत्मा को परमात्मा बना दे, जैन धर्म कहलाती है।

जैन धर्म पौरुषता को परम-पौरुषता में प्रकटाने की प्रयोगशाला है। भरत चक्रवर्ती सदृश वैभव पाकर भी निर्लिप्त सांसारिक-जीवन-एवं-आत्मोत्थान-पद्धति जैन धर्म है।

(शेष पृ. २७७ पर)

ज्वलन्त प्रश्न – मुनिचर्या पर

- पं. धन्य कुमार जैन

जैन धर्म दर्शन के तलस्पर्शी चिंतनशील विद्वान;

भूतपूर्व विधायक, सिहोरा, (जि. जबलपुर)-४८३ २२५

आलोचना से भय क्यों?

आलोचना न होने का परिणाम है कि आज मुनि का भेष वैरागी का और आचरण रागी का होने से मुनि होने की बाढ़ आ गयी है। यदि इस कपटपूर्ण आचरण की आलोचना न की गई तो भविष्य में नग्नता का मूल्य न रह जायेगा। मुनि आचरण की आलोचना को मुनि की निन्दा करना कहना मुनि की कमजोरी छिपाना है। मुनि वर्ग को समझना होगा कि भेष धारण कर क्रियाओं के करने से पर को धोखा दिया जा सकता है, स्वयं को नहीं क्योंकि परिणाम भावों के अनुरूप होता है, क्रिया के अनुरूप नहीं। मुनि वह होता है जो अपने मन या इच्छाओं का अभाव करने में लगा सरल स्वभावी होता है।

पशु और मानव पांच इन्द्रियों वाली पर्याय के जीव हैं। दोनों में अन्तर यह है कि मानव पर्याय वाले जीव में भेद-ज्ञान करने या विवेक-शक्ति होने से हितकर-अहितकर, अनुकूल-प्रतिकूल, उपयोगी-अनुपयोगी का निर्णय लेकर क्रिया करने से मानव अपने कृत कर्मों की विविधता के अनुरूप विभिन्न पर्यायों वाला हो जाता है। यदि मानव परम शान्ति पाने की दृष्टि से क्रिया न करने का निर्णय लेता है तो वह पर्याय परिवर्तन होने की क्रिया करने से मुक्त हो मोक्ष पर्याय को प्राप्त हो जायेगा किन्तु पशु पर्याय वाले जीवों में भेद-ज्ञान करने की शक्ति नहीं होती। पशु पर्याय का लक्षण आहार की क्रिया को प्रधानता से करना है। मानव पर्याय के जीवों में मुनि पर्याय के जीव ऐसे हैं जो पशु की भांति विवेकहीन हो आहार की क्रिया प्रमुखता से करते हैं। आचरण जीव के भावों का दिग्दर्शक होता है। भेष बनाया जा सकता है। बिना आलोचना किये भेद-ज्ञान होता नहीं और भेद-ज्ञान हुए बिना सम्यक् ज्ञान होता नहीं। बिना सम्यक् ज्ञान हुए सिद्धि होती नहीं। अतएव इसे निन्दा करना समझ अविवेकी न होवें।

मयूरपिच्छि ही क्यों?

मोरों के पंखो की बनी पिच्छी बड़ी संख्या में मुनि वर्ग द्वारा प्रतिवर्ष अनावश्यक बदलने की क्रिया करने से मोरों के मारे जाने में क्या मुनि वर्ग सहभागी नहीं? और क्या पिच्छि बदलने की यह क्रिया करना परिग्रह नहीं होता? एक बाल को भोजन में देखकर अन्तराय हुआ मानने वाले मुनि मोर के पंखों की हड्डी पर लगे बालों से बनी पिच्छी का उपयोग करने से परहेज क्यों नहीं करते?

केशलोंच का प्रदर्शन क्यों?

केश-लोंच एकान्त में करने के बजाय सार्वजनिक रूप में उत्सव मनाकर करना क्या रागी और अहंकारी होने का प्रमाण नहीं है?

आत्मघात की प्रवंचना क्यों?

आयु के अन्त होने के पहले मृत्यु होती नहीं और मृत्यु पूर्व नियत निमित्त कारण से होती है। इसमें परिवर्तन हो नहीं सकता है। अतएव मरने का प्रयास चाहे समाधि लगाकर, फांसी लगाकर या विष खाकर किया जावे, सब हठात् आत्मघात करने के कार्य हैं।

शास्त्र सम्यक् ज्ञान के साधक कैसे?

नियम है कि जो जिससे होता हैं वह उसी के अनुरूप होता है। क्रिया दर्शन-ज्ञान-चरित्र के क्रम से बंधी होती है। दर्शन होना कर्मोदय है, देखने से ही कर्म करने के विचार होते हैं। ज्ञान होना कर्मबन्ध है, जो देखे हुए की याद या स्मृति से जीव को बांधे रखता है। चरित्र होना आस्रव है, जो जीव में बंधी कर्म स्मृतियों को क्रिया रूप देकर पड़े संस्कारों को सन्तति रूप में भावी पर्याय में कर्म करने को ले जाता है। भावों की क्रिया जीव में होती है, और जीव में हुई क्रिया की प्रतिक्रिया पुद्गल में होती है (**समयसार,** गाथा ८०)। इसी से जीव पर्याय रूप परिणमित होता जाता है। जीव को परम शान्ति पाने को पर्याय रूप परिणमन करने से मुक्त हुई अवस्था मोक्ष चाहिये है (**समयसार,** गाथा २९२)। अतएव मोक्ष पाने की दृष्टि से शास्त्र-ज्ञान अज्ञानता का साधक है। शान्ति न देखने-जानने से होती है और अशान्ति देखने-जानने का परिणाम होती है; शास्त्रों में देखने-जानने का कथन है जो नाना प्रकार के विकल्पों से भर अशान्ति पैदा करते हैं।

(पृ. २७५ का शेष)

जिज्ञासायें :

'कषायी' और 'कसाई' में क्या तारतम्य/समानता एवं अन्तर है।

कविवर द्यानतराय जी द्वारा रचित 'दशलक्षण पूजा' में 'ब्रह्मचर्य-धर्मलक्षण' सम्बन्धी छन्दान्तर्गत पूजा-पंक्ति-'कूरे तिया के अशुचि तन में,.....' में प्रयुक्त शब्द 'कूरे' का क्या अर्थ है एवं यह किस भाषा का शब्द है? 'कूरे' का अर्थ 'क्रूर' तो प्रतीत नहीं होता है, 'घृणित' हो सकता है; यदि घृणित ही है, तो किस प्रकार?

एक ओर स्त्री हेतु जिन-प्रतिमाभिषेक-निषेध, जिन-प्रतिमा-स्पर्श-निषेध, मुनि-चरण-स्पर्श-निषेध, स्त्री जहां बैठे उस आसन/स्थान पर ब्रह्मचारी पुरुषों हेतु बैठने का निषेध, इत्यादिक व्यवस्थायें, और दूसरी ओर स्त्री द्वारा आहार-निर्माण, आहार-दान आदि - इन दोनों विरोधाभासों की संगति क्या हैं?

जैन समाज का यथार्थ–बोध

–डॉ. शशि कान्त

१. **भारतीय जैन मिलन** के क्षेत्रीय अध्यक्ष की एक विज्ञप्ति हमें प्राप्त हुई जिसमें कहा गया है–

"ऐसी कोई बात मिलन के मंच से नहीं कहनी चाहिए जिसका कोई भी पक्ष विरोध करे अथवा अस्वीकार करे। **हमें इस विवाद में नहीं पड़ना चाहिए कि सत्य क्या है?** मित्रता के लिए आवश्यक है कि दूसरों के हृदय को ठेस पहुंचाने वाली बातें सार्वजनिक रूप से (मंच के माध्यम से) न कही जायँ। यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो तो अध्यक्ष को अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करके इस प्रकार की वार्ता रोक देनी चाहिए। वक्ता से आशा यही है कि वह कोई ऐसी बात न कहे जिसमें विवाद उत्पन्न हो परन्तु यदि वह नहीं मानता है तो अध्यक्ष को अपने अधिकार का प्रयोग कर वक्ता को वार्ता करने से मना कर देना चाहिए ताकि स्थिति खराब न हो।"

उत्तर में हमारा निवेदन था–

"सत्परामर्श के लिए आभारी हूँ। यह जानकर सुखद अनुभूति हुई कि 'जैन मिलन' को सत्य से विरक्ति है।

आपकी संस्था विशिष्ट प्रज्ञा-बुद्धि वाले शिष्टजनों का समुदाय है जो सब 'वीर' हैं और अब कुछ 'अति वीर' भी हैं। ऐसी भव्य मंडली की सदस्यता के लिए मैं अपने को योग्य नहीं समझता, अतः आपकी संस्था से तत्काल प्रभाव से विरत होता हूँ।

माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ,
सदा ममात्मा विद्धातु देव!"

२. **दिगम्बर जैन महासमिति** के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रदीप कुमार सिंह जैन कासलीवाल के 'सामाजिक विकास के कुछ अछूते प्रश्नों पर विचार', डा. अनुपम जैन की प्रस्तावना के साथ, पुस्तिका के रूप में प्राप्त हुए। श्री कासलीवाल को हमने यथार्थ-बोध कराया –

"आपकी चिन्ता और उदात्त भावना सराहनीय है। परन्तु NDA की तर्ज पर कोई संगठन बने और वह भी मात्र दिगम्बर जैनों का – मेरे विचार से उपादेय नहीं होगा।

यदि जैन समुदाय के सामाजिक उत्थान की दृष्टि से कोई कार्यक्रम बनाया जाना अभिप्रेत है तो उसके लिए पंथ/आम्नाय की दृष्टि को गौण करके समग्र जैन समाज को संगठित करना अभीष्ट है। इसमें सबसे बड़ी बाधा साधु वर्ग है, वह चाहे जिस पंथ/आम्नाय का हो। हर साधु को अपने बाड़े में भेड़ें इक्ट्ठा करना है–कुन्दकुन्द, स्थूलिभद्र आदि के नाम Brands के रूप में इस्तेमाल किये जाते हैं – महावीर से भी किसी को

लेना-देना नहीं है, उनके ऐतिहासिक योगदान से किसी का सरोकार नहीं है, वह तो केवल एक Corporate Brand Name है जिसके अन्तर्गत दिगम्बर लि., श्वेताम्बर लि., तेरापंथी लि. आदि प्रतिष्ठान सेठ-साधु गठबन्धन के Managing Board के अन्तर्गत चलते हैं।

चूंकि महावीर के बारे में सोचा समझा जा सकता है, इसलिए अब उन्हें नकारने और मात्र पुराने पन की दुहाई देकर एक पौराणिक पुरुष ऋषभदेव को उभारने की चेष्टा की जा रही है। ऋषभ का महत्व conceptual है – सारी मानव जाति से उसका सरोकार है, मात्र जैनों से नहीं (देखें मेरा लेख 'मानव सभ्यता के आदि प्रस्तोता ऋषभदेव' जो **शोधादर्श** – १६-१७ में प्रकाशित है)। पुराण कब रचे गये–इससे हमारे गुरुओं का मतलब नहीं है। वह तो आज भी नये पुराण रच रहे हैं – पुराने की दुहाई देकर और प्रभावना के नाम पर मिथक प्रचार का सहारा लेकर। यह क्रम रुकने वाला नहीं।

समाज के नेतृत्व वर्ग में भी–आपको अधिक जानकारी होगी–शेष भारत की तरह–अधिकांश आपराधिक प्रवृत्ति के लोगों का वर्चस्व है। धन तो आप इक्ट्ठा कर लेंगे लेकिन आगे क्या होगा– झगड़ा इस बात पर कि उसे जीमेगा कौन? जब तक बौद्धिक स्तर पर स्वस्थ चिन्तन नहीं होगा, ढोंग, ढपोड़संख और ढकोसले के प्रति समाज में जागृति नहीं आयेगी, अपराधी को कानून के हवाले करने की समझ नहीं आयेगी और देश-काल के अनुसार आचार-विचार को समायोजित एवं संतुलित करने की सद्बुद्धि नहीं जागेगी – जैन समाज को संगठित करने का प्रस्तावित प्रयास एक और अल्पसंख्यक विघटनकारी इकाई को जन्म तो दे सकता है परन्तु उसका नेतृत्व कौन करेगा– कोई प्रतिख्यात व्यक्ति ही।"

श्री कासलीवाल ने उत्तर देने में संकोच किया।

३. **भगवान महावीर के २६००वें जन्मकल्याणक महोत्सव** के सम्बन्ध में महोत्सव महासमिति के महामंत्री और राष्ट्रीय समिति के सदस्य श्री एल. एल. आच्छा ने हमारे सुझाव आमंत्रित किये जिसके लिए हम उनके आभारी हैं। निम्नलिखित विन्दु विचारार्थ भेजे गये हैं :-

राष्ट्रीय समिति :

(क) सभी २८ राज्यों के मुख्यमंत्री उसके सदस्य होने चाहियें।

(ख) जो भी जैन M.P., M.L.A. और M.L.C. हैं, वे भी उसके सदस्य होने चाहियें।

(ग) यद्यपि विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में ढेरों जैन विद्वान हैं, एक भी सदस्य नहीं है। इस स्थिति का तुरन्त निवारण होना चाहिए।

(घ) महिलाओं के नाम पर केवल ३ सदस्यायें हैं, इसमें यथोचित वृद्धि होनी चाहिये।

कार्यक्रम :

(क) जो कार्यक्रम शासन स्तर पर आयोजित कराना प्रस्तावित हैं, उनकी गुणवत्ता, महत्ता और स्वरूप-नियमन तो सरकार करेगी, परन्तु जैन समाज अपनी ओर से क्या आर्थिक सहयोग

देगी, यह स्पष्ट होना चाहिये।

(ख) जैन समाज के स्तर से निम्नलिखित कार्य किया जाना अपेक्षित है यदि समाज वास्तव में महावीर को अपनी श्रद्धांजलि देने के मूड में है –

(१) महावीर की जीवनी के संदर्भ में दिगम्बर-श्वेताम्बर परम्पराओं द्वारा पोषित विवादों का शोधन ओर समाधान।

(२) ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महावीर के भारतीय संस्कृति को अवदान का सम्यक् आकलन।

(३) 'घृणा पाप से हो, पापी से नहीं लवलेश' को उसकी अन्तर्भूत भावना के परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करने पर आग्रह–जो सट्टा, चोरी, मदिरा व्यापार, हवाला आदि व्यसनों में लिप्त रहे और उस पाप की कमाई से प्राप्त धन के बल पर समाज में नेतृत्व करने की धृष्टता कर रहे हैं, उनके सत्य का अनावरण कर उन्हें बहिष्कृत करना।

(४) जो साधु वेश को कलंकित कर रहे हैं और पाप की कमाई के धन्धे को अपना समर्थन दे रहे हैं, ऐसे साधुओं की कलई खोलना और अनाचार व कदाचार के दोषी व्यक्तियों को कानून के हवाले करना।

(५) तीर्थों पर स्वामित्व या नियंत्रण सम्बन्धी सभी वादों को परस्पर विचार-विमर्श कर हल करके न्यायालयों में समझौता दाखिल करना और ऐसे सभी विवादों को समाप्त करना।

प्रकाशन :

(क) Jain Art & Architecture पर भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा १९७४-७५ में ३ Vol. अंग्रेजी व हिन्दी में प्रकाशित किये गये थे। वे comprehensive हैं। यदि अप्राप्य हों तो पुनर्मुद्रण कराया जाय। पुनः उस पर व्यय अनावश्यक होगा।

(ख) Jain Literature in Tamil ही क्यों? Kannad भी महत्वपूर्ण है। उचित होगा Jain Literature in South Indian Languages.

(ग) Bhagawan Mahavira and His Teachings - comprehensive biograply असंभव है क्योंकि दोनों सम्प्रदाय अपनी-अपनी कहानियों पर प्रतिबद्ध हैं। यदि कोई तटस्थ विद्वान समन्वय का प्रयास भी करेगा तो वर्तमान में विचरते आगम-प्रणेताओं को वह मान्य नहीं होगा। विचार कर लें।

(घ) जैन स्रोतों की भारतीय इतिहास के अध्ययन में उपादेयता पर मात्र एक ही पुस्तक है– Studies in the Jaina Sources of the History of Ancient India by Dr. Jyoti Prasad Jain (Pub. 1964, by Munshiram Manoharlal, New Delhi)। यह out of print है और इसका 2nd ed. वही प्रकाशक निकाल रहे हैं। उक्त प्रकाशन संस्था के श्री देवेन्द्र जैन से सम्पर्क कर लें।

भारत सरकार द्वारा अधिसूचित राष्ट्रीय समिति पर आगे समाचार विविधा के अन्तर्गत टिप्पणी भी अवलोकनीय है

४. **कुण्डलपुर में भरेगा जैन कुम्भ** शीर्षक से एक विज्ञप्ति प्राप्त हुई हैं। उसमें कहा गया है कि २१ से २७ फरवरी, २००१, को कुण्डलपुर में विराजमान 'बड़े बाबा' की अतिशयकारी प्रतिमा के १५०० वर्ष पूरे होने पर उसका महामस्तकाभिषेक किया जायेगा। दो वर्ष पहले वय-जयेष्ठ और दीक्षा-ज्येष्ठ आचार्य श्री ने श्री महावीर जी की अतिशयकारी प्रतिमा का सहस्राब्दि समारोह मनवाया था। उनके दीक्षा-अनुज आचार्य श्री अपने को उनसे डेढ़-गुना प्रभावक उद्घोषित करने के लिए कुण्डलपुर के 'बड़े बाबा' की प्रतिमा का सहस्र-पंचशताब्दि समारोह मनवा रहे हैं। न तो श्री महावीर जी की प्रतिमा के १००० वर्ष प्राचीन होने का कोई आधार है और ना ही कुण्डलपुर की प्रतिमा के १५०० वर्ष प्राचीन होने का कोई आधार है। इस प्रकार के प्रपंचपूर्ण आयोजनों से कौन सा धर्म लाभ, पुण्य लाभ या तप लाभ होता है, यह एक विचारणीय प्रश्न है क्योंकि उन पर समाज के करोड़ों रुपये का अपव्यय होता है।

इसी प्रकार का एक तमाशा अमरकंटक में २४००० किलोग्राम की धातु की प्रतिमा की स्थापना के माध्यम से आयोजित है। उस मूर्ति पर भी ६० लाख रुपये के व्यय का प्रचार हुआ है और उसके ट्रान्सपोर्ट पर भी कुछ लाख रु. का व्यय बताया जाता है।

दीक्षा जयन्ती को समारोह पूर्वक मनाने के लिए भी गत जुलाई में पेण्ड्रारोड में कुछ लाख रु. व्यय करके गायों का पुष्पहार से स्वागत किया गया था।

जनवरी २००० में करोड़ों रु. का अपव्यय कर अहिंसा महाकुम्भ का आयोजन दिल्ली में किया गया था। **शोधादर्श** -३९ में हमने इस सम्बन्ध में समाज को सावधान भी किया था। अब २००१ में कुण्डलपुर में जैन कुम्भ होगा। यह सब क्या प्रदर्शित करता है? क्या यही नहीं कि दिगम्बर आम्नायी जैन समुदाय के पास अकूत काला धन है जिसका वह बिना किसी हिसाब के इस प्रकार अपव्यय कर सकते हैं?

५. **मयूर पिच्छी** को औचित्यपूर्ण सिद्ध करने के लिए बड़े विस्मयकारी प्रवाद प्रचारित किये जाते हैं, जैसे कि-पिच्छी मोर के उन पंखों से बनाई जाती है जो कार्तिक मास में मोर स्वयं छोड़ देता है, मोर पंख कभी धूल व गंदगी नहीं पकड़ते, तथा मोर ब्रह्मचारी होता है और मोरनी उसके मुखफेन को खाकर गर्भधारण कर लेती है।

तीनों ही बातें वास्तविकता से परे हैं। हर पक्षी की तरह मोर-मोरनी के संभोग से ही प्रजनन होता है, धूल व गंदगी मोर पंख पर भी बैठती है और मोर के पंख इतनी मात्रा में स्वतः नहीं छोड़े जाते जिनसे सैकड़ों पिच्छि बन सकें। मुनि महाराजों द्वारा इस प्रकार के वचनामृतों से किस महाव्रत की साधना होती है, महाराज अपने श्रीमुख से ही उसकी वाचना कर सकते हैं।

६. **मधु को** अभक्ष्य प्रचारित किया जाता है और इसके लिए आगम-प्रमाण या शास्त्र-वचन का आधार भी बताया जाता है। मधु या शहद शुद्ध पुष्प-रस है। यदि मधुमक्खी का लार होने

के कारण वह अभक्ष्य हो तो गाय-भैंस-बकरी का दूध उन पशुओं का आन्तरिक पसेव होने के कारण भक्ष्य कैसे हो सकता है?

'मधु' वास्तव में 'महुआ' है जो मादक होता है। महुए के जंगलों में मादक गन्ध भरी रहती है और वहां निवासी जन-जाति के लोग उसके कारण बौराये-बौराये रहते हैं। किसी भी मधुवन में जाकर इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है।

'मद्य' मदिरा या आसवनी शराब है और 'मधु' महुए का मादक रस तथा उससे बनी शराब है। शहद में किसी प्रकार की मादकता नहीं होती, अतः उसका मद्य, मांस और मत्स्य के साथ उल्लेख किये जाने का कोई औचित्य नहीं है।

'मधु' को त्याज्य या अभक्ष्य मकारों में सम्मिलित करने का एक कारण यह दिया जाता है कि इसको प्राप्त करने में मधुमक्खियों की हिंसा होती है। मधुमक्खी-पालन अब एक ग्रामीण कुटीर उद्योग के रूप में विकसित है। किसी भी केन्द्र पर जाकर देखा जा सकता है कि किस प्रकार मधुमक्खियों का घात किये बिना, वैज्ञानिक विधि से, मधु (शहद) प्राप्त किया जाता है।

यह भी कहा जाता है कि संचित पुष्प-रस मधुमक्खी के लार्वा-प्यूपा का भोजन है और उसे प्राप्त करना उनके भोजन की चोरी है। यही स्थिति दुधारू पशुओं के दूध की भी हैं क्योकिं प्रकृति ने उनके बच्चों के आहार के लिए ही उन्हें अपने अंदर दुग्ध उत्पादन की क्षमता दी है।

शहद और महुआ के अन्तर को समझकर श्रावकों को स्व-विवेक से शहद के रूप में मधु की अभक्ष्यता पर विचार करना चाहिये।

जैन समाज के सभी सम्प्रदायों में **दीक्षा के उन्माद** के लिए २० वीं शती ईस्वी याद की जाती रहेगी। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव ने मनुष्य को प्रकृत अवस्था से सभ्य अवस्था में आने का पाठ प्रथमतः पढ़ाया, ऐसा हम मानते हैं। परन्तु इसको भूलकर पुनः उसी प्रकृत अवस्था में प्रत्यावर्तित होने को पूज्य मानते हैं और नरकवास तुल्य परिषह सहने को तप के नाम से गौरव मंडित करते हैं। जिस वीतरागता का हम बखान करते हैं वह वास्तव में संवेदनाशून्य भावनाहीन मानसिकता का पर्याय बन जाता है। इस ओर हम विचार ही नहीं करते कि दिगम्बरत्व शून्य अथवा ब्रह्म के समान एक वैचारिक-सैद्धान्तिक चरम है। स्वात्म-कल्याण का नारा तो व्यक्ति को स्व में केन्द्रित कर विशुद्ध स्वार्थी बनाने का ही साधन बन जाता है जब भेष उसको अपना अहमन्य मान सर्वोपरि करने का माध्यम प्रदान कर देता है। दिन-दूनी दिगम्बर वेशी साधुओं की बाढ़ इसी को उद्घोषित करती है। उनके परिग्रह-संचय, मान-पोषण और प्रभावना-प्रपंच, साथ ही कदाचार व अनाचार, के दृष्टान्त नित्य उजागर होते रहते हैं।

इस प्रक्रिया में जैनों का कोई सम्प्रदाय पीछे नहीं है। सभी के साधु समुदाय अपने-अपने तरीके से संख्या वृद्धि में लगे हैं। कुछ समुदाय बालकों को क्रय करने तक का सत्कार्य करते हैं।

साध्यिवयों की संख्या हर संघ में पुरुषों से २-३ गुना या उससे भी अधिक होती है। धर्म के नाम पर उनकी जो दयनीय दशा है और उनके साथ पुरुष वर्ग का जो हीन-भेदपूर्ण व्यवहार है, वह चिन्तनीय है। युवावस्था में जिन्हें साध्वी बनाने का आडम्बर किया जाता है वह वैराग्य भावना का द्योतक नहीं है वरन् धर्म के नाम पर कपट पूर्ण बहकावे का पर्याय है। कुछ माह पहले एक युवती को अपने १० माह के बच्चे को गुरु चरणों में रखाकर आर्यिका बना दिया गया। इस ओर उस सम्प्रदाय के एक जाने-माने प्रबुद्ध का ध्यान आकर्षित किया गया तो वह मौन हो गये।

ब्रह्मचर्य का युवक-युवतियों को नियम दिला देना, धर्मकार्य का एक विशेष अंग बन गया है। आई. ए. एस. परीक्षा में उत्तीर्ण एक नवयुवती को भी ब्रह्मचर्य का व्रत एक महाव्रती ने दिला दिया। उसे प्रशासनिक दायित्व का निर्वहन करना है, न कि ध्यान-योग की साधना। यह सत्कार्य एक मानव-शरीर-क्रिया विज्ञान से अनजान व्यक्ति ही कर सकता है।

८. सन्तो ने **राजनीति में भी प्रवेश** का अभियान चलाया है। इसकी पहल अणुव्रत के शास्ता ने की; उनकी सम्यक् समीक्षा डॉ. मानिक चन्द मालू अपने **हे प्रभो, यह तेरापन्थ** में करते रहे थे; अणुव्रतियों का आचरण देखकर १९६० के दशक में ही हमने अपनी प्रतिक्रिया एक भक्त को सूचित की थी; अन्तिम परिणमन एक प्रमुख अणुव्रती का जनता का करोड़ों रुपये लेकर फरार होने में हुआ। एक अन्य सन्त एक राजनेता के घर पर उसको आशीर्वाद देने जाते हैं। प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री का सान्निध्य पाना सभी सम्प्रदायों के प्रायः सभी प्रभावक सन्त और साध्वी अपना अहोभाग्य समझते हैं।

९. अब तो लम्बी-चौड़ी फीस देकर अपने प्रवचनों का **दूरदर्शन** के विभिन्न उपक्रमों (यथा, ज़ी. टी.वी.) से प्रसारण कराना भी फैशन बन गया है। क्या उल्टी गंगा बही है? विद्वानों और विषय के विशेषज्ञों को दूरदर्शन के प्रबंधक उचित शुल्क देकर प्रसारण के लिए सादर और साग्रह आमंत्रित करते हैं, परन्तु हमारे महाराज और मातायें विज्ञापन की वस्तु के रूप में स्वयं दाम भरकर अपना प्रसारण कराते हैं !

१०. जैन समाज में कुछ दिनों से **पशु मेला** के तर्ज पर युवक-युवतियों के परिचय सम्मेलन किये जाने लगे हैं। पहले बोली के नाम से नीलामी होती थी, अब **लकी ड्रॉ** के रूप में शुद्ध जुआ भी धार्मिक-सामाजिक आयोजनों में आम हो गया है।

११. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा कक्षा ११ की **प्राचीन भारत** पाठ्य पुस्तक में जैन धर्म सम्बन्धी पाठ पर दिगम्बर आम्नाय के कुछ विद्वानों ओर संस्थानों ने जो आन्दोलन चलाया उसने स्पष्ट कर दिया कि यह समुदाय इतिहास और ऐतिहासिक विधा से अनभिज्ञ है और केवल पौराणिक अन्ध-श्रद्धा से ही बंधे रहना चाहता है। वह शेष जैन साहित्य को भी नहीं देखना चाहता और ना ही आधुनिक शोध-खोज से दो-चार होना चाहता है। 'भटकना' शब्द पर तो उसे आपत्ति है परन्तु उन मुनिराज की जय-जयकार करता है जो महावीर को 'चौराहे पर ला खड़ा करने' का ऐलान करते हैं। उस पाठ को ही

अब भारत सरकार ने निकाल देने का वचन दिया है जिससे ये सभी मनीषी पर्याप्त सन्तुष्ट हैं। भगवान महावीर के २६०० वें जन्म-कल्याणक वर्ष में इससे बड़ी श्रद्धांजलि उनके प्रति इस शुद्ध-बुद्ध समाज की और क्या हो सकती है !

उक्त पाठ के संबंध में हम **शोधादर्श**-३४ में विचार कर चुके हैं और उसका संशोधित आलेख भी भेज चुके हैं जिसे परिषद् ने आगामी संस्करण में अनुकूलित करने का आश्वासन भी दिया है। परन्तु धर्मान्ध श्रद्धालुओं को उसे देखने से क्या लाभ?

NCERT के प्रकाशन पर तो तूफान मचा जबकि उसको पढ़कर और पढ़ाकर हजारों की संख्या में जैन छात्र व अध्यापक केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की परीक्षाओं को विगत कितने ही वर्षों में दिल्ली व अन्य प्रदेशों में उत्तीर्ण कर चुके हैं और लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित परीक्षाओं में भी बैठ चुके हैं, परन्तु एबरडीन यूनिवर्सिटी के प्रो. पॉल डन्डास की लन्दन से १९९२ में प्रकाशित पुस्तक **The Jains** की ओर किसी ने आंख उठाने का भी साहस नहीं किया। यह हमारी प्रबुद्धता और ज्ञान-प्रियता पर एक प्रश्न-चिन्ह लगाता है।

विगत ५० वर्षों में जैन समाज में पत्र-पत्रिकाओं की बाढ़ आ गई है और **सत्साहित्य** का प्रकाशन टनों-मनों की मात्रा में हुआ है। शोध-प्रबन्ध भी विपुल मात्रा में लिखे गये हैं। परन्तु पं. नाथूराम प्रेमी, वा. जुगल किशोर मुख्तार, पं. कैलाशचन्द शास्त्री, डॉ. हीरा लाल जैन, डॉ. ए.एन. उपाध्ये, डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, पं. सुखलाल, मुनि जिनविजय, डॉ. नथमल टाटिया प्रभृति विद्वानों की शोध-खोजपूर्ण दृष्टि का प्रायः अभाव है। ऐसा प्रतीत होता है कि साधु वर्ग ने समाज की प्रबुद्धता को सोख लिया है। कहीं चिनगारी भी नहीं है। जिस प्रकार का लेखन प्रकाश में और प्रचार में आ रहा है उससे सारा जैन साहित्य बौद्धिक जगत में खिल्ली का पात्र बनकर रह जायेगा। इस आशंका के प्रति कुछ लोग तो सचेत हों, चाहे उन्हें जैनों का सल्मान रुश्दी और तस्लीमा नसरीन ही क्यों न करार दे दिया जाय !

१९२०-३० के दशकों में **जैन जगत** में पं. दरबारी लाल जैन 'सत्यभक्त' ने, १९३०-४० के दशकों में **सनातन जैन** में श्री मंगत राय जैन 'साधु' ने, १९४०-६० के दशकों में **अनेकान्त** में बा. जुगलकिशोर मुख्तार ने और **जैन सन्देश** में पं. कैलाशचन्द **सिद्धान्तशास्त्री** ने व उनके बाद अपनी हत्या के पूर्व तक डॉ. कन्छेदी लाल जैन ने, तथा पिछले दशक में **धर्ममंगल** में प्रा. सौ. लीलावती जैन ने, **दिशाबोध** में डा. चीरंजी लाल बगड़ा ने और **आपकी समस्या-हमारा समाधान** में डा. अशोक सहजानन्द ने, समाज को चेताने के लिए आवाज उठाई है। **शोधादर्श** तो विगत १५ वर्षों में इस दुष्कर्म के लिए पर्याप्त अपयश भी अर्जित कर चुका है। परन्तु कहीं कोई हलचल नहीं जैसे कि कहीं वीराने श्मशान में कोई बिजली चमकी भर हो। ऐसे प्रबुद्धता-शून्य शुद्ध-बुद्ध स्वात्मलीन समाज का क्या हश्र होगा, अनुमान करने की आवश्यकता नहीं है।

तीर्थंकरों की संख्या और जैन धर्म की प्राचीनता

- **जस्टिस एम. एल. जैन**

दिल्ली उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायमूर्ति, वयोवृद्ध विचारक और चिन्तक;
२१५, मन्दाकिनी एन्क्लेव, अलकनन्दा, नई दिल्ली-११० ०१९

[श्री शांतिलाल के. शाह द्वारा **शोधादर्श** - ३९ (पृ. २८३) में प्रस्तुत जिज्ञासा के सन्दर्भ से निम्नलिखित विचारणा दी गई है। इसके पहले **शोधादर्श**-३४ (पृ.६६-७०) में भी जस्टिस साहब ने विमर्श दिया है और उसके बाद पृ.७०-७१ पर हमारी टिप्पणी भी अवलोकनीय है जिसमें इन विन्दुओं पर **शोधादर्श** में ही अन्यत्र की गई चर्चा भी संदर्भित है। - श.का.]

पउमचरियं और **तिलोयपण्णत्ति** से पहले जहां तक मेरा अंदाज है, तीर्थंकरों की संख्या व नाम नहीं मिलते। उमास्वाति ने **तत्त्वार्थाधिगम सूत्र** में स्वर्ग, नरक, नदियों आदि के नाम तो गिनाए, किन्तु तीर्थंकरों के नाम व संख्या नहीं बताए। अब जब नाम व संख्या छठी शताब्दी में जाकर निश्चित हुई * तो फिर कवि पुराणकारों को उनके जीवन वृत्तान्तों में संभाव्य और क्षम्य कल्पना का उपयोग करना पड़ा है। ऋषभदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर भगवान के जीवन में तो विशेषताएं साफ दिखाई दे रही हैं इसलिए उनके जीवन चित्रण कुछ अलग से लगते हैं वर्ना कुछ घटनाओं को छोड़कर उनके व अन्य तीर्थंकरों के जीवन में भारी समानता है। सब के पंच कल्याणक एक-सा ही हैं। इन जीवन परिचयों से पता चलता है कि तीर्थंकरों को केवलज्ञान होते ही उनकी दिव्य ध्वनि के प्रसारण और उसका सब जीवों के लिए उनकी भाषा में रूपान्तरण करने के लिए एक ऐसे सभामण्डप की रचना की जाती थी जो केवल देव ही कर सकते थे, मानवों के बस की बात नहीं थीं। यद्यपि दिगम्बर आम्नाय में ऐसी कोई बात नहीं है, यह शंका कि प्रथम शासन प्रवर्तक ने कोई उपदेश नहीं दिया, इसलिए हुई जान पड़ती है कि श्वेताम्बर आम्नाय में महावीर और गौतम के प्रश्न और उत्तरों के द्वारा महावीर के उपदेशों का वर्णन किया गया है। महावीर ऐतिहासिक तीर्थंकर हैं इसलिए उनके प्रश्नोत्तर संवाद मिल गए, किन्तु दूर अतीत में यदि कोई संवाद ऋषभदेव व उनके गणधरों के बीच हुआ भी हो तो हमें कोई रिकार्ड उपलब्ध नहीं हैं।

---

* [**पउमचरियं, तत्त्वार्थसूत्र** और **तिलोयपण्णत्ति** ईस्वीं सन् की पहली-दूसरी शती की रचना मानी जाती हैं, परन्तु उपलब्ध प्रतियों एवं अन्य ग्रन्थों में सन्दर्भो के आधार पर उनका ज्ञात स्वरूप प्रायः ५वी शती ई. से पूर्वतर नहीं प्रतीत होता। **पउमचरियं** रविषेण के **पद्मचरित** (६७६ ई.) से पूर्वतर है, **तत्त्वार्था- धिगमसूत्र** उस पर पूज्यपाद की **सर्वार्थसिद्धि** टीका (ल. ४५० ई.) से पूर्वतर है, और **तिलोयपण्णत्ति** में यद्यपि अधिकारिक सूचना वीर संवत् ६८३ या ७०३ (=१५६ या १७६ ई.) तक की

ही दी है, इसका उपलब्ध संस्करण ५०० ई. के बाद का है। (देखें, Dr. Jyoti Prasad Jain : **The Jaina sources of the History of Ancient India,** pp.131-42) – श.का.]

यह सही है कि जो विशाल जैन दार्शनिक साहित्य आज उपलब्ध है वह अन्य दर्शनों के संघर्ष से उत्पन्न समय-समय की जरूरतों को पूरा करने के लिए रचा गया और विस्तार लेता गया। यह जो विकास-विस्तार की प्रक्रिया हुई है वह अवश्य ही महावीर के पश्चात हुई है और अन्य दर्शनों से हमारा दर्शन क्यों भिन्न है और हमारे दर्शन की गहराईयां कितनी हैं, यह जानने और समझाने के लिए इस सब की जरूरत थी और आज भी है। हम सब मिलकर यह शंका-समाधान आखिर इसीलिए ही तो कर रहे हैं, इसीलिए तो है **शोधादर्श** और अन्य पत्रिकाएं, किताबें, प्रवचन, भाषण आदि।

जिसे आज हम जैन दर्शन के नाम से जानते-पहचानते हैं उसके मूल संस्थापक प्रथम जिनेन्द्र को नाम ऋषभदेव दें या अन्य कोई नाम, मेरे हिसाब से उस व्यक्ति को आदिनाथ कहना ही सबसे ज्यादा मौजू है। अब ये आदिनाथ कब हुए, दूर-दूर अतीत में जिसकी कल्पना करना अत्यन्त कठिन काम है। यह शख्सियत प्राक्-ऐतिहासिक है। जब तक कोई ठोस विद्वज्जन-मान्य प्रमाण न मिले तब तक तो यही मानना होगा कि जो परम्परा आज दिखाई दे रही है वह एक ऐसी सरिता के समान है जिसमें स्रोत की खोज में उल्टे चलें तो हम महावीर या अधिक से अधिक नेमिनाथ के घाट से आगे नहीं जा पा रहे हैं। सिन्धु घाटी सभ्यता के अवशेषों में हम जो ढूंढ रहे हैं वह केवल हमारी कल्पना है और जब तक उसकी लिपि पढ़ न ली जाए केवल कयास मात्र है आज की तारीख में।

प्राचीनता मात्र में श्रेष्ठता नहीं हैं और ना नवीनता में बुराई। मैं नहीं समझ पाता कि अति प्राचीन या अर्वाचीन होने से क्या फर्क पड़ता है? केवल अहं की तुष्टि होती है और अहम् आत्म द्रव्य के अलावा जैन धर्म को स्वीकार नहीं है – यही खूबी है अनेकान्त की। ईसाई धर्म और इस्लाम नए-नए हैं, किन्तु इससे उनके महत्व में क्या फर्क पड़ता है?

जिसे हम जैन धर्म कहते हैं यह नाम कब पड़ा? किसने दिया यह नाम? सवाल दिलचस्प लगता है। आजकल तो 'धर्म' शब्द भी ठीक नहीं समझ रहे कुछ लोग और कहते हैं धर्म तो शाश्वत है, बाकी सब है पंथ या सम्प्रदाय। खैर, साहित्य की खोज से यह पता चल सकता है कि 'जैन धर्म' नाम कब से चला। जहां तक मेरा अंदाज है **पद्मचरित** में जैन धर्म का जिक्र इस तरह आया है-

अधुना वर्त्तते क्वासौ भरतो गुणभूषणः
तरूणेन सता येन शरीरे प्रीतिरूज्झिता
इष्टं बन्धु जनं त्यक्त्वा राज्यं च चिदशोपमम्
सिद्धार्थी स कथं भेजे **जैन धर्म** सुदुर्धरम्। – ८८/१३-१४

(अब कहां है वैसा गुणभूषण भरत जिसने जवान होते हुए भी शरीर में प्रीति छोड़ दी और इष्ट बंधुजन और स्वर्ग के समान राज्य को छोड़कर किस प्रकार उसने सिद्ध होने के लिए दुर्धर जैन धर्म को धारण किया।)

और रविषेण का यह **पदमूचरित** है सन् ६७६ ई. के आस-पास की रचना। दर असल 'श्रमण धर्म', 'अर्हत् धर्म' ये शब्द 'जैन धर्म' की उस विशालता को सीमित करते हैं जो जैनधर्म शब्द की लम्बी-लम्बी वाहों में ही उद्घाटित होती है **गीता** के कृष्ण के विराट रूप की तरह।

दिगम्बर और श्वेताम्बर आम्नायों में प्रचलित मंगल वचन में 'जैन धर्म' का उल्लेख है -

मंगलम् भगवान वीरो, मंगलम् **गौतमो गणी**।

मंगलम् **कुंदकुंदाद्यो,** जैन धर्मोऽस्तु मंगलम्।। (दिगम्बर)

अथवा

मंगलम् भगवान वीरो, मंगलम् **गौतमो प्रभु**।

मंगलम् **स्थूलभद्राद्यो,** जैन धर्मोऽस्तु मंगलम्।। (श्वेताम्बर)

मगर यह मंगल वचन केवल १००-१५० साल पुराना लगता है क्योंकि सातवीं-आठवीं शताब्दी में जो मंगल वचन प्रायः पाया जाता है वह अकलंक देव रचित इस प्रकार है -

श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन शासनम्।।

शोध विमर्श

खारवेल का हाथीगुम्फा शिलालेख

-**डॉ. शशि कान्त**

१. प्रतीक-चिन्ह (Symbols) :

शिलालेख की पंक्ति १ व २ से पहले **मुकुट** और उसके नीचे पंक्ति ३-५ के पहले **स्वस्तिक,** पंक्ति ३ के अन्त में **नन्दिपद** और अन्तिम पंक्ति १७ के अन्त में **ध्वज** के प्रतीक-चिन्ह हैं। प्रतीक १ और ४ के विषय में डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव ने विचारणा सूचित की है कि –

These are **Srivatsa** and **Vaijayanti** or **Dhvaja** respectively; both are religious as well as auspicious symbols. The first **srivatsa** coupled with **svastika** serves as invocatory words **`svasti-sri'** of the later periods. Both of them placed in the beginning were meant for auspiciousness, welfare, happiness and prosperity. It is the most sacred symbol particularly among the Jains who regard it as the **lanchana** of the Jina or Tirthankara. Similarly, the fourth is a symbol of **vaijayanti** or **dhvaja** (banner), also an auspicious symbol. It is surrounded by a railing **(vedika)** which itself is an evidence of its religious import.

ऐसी विचारणा मेरे पूर्वगामी विद्वानों की भी रही क्योंकि उन्होंने इस शिलालेख को एक धार्मिक लेख समझ लिया, अतः उसमें सभी प्रतीक-चिन्ह धर्म से सम्बन्धित होने चाहियें। वास्तविकता इससे भिन्न है। यह धर्म शासन (religious edict) नहीं है, और ना ही इसमें कोई धर्मोपदेश, दान-धर्मस्व या गुरु-स्तुति है। यह विशुद्धतः एक राजकीय अधिसूचना (royal proclamation) है जिसमें खारवेल ने अपना संक्षिप्त जीवन वृत्त और राजा के रूप में किये गये अपने अभियानों और प्रजाहित के कार्यो का वस्तुपरक विवरण संक्षेप में दिया है। अतः मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि - the first and fourth symbols which are respectively placed at the beginning and the end of the record, do not appear to be religious symbols and perhaps represent the royal style of beginning and closing a record by appropriate sealings. Taken in that light the first symbol is probably a replica of crown and the fourth, that of royal standard. (ref. p. 72 of my book)

डॉ. श्रीवास्तव ने अपनी पुस्तक **भारतीय कला प्रतीक** में पृ. ६२-६४ पर 'श्रीवत्स' के सभी उपलब्ध ४६ रुपों का रेखांकन दिया है। शिलालेख में अंकित चिन्ह उनसे साम्य नहीं रखता। यह भी ध्यातव्य है कि 'श्रीवत्स' का अंकन १ली शती ईस्वी से पहले का अभी प्राप्त नहीं है, तीर्थंकर मूर्ति पर इसका अंकन भी उससे पहले का नहीं है और प्रतिमाशास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थों में तीर्थंकर प्रतिमा की पहचान के विशिष्ट लक्षण या लांछन के रूप में इसका उल्लेख और भी काफी बाद का है। पटना के पास लोहानीपुर से २ नग्न धड़ (torso) मिले हैं जिन्हें मौर्यकालीन व प्राक्मौर्यकालीन तीर्थंकर

प्रतिमा का अवशेष माना गया है, उन पर यह लांछन नहीं है। स्पष्ट ही खारवेल के समय ईस्वी पूर्व २री शती में जैन प्रतीक-चिन्ह के रूप में श्रीवत्स का प्रचलन नहीं था।

चौथे चिन्ह की वेदिका में स्थित चैत्य वृक्ष, वैजयन्ती या ध्वज के प्रतीक रूप में यहां सार्थकता नहीं है। राज्य-ध्वज (royal standard) राज्य-सत्ता का प्रतीक है और राज्यशासन के अन्त में इसका अंकन सोद्देश्य है जो मुहरबन्दी का-सा काम करता है।

प्रथम और चतुर्थ दोनों ही प्रतीक-चिन्हों का राज्यसत्ता से सम्बन्ध है, उनका यहां धार्मिक या मांगलिक महत्व नहीं हैं। मुकुट के नीचे स्वस्तिक और उसी के समक्ष नन्दिपद या नन्द्यावर्त मांगलिक चिन्ह हैं जो लेख को शुभ या मंगलकारी सूचित करने के लिए यथेष्ट थे। राज्यशासन के प्रारम्भ और अन्त में राज्य-चिन्ह होना ही उपयुक्त था। मात्र इसलिए कि खारवेल जैन धर्म का अनुयायी था उसका राजत्व समाप्त नहीं हो जाता और उसके द्वारा एक शासनादेश के प्रख्यापन पर शासन की परम्परा का अनुपालन उचित ही था।

२. गुण्टुपल्ली अभिलेख, पिथुंड :

आन्ध्र प्रदेश के पश्चिमी गोदावरी जिले में गुण्टुपल्ली नामक ग्राम में एक प्राचीन ध्वस्त मण्डप के चारों स्तम्भों पर ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण लेख पाया गया है जिसे श्री आर. सुब्रह्मण्यम् ने सम्पादित और प्रकाशित किया है। एक स्तम्भ पर ५ और शेष तीन स्तम्भों पर ६ पंक्तियों में उत्कीर्ण यह लेख निम्नवत है -

महाराजस कलिंगाधिपतिस
महिसकाधिपतिस म-
हामेखवाहनस-
सिरि सदस-लेख-
कस चुलगोमस मंड-
पो दानं

अर्थात्, महाराज कलिंगाधिपति महिसकाधिपति श्री महामेघवाहन के संदेश-लेखक चुलगोम का मंडप-दान।

लिपि-लेख की दृष्टि से यह लेख खारवेल के हाथीगुम्फा लेख का समसामयिक है। उदयगिरि पर सर्पगुम्फा और पावनगुम्फा में चूलकम का दान-लेख है, अतः चुलगोम भी एक तत्कालीन नाम है। चुलगोम एक संदेश-लेखक था, जिसका पद राजा को गोपनीय सूचना देने वाले अधिकारी के सदृश रहा होना प्रतीत होता है। मौर्य प्रशासन में अभिसूचना संचार की व्यापक व्यवस्था रही अन्यथा इतना विशाल साम्राज्य चल नहीं सकता था, और खारवेल ने उसी परम्परा को प्राप्त किया था अतः उस व्यवस्था को बनाये रखा होगा, इसमें संशय नहीं। अभिसूचना संचार व्यवस्था की कुशलता ही तमिलदेशों के संघ को भेदने में और अन्य विजय अभियानों में सफलता में उसके लिए विशेष कारक

रही होगी। संदेश-लेखक के पद का यह प्रचीनतम अभिलेखीय प्रमाण है।

यह लेख खारवेल का उल्लेख करता है, ऐसा नहीं कहा जा सकता। उदयगिरि पर पातालपुर-गुम्फा में प्राप्त लेख में कूदेपसिरि (जो संभवतः उसका उत्तराधिकारी रहा हो।) का विरुद भी 'महाराज कलिंगाधिपति महामेघवाहन' है। अतः खारवेल के किसी निकट उत्तराधिकारी को, जो कूदेपसिरि भी हो सकता है, यह लेख सूचित करता प्रतीत होता है। 'महिसकाधिपति' से यह सूचित होता है कि यह लेख खारवेल द्वारा पिथुंड की विजय किये जाने के बाद का है क्योंकि यही एक विजित प्रदेश उसने अपने राज्य में मिलाया था। यह कलिंग के दक्षिण में, गोदावरी नदी के पार, समुद्र के तट तक विस्तृत रहा प्रतीत होता है। इस लेख से विदित होता है कि इस प्रदेश का नाम महिसक, महिष्क या माहिष्क था ओर इसकी राजधानी पिथुंड थी। श्री सुब्रह्मण्यम् का विचार है कि नगर-विन्यास के कारण नगर का नाम 'पिथुंड' (पृथु+अण्ड=अण्डाकार विस्तीर्ण) रहा, जिसका तमिल समानार्थी 'गुड्डुपल्ली' है और वर्तमान में वही 'गुण्टुपल्ली' बन गया प्रतीत होता है। उनका गुण्टुपल्ली का पिथुंड से चीन्हना समीचीन प्रतीत होता है।

३. तमिर-दह-संघातं, यवनराज-विमक :

डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त ने १९७९ में प्रकाशित अपनी पुस्तक **प्राचीन भारत के प्रमुख अभिलेख** में पृ. ९८ से ११७ पर हाथीगुम्फा अभिलेख का विवेचन किया है। यह पुस्तक हमें डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव के सौजन्य से देखने को मिली। इसमें उन्होंने मेरी पुस्तक के १९७१ के संस्करण को विशेष रूप में सन्दर्भित किया है और इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। यदि २००० में प्रकाशित २रे संस्करण के पहले यह पुस्तक मेरे संज्ञान में आ जाती तो वहीं इसकी विवेचना करता। उनकी ३ विशिष्ट संवीक्षायें हैं –

१. वर्ष महावीर संवत में नहीं हो सकते।

२. 'तमिर दह' को 'तमिल देश' के स्थान पर 'तिमिर हृद' मानना ही उचित होगा।

३. खारवेल का अभियान यमुना नदी तक नहीं हो सकता क्योंकि कोसल, वत्स और पंचाल का कोई उल्लेख नहीं है, और पाठ 'यवनराज विमक' या 'विमिक' है जिसका तात्पर्य कुषाण नरेश विम कदफिस से है।

महावीर संवत विषयक संवीक्षा के सम्बन्ध में यहां विचार नहीं करेंगें। इसका विस्तृत विवेचन अपनी पुस्तक में पृ. ३५-४६ पर The Date of the Inscription and its Author के अन्तर्गत मैं कर चुका हूँ और उसे वहां देखा जा सकता है।

पंक्ति ११ में ग्यारहवें वर्ष के कार्यकलापों में उल्लेख है **जनपद-भावनं च तेरस-वस-सत-कतं भिंदति तमिर-दह-संघातं,** अर्थात्, 'तथा अपने राज्य के कल्याण की दृष्टि से ११३ वें वर्ष में बने तमिल देशों के संघ को भेदते हैं'। गोदावरी नदी के काठे में पिथुंड पर आधिपत्य कर लेने के बाद कृष्णा नदी के पार दक्षिण में तमिल देशों का संघ खारवेल का प्रतिद्वन्दी था और इस संघ का विघटन उसके राज्य की सुरक्षा के लिये आवश्यक था। उक्त वर्ष में खारवेल के दक्षिण दिशा में अभियान

का उल्लेख है। पहले वह गोदावरी नदी पार करके पिथुंड को विजय करता है और तब कृष्णा नदी पार स्थित तमिलदेशों के संघ की चिन्ता करता है। डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल ने भी इसे इसी अर्थ में स्वीकार किया है।

डॉ. बेनीमाधव बरूआ ने पाठ 'तिमिर ह्रद संघातं' मानकर उसका अनुवाद `Destroyed the accumulation of dark swamps that grew up in thirteen and hundred years and became a cause of anxiety to the country' किया है। डॉ. दिनेश चन्द्र सरकार ने अपना मत न देकर संस्कृत रूपान्तर 'तिमिर ह्रद संघातम्' और 'त्रमिर देश संघातम्?' दिया है। डॉ. गुप्त का मत है कि "हमारी दृष्टि में तिमिर-ह्रद को किसी भी कारण 'त्रमिर देश' के भाव में ग्रहण नहीं किया जा सकता। ह्रद को तालाब के भाव में ही लिया जाना चाहिये। अतः हमारी दृष्टि में यहां किसी बड़े तालाब की सफाई कराने का उल्लेख है।" तथापि पूर्वगत पैराग्राफ में जो विवेचन किया गया है, उसके परिप्रेक्ष्य में डॉ. गुप्त का मत समीचीन नहीं कहा जा सकता।

पंक्ति ८ में आठवें वर्ष के कार्यकलापों के अन्तर्गत राजगृह के राजा को पीड़ित कर मथुरा को विमुक्त कराके यमुना नदी तक जाने का उल्लेख है। **विपमुंचितु मधुरं अपयातो यमना (नदीं)** में **अपयातो** क्रिया किसी भौगोलिक विन्दु का स्पष्ट संकेत करती है, न कि किसी व्यक्ति का। अपनी पुस्तक में मानचित्र में अभियान के मार्ग का निर्देश मैंने किया है। वह गोरथगिरि, जो राजगिर के पास गंगा नदी के दक्षिण में स्थित है, से गंगा के नीचे-नीचे और फिर संगम के बाद यमुना नदी के भी नीचे-नीचे चलता हुआ मथुरा जा सकता है जो कि यमुना के पश्चिमी तट पर है, और इसके लिए उसे अयोध्या और पंचाल के राज्यों से नहीं गुजरना पड़ता, उसे केवल वत्स राज्य से गुजरना होता और चूंकि बहसतिमित को जो वत्स और मगध दोनों का अधिपति था, पराभूत किया जा चुका था, इस प्रदेश से गुजरने में कोई बाधा नहीं थी।

डॉ. गुप्त का अनुमान है कि पाठ **यवनराज विमक** या **विमिक** है और उसका तात्पर्य कुषाण नरेश विम कडफिसिस से है। यहां यह उल्लेखनीय है कि विम कडफिसिस, जो कनिष्क (७८-१०१ ई.) का पूर्वज रहा, कभी मथुरा आया ही नहीं। उसका राज्य पश्चिम चीन में खोतान, यारकन्द और काशगर को समाहित करता था, उसके बाद पश्चिम उज़्बेगिस्तान (बल्ख, समरकन्द), उसके नीचे उत्तरी अफगानिस्तान और पूर्व की ओर पाकिस्तान के पश्चिमोत्तर में सिन्धु नदी के उसी पार पेशावर तक उसका प्रसार था और अधिकतम सिन्धु के इस पार रावलपिंडि से पश्चिम स्थित तक्षशिला तक ही अभियान की पूर्वतम सीमा थी। कनिष्क का केन्द्र भी बल्ख ही था और पेशावर (पुरुषपुर) उसका पूर्वी प्रान्त था जहां उसने बौद्धों की चतुर्थ संगीति आहूत की थी, परन्तु उसने अपने साम्राज्य का प्रसार यमुना के पश्चिमी तट तक कर लिया था और उसके वंशज हुविष्क व वासुदेव ने मथुरा को ही अपना केन्द्र बनाया। अतः विम कडफिसिस के मथुरा में होने की परिकल्पना को गंभीरता पूर्वक लेना समीचीन नहीं होगा।

४. **कलिंग-जिन** का पूजन, **कुमारी पर्वत** निर्वाण क्षेत्र, **निसीदीया** व **निसीया, द्वादशांग** पाठ के लिए सम्मेलन

डॉ. एम. डी. वसन्तराज ने मेरी पुस्तक का पारायण कर अपनी संवीक्षायें भेजी हैं जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

पंक्ति १२ में नन्दराज द्वारा लाई गई कलिंग-जिन की पूजा करने का उल्लेख है और उसके बाद **गहरतनानि पडीहारेहि अंग-मगध-वसुं च नेयाति** है। डॉ. वसन्तराज का विचार है कि गृह-रत्नादि से जिन विम्बकी पूजा करने का यहां उल्लेख है। परन्तु **पडीहारेहि** 'परिहरति', 'अपहरण किये गये' या 'छीन लिये गये' का अर्थ रखता है और यहां क्रियापद **नेयाति** (ले जाता है) है। अतः पूजा-सामग्री का आशय इस अंश से नहीं लिया जा सकता।

डॉ. वसन्तराज ने **णिव्वाण भक्ति** की गाथा -

जसरह-रायस्स सुआ पंचसया कलिंग-देसम्मि।
कोडिसिलाए कोडि-मुणी णिव्वाण गया णमो तेसिं।।
(जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पांचसौ लहे।
कोटिशिला मुनिकोटि प्रमान, वदंन करूं जोर जुगपान।।)

- **ज्ञानपीठ पूजाञ्जलि,** १९६९, पृ. ४२६, ४३०

की ओर ध्यान आकर्षित किया है और यह सुझाव दिया है कि पंक्ति १४ व १५ में **काय-निसीदीया** और **अरहत-निसीदीया** उन स्थलों को सूचित करते हैं जहां से मुनियों ने निर्वाण लाभ किया, अतः इससे कलिंग देश के निर्वाण क्षेत्र होने की पुष्टि होती है। ऐसा सोचने में कोई बाधा नहीं है और कुमारी पर्वत को पंक्ति १४ में **सुपवत** (= शुभ पर्वत) कहा भी है, परन्तु इसको **णिव्वाणभक्ति** का पुष्टिकर्ता कहना उचित नहीं होगा क्योंकि इन गाथाओं के रचनाकार और रचनाकाल का काफी खोजबीन करने पर भी कोई पता नहीं चल सका। इसका भाषानुवाद सं. १७४१ (१६८४ ई.) में आगरा निवासी 'भैया' भगवती दास ने **निर्वाणकाण्ड (भाषा)** के नाम से किया था, अतः प्राकृत गाथाओं की रचना उसके पूर्व हुई। इसका रचनाकाल किन्हीं भट्टारक जी की कृपा से कुछ क्षेत्रों को प्रभावना प्रदान करने की दृष्टि से १२वीं-१३ वीं शती ई. में किया गया प्रतीत होता है जो श्री शत्रुंजयगिरि, सोनागिरि, बड़वानी आदि के नामोल्लेख से प्रतीत होता है। गाथा में पूरे कलिंग देश को ही निर्वाणभूमि बता दिया है जैसे कि वह भी श्री सम्मेद, शत्रुंजय, बड़वानी आदि के सदृश कोई एक स्थल विशेष हो। अतः इस **णिव्वाण भक्ति** (निर्वाण काण्ड) की खारवेल के शिलालेख से कोई प्रासंगिकता प्रतीत नहीं होती।

शिलालेख में पंक्ति १४-१५ में **निसीदीया** और **निसीया** - दो शब्दों का प्रयोग किया गया है जो स्पष्ट ही समानार्थक नहीं हैं। निसीदीया 'निषिद्या' का पर्यायवाची है जिसका तात्पर्य Relic Memorial या समाधि से रहा प्रतीत होता है, और **निसीया** या निसिया चैत्य या स्तूप का पर्यायवाची है जो प्रायः साधुओं के लिए स्थविरावास स्थल विहार या मठ में अथवा उसके पास बनाये जाते थे।

डॉ. वसन्तराज ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि जैन परम्परा में, न तो दिगम्बर ही और ना ही श्वेताम्बर में, कहीं भी किसी राजा द्वारा **मुनियों का सम्मेलन** आमंत्रित करने का उल्लेख नहीं है। वास्तव में इन दोनों ही परम्पराओं में खारवेल का भी उल्लेख नहीं है। जब ऐसा प्रभावशाली राज्याश्रय प्राप्त हो तभी इस प्रकार का सम्मेलन आयोजित किया जाना संभव था। खारवेल के प्रायः छह दशक पहले शक्तिशाली मौर्य सम्राट अशोक ने बौद्ध संघ में विघटन को रोकने के लिए पाटलिपुत्र में बौद्ध भिक्षुओं की संगीति बुलाई थी जिसमें बुद्ध वचनों का संकलन किया गया था और विभेदकारी तत्वों के लिए दण्ड का विधान भी किया गया था। खारवेल ने जैन संघ में विघटन को रोकने के उद्देश्य से मुनियों का सम्मेलन बुलाया था ताकि अवशिष्ट **द्वादशांग श्रुत** को पाठ कराके और प्रश्नादिक द्वारा विवेचन कराके संकलित कर लिया जाय। यह उस समय की परम्परा के अनुरूप था और तब तक जैन संघ कुछ साधु-आचार्यों मात्र की धरोहर नहीं था वरन् प्रबुद्ध श्रावक भी श्रुत में पारंगत और उसके प्रति चिन्तित थे। बौद्धों में हीनयान और महायान संघ भेद होने पर उन्होंने ऐतिहासिक तथ्यों को विस्मृत नहीं किया, परन्तु जैनों में जब लगभग ७२ ई. में औपचारिक रूप से संघ भेद हो गया तो, ऐसा प्रतीत होता है कि, दोनों ही दिगम्बर व श्वेताम्बर परम्परा के प्रस्तोता आचार्यों ने पूर्व में किये गये समन्वय के प्रयासों को भुला देना ही अपने लिए श्रेयस्कर समझा। इसके अतिरिक्त खारवेल जैसे प्रतापी शासक को और उसके द्वारा **द्वादशांग श्रुत** के संकलन के प्रयास को पूरी तरह जैन साहित्य में विस्मृत कर दिये जाने का और कोई औचित्य नहीं प्रतीत होता।

५. पाटलिपुत्र, **गदभ**, **राजसेयं**, आखेट, **कपरूख** :

जस्टिस एम. एल. जैन ने मेरी पुस्तक का ही विचार पूर्वक पारायण नहीं किया, वरन् **शोधादर्श**-४१ में विमर्श को भी सम्यक् रूप से देखा, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूं।

मेरे विचार से **पाटलिपुत्र** का उल्लेख न होना इस बात का संकेत नहीं है कि खारवेल वहां तक नहीं पहुंचा। पाटलिपुत्र गंगा के किनारे था और अजातशत्रु के समय से मगध की राजधानी भी था। मगध के राजा बहसतिमित को खारवेल ने पराजित किया था और गंगा नदी में अपने हाथी और घोड़ों को पानी पिलाया था, तथा वहीं संनिवेश में कलिंग-जिन की पूजा की थी। संनिवेश का अर्थ मंदिर भी है और मुफ़स्सल, वाह्य प्रान्तर या vicinity भी है। उससे यह इंगित होता है कि कलिंग-जिन का मंदिर राजधानी (पाटलिपुत्र) के वाह्य प्रदेश में स्थित था। यह बहुधा हुआ है कि विजेता ने विजित की अभ्यर्थना पर अथवा उत्कोच देने पर उसकी राजधानी को छोड़ दिया, और ऐसा ही मगधराज बहसतिमित के प्रति भी खारवेल द्वारा किया गया हुआ प्रतीत होता है।

पंक्ति ११ में **पिथुडं गदभ नगलेन कासयति** के संबंध में जस्टिस साहब का विचार है कि इसका अर्थ "पिथुंड (कलिंग) में उसने गर्दभ (धान विशेष) की खेती के लिए हल चलवाये" होना चाहिए। तदपि **गदभ** का अर्थ इस प्रसंग में गर्दभ (धान विशेष) नहीं है। यह ध्यातव्य है कि **विविध तीर्थकल्प** १४वीं शतीं ई. की रचना है और उसमें उल्लिखित पाटलिपुत्र के आस-पास उगने वाले गदर्भिका धान से यहां कोई संबंध नहीं है। पिथुंड भी कलिंग नहीं है। यह ११ वें वर्ष का विवरण है

और पाटलिपुत्र वह अगले १२ वें वर्ष जाता है। गदहों के हल चलवाना, पराजय की सूचक एक विशिष्ट प्रथा रही है।

पंक्ति ६ में **राजसेयं** के पाठ भेद **राजसूयं** को जस्टिस साहब ने इंगित किया है। राजसूय यज्ञ के सम्पन्न किये जाने में व्यावहारिक दृष्टि से कोई बाधा नहीं है जब सर्वग्रहण अनुष्ठान किया जा सकता है, परन्तु बाधा शब्दावली की है – क्रियापद 'संदंसयंतो' 'प्रदर्शित करता है' का अर्थ देता है और जबकि राज्य के ऐश्वर्य का प्रदर्शन किया जा सकता है, राजसूय यज्ञ का प्रदर्शन कोई अर्थ नहीं देता।

खारवेल एक विजय अभियान का प्रेमी, विजेता और प्रतापी शासक था, ऐसा उसके अभिलेख से स्पष्ट है। अतः उसके लिए आखेट का शौक होना कोई विचित्र बात नहीं होगी। मेरी पुस्तक के चित्रफलक XVIII में रानीगुम्फा में चित्रित आखेट-दृश्य का चित्र है। परन्तु इस अंकन को खारवेल का जीवन्त चित्रण मान लेने का कोई आधार नहीं है। प्रायः इन चित्रांकनों को समकालीन नहीं माना जाता।

पंक्ति ६ में **कपरूख** किसी वृक्ष को सूचित नहीं करता जिसे खारवेल कलिंग ले गया हो। यह एक मांगलिक प्रतीक को सूचित करता है। पल्लवभार से युक्त कल्पवृक्ष भारतीय परम्परा में सब प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करने वाला एक मांगलिक प्रतीक है जिसका शोभायात्रा के आगे होना विशेष शुभ का सूचक माना जाता था। संदर्भ भी मात्र इतना ही सूचित करता है।

क्षणिकाएं

- रमा कान्त जैन

अभी तक सुनते थे केवल 'वीर',
अब 'अतिवीर' यहाँ होने लगें हैं।
'सन्मति वीर'-'महावीर' के दर्शन हेतु
पलकें बिछाये अब हम खड़े हैं।।

# # #

आत्म-प्रचार का शौक उन पर इस कदर है छाया,
अपना फोटो, इकलौती बात संग, विभिन्न पत्रों में है छपवाया
ताकि जान लें सब कि यह भी हैं कोई महामाया।।

# # #

कौन कहता है मूल्यों का हुआ है अवमूल्यन,
अरे अब तो भ्रष्टाचार शिष्टाचार हो गया है।
जिसे मानते थे कभी हमारे पूर्वज अधर्म यहाँ,
वही तो अब असली धर्म हो गया है।।

# # #

'बड़े बाबा' में दरार आई है
या भक्तों-बीच दरार आई है?
किसके इशारे पर हो रहा सब,
यह समझने में मति चकराई है।।

# # #

महाजनों की सभा महासभा
और महाजनों की समिति महासमिति कहलाती है।
दिशा अम्बर में खोजती - खोजती अपनी,
ये दिगम्बर होती जाती हैं।
नीति-अनीति में समभाव अपना
ये कीर्ति-पताका फहराती जाती हैं।।

# # #

शास्त्री परिषद और विद्वत् परिषद् विद्वानों की सभा कहलाती हैं,
इनमें अन्तर्कलह, ईर्ष्या व परस्पर वैमनस्य की गन्ध आती है।
यह बात पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित समाचारों से समझ आती है।।

# # #

क्यों बनें उपहास के पात्र हम,
करें कुछ ऐसा, इससे बचें हम !

जनगण नादान, टोपी महान!

- **राजीव कान्त जैन**

आई.आर.एस.एस.ई., सीनियर डिवीजनल सिग्नल एण्ड टेलीकॉम इंजीनियर;

रेलवे अधिकारी बंगला नं. ५, कोठी कम्पाउन्ड, राजकोट-३६० ००१

(रचनाकार एक प्रतिभाशाली युवा इंजीनियर हैं। बी.टेक. परीक्षा ससम्मान उत्तीर्ण करने के बाद तुरन्त ही प्रतियोगितात्मक परीक्षा के आधार पर इण्डियन टेलीफोन इन्डस्ट्रीज़ में चयनित हुए और तत्पश्चात् यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा आयोजित इंजीनियरिंग सर्विसेज़ एक्ज़ामिनेशन में प्रथमतः दूरदर्शन इंजीनियरिंग सर्विस के लिए और तत्पश्चात् इण्डियन रेलवे सर्विस ऑफ़ सिग्नल एण्ड टेलीकाम इंजीनियर्स के लिए चयनित हुए। सम्प्रति पश्चिम रेलवे के अन्तर्गत राजकोट में सीनियर डिवीजनल इंजीनियर हैं। अपने क्षेत्र में आविष्कार-क्षमता के लिए विख्यात हैं। उनके द्वारा प्रायोजित Dual Tone Multi Frequency Remote Monitoring System प्रतिष्ठित Electronics For You वैज्ञानिक पत्रिका के EFY's Electronics Projects, Vol. 18, के लिए चुना गया है।

साथ ही, उनकी साहित्यिक रूचि है और हिन्दी के प्रति निष्ठा है जिसके लिए वह अपने विभाग में सुविख्यात हैं। मुम्बई की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका **समाज प्रवाह** में, तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में और **शोधादर्श** में, उनकी काव्य रचनायें प्रायः प्रकाशित होती रही हैं जिनमें गहन संवेदना के साथ राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखर होता है।

प्रस्तुत कविता में 'टोपी' का व्यंजनार्थ सत्ता का सूचक है। 'टोपी पहनाने' का अर्थ 'मूर्ख बनाना' होता है। शेष भाष्य सहृदय पाठक स्वयं ही कर लेंगे। - श.का.)

राष्ट्रपिता ने सी टोपी,
नेहरू ने सर ली टोपी।
शास्त्री, सुभाष, पटेल, प्रसाद
सपूतों सर सजी टोपी।

देश दिशा बनी टोपी,
इन्दिरा ने लिया सर आंचल।
पालतू-फालतू में बंटी टोपी,
काले धन में बिकी टोपी।

शास्त्री-सुभाष की फटी टोपी,
टोपी ने पाले गुंडे।
गुंडों ने छीनी टोपी,
अड्डों में बिखरी टोपी।

कालों में एक-सी संवरी टोपी,
विदेशी फर की भी मिलती टोपी।
कौव्वी से सेवाती अंडे कोयलिया,
जाल में जकड़ी रोये सोनचिरैया।

मां का करवाते 'रेप',
टोपी मदमस्त नाचे 'रैप'।
तिनके-तिनके जोड़ा घर-बार,
घर लूटते घर के चौकीदार।

विश्व-बाजार बेचती आन,
टोपी होती कीमती धनवान।
मत लो इनसे पंगा,
देश को करे ये नंगा।

छीने सबसे कपड़ा-रोटी,
टोपी पहनाये सबको 'टोपी'।
टोपी करे ये बड़े काम –
सर हो, मिले सम्मान,
हाथ लो, मिले भिक्षादान।

दूर दिखे न नंगा,
टोपी सर रहे, मान चंगा।
विश्व ग्राम के चौराहे,
सर की टोपी हाथ ले,
नंगे झुक करें सलाम –
'अल्लाह के नाम दे चौधरी,
तुझको बरकत देगा राम'।

टोपी जुटी है जी-जान,
भीख से बने भारत महान।
न समझे बस जनगण नादान,
सब जन नादान, हम नादान।

टोपी तो टोपी है,
गोरी-काली, नीली-पीली,
गोल-तिकोनी और झालर वाली,
रंग-ढंग बदलती टोपी है।
टोपी का मर्म नहीं नेक,
पर सबका धर्म है एक।
जनगण नादान, टोपी महान!
मंगलमय हो नया विधान!!

डॉ. शशि कान्त को 'बीसवीं शताब्दी रत्न' सम्मान

- **डॉ. बीजेन्द्र कुमार जैमिनी**

निदेशक, जैमिनी अकादमी;

५५५, सेक्टर ६, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, पानीपत-१३२ १०३

हिन्दी दिवस की पूर्व संध्या पर दिनांक १३ सितम्बर, २००० ई., को पानीपत में सामुदायिक केन्द्र में पद्मश्री डॉ. लक्ष्मी नारायण दुबे की अध्यक्षता में आयोजित भव्य समारोह में, हिन्दी भाषा/समाज की अमूल्य सेवा हेतु **डॉ. शशि कान्त** को **बीसवीं शताब्दी रत्न** सम्मान से सम्मानित किया गया।

इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और श्रीमती अनन्तमाला जैन के ज्येष्ठ पुत्र डॉ. शशि कान्त का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर में १२ फरवरी, १९३२ ई., को हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा मेरठ में हुई, माध्यमिक शिक्षा डी.ए.वी. इन्टर कालेज, लखनऊ, में और उच्च शिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। १९५२ में सर श्रीनिवास वर्दाचारियर स्वर्णपदक से सम्मानित किये गये और १९५२-५३ में डॉ. राधा कुमुद मुकर्जी छात्रवृत्ति से पुरस्कृत किये गये। १९५३ में इतिहास विषय में प्रथम श्रेणी में एम.ए. किया और साथ ही विशेष योग्यता के साथ रूसी भाषा में डिप्लोमा परीक्षा उत्तीर्ण की। १९६९ में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की; शोध-प्रबन्ध की उत्कृष्टता के आधार पर viva की बाध्यता प्रथम बार हटाई गई।

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा १९५२ में सम्पन्न प्रतियोगितात्मक परीक्षा में चयनित होकर अप्रैल १९५३ में सेवायोजित हुए, पुनः आयोग द्वारा सम्पन्न परीक्षा में १९५४ में प्रथम स्थान प्राप्त किया, और अन्ततः जून १९९० में उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से अवकाश ग्रहण किया। वह एक विकास विभाग के निदेशक और एक सार्वजनिक निगम के प्रबन्ध निदेशक भी रहे, तथा उत्तर प्रदेश सचिवालय अधिकारी संघ के अध्यक्ष भी रहे। १९७२ में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अधिकारियों के प्रथम बैच में उन्हें उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए सम्मानित किया गया।

लेखन-प्रकाशन का सिलसिला १९५२ से ही प्रारंभ हो गया। प्रथम लेख अंग्रेजी के राष्ट्रीय दैनिक The Pioneer में ८ अप्रैल, १९५२, को प्रकाशित हुआ। उसके बाद तो इतिहास, संस्कृति, धर्म-दर्शन, भाषा-साहित्य, कला और सामाजिक-राजनैतिक परिदृश्य पर शोधपरक और विचार-प्रेरक लेख व समीक्षायें अंग्रेजी में The Pioneer, National Herald, Hindustan Times, Caravan, Mirror, Quest, East and West आदि पत्र-पत्रिकाओं में और हिन्दी में 'नवजीवन', 'सरस्वती', 'जैन सन्देश शोधांक', 'शोधादर्श' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। **कौशाम्बी** नामक पुस्तक हिन्दी में १९६५ में प्रकाशित हुई। अंग्रेजी में The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka १९७१ में प्रथमतः प्रकाशित हुई और इसका द्वितीय परिवर्धित संस्करण २००० में प्रकाशित हुआ है; देशी-विदेशी

शोध-पत्रिकाओं में बहुमान हुआ और कई विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित की गई। Political and Cultural History of Mid-North India का प्रकाशन १९८७ में हुआ और भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद ने इसकी अनुशंसा की। आकाशवाणी और दूरदर्शन पर भी प्रसारण होते रहे।

जुझारू प्रवृत्ति प्रारंभ से ही रही। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जब हिन्दी को १९४९ में लखनऊ विश्वविद्यालय में स्नातक परीक्षा में वैकल्पिक माध्यम बनाया गया तो सभी पाठ्य पुस्तकें अंग्रेजी में होने के बावजूद हिन्दी को अंगीकार किया। १९५५ में आई.ए.एस. परीक्षा में विवेक सम्बन्धी प्राविधान का दुरूपयोग करने के विरूद्ध संघ लोक सेवा आयोग से टक्कर ली। जनवरी १९५८ में राष्ट्रगान के रूप में 'जन-गण-मन' के चयन को दिल्ली से प्रकाशित लोकप्रिय मासिक Caravan में चुनौती दी। आपातकालीन अन्ध युग में नवम्बर १९७५ में आकाशवाणी लखनऊ से Non-violence in Action वार्ता प्रसारित की। १९८६ में अधिवर्षता के बाद सेवा-विस्तार देकर राजकीय सेवाओं को पतनोन्मुखी कर रहे शासन-प्रमुख का प्रतिरोध किया।

युवाकाल से ही सामाजिक और बौद्धिक कार्यकलापों में सक्रिय रहे। विश्वविद्यालयी छात्र जीवन में 'नेशनल केडट कोर' में केडट रहे और 'श्रमण कल्चर स्टडी सर्किल' के संस्थापक-मंत्री रहे। बाद को 'जैन मित्र मंडल' लखनऊ के मंत्री, 'सर्व धर्म मिलन' लखनऊ के संस्थापक सदस्य और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, के संस्थापक सदस्य व संयुक्त मंत्री रहे। विविध शैक्षणिक एवं बौद्धिक कार्यक्रमों के सम्पादन के लिए १९७१ में 'अनन्त-ज्योति विद्यापीठ' की स्थापना की और उसके पीठ-प्रमुख हैं। 'ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट' के न्यासी अध्यक्ष हैं। संगोष्ठियों और विद्वत् अभिनन्दन समारोहों का संयोजन करते रहे हैं।

शासकीय सेवा से अवकाश के बाद शिक्षा, शोध, लेखन और पत्रकारिता ही हॉबी है। स्पष्टवादी, तथ्यपरक और विचार-उत्प्रेरक लेखन के प्रति प्रतिबद्धता है। चातुर्मासिक शोध पत्रिका **शोधादर्श** के सम्पादक रहे हैं।

Progressive Jains of India (१९७५), Asia Reference (१९८७ व १९९२), **उत्तर प्रदेश साहित्यकार निर्देशिका** (१९९५) और **हिन्दी साहित्यकार संदर्भ कोश** (१९९७) में उल्लेख हुआ है।

डॉ. शशि कान्त जी ने अपने आभार वक्तव्य में जो उद्गार व्यक्त किये हैं वे उद्बोधक और चिन्तनीय हैं। उनका वक्तव्य नीचे उद्घृत है –

"**जैमिनी अकादमी, पानीपत,** की अध्यक्ष श्रीमती संगीता रानी और निदेशक डॉ. बीजेन्द्र कुमार 'जैमिनी' जो स्वयं एक सुप्रसिद्ध कवि-लेखक-समीक्षक हैं, द्वारा जब मुझे यह सूचना दी गयी कि अकादमी के प्रबन्धक मण्डल ने मुझे **बीसवीं शताब्दी रत्न सम्मान** के लिए सुपात्र पाया है तो मुझे विस्मय इस कारण हुआ कि पहले किसी से परिचय का सुयोग नहीं मिला था। अपरिचित क्षेत्र से यह सुसमाचार मेरे लिए विशेष आह्लाद प्रदान करने वाला है।

इस समारोह के लिए आप लोगों ने 'हिन्दी दिवस' निर्धारित किया, यह विचारणीय है। राष्ट्रीय चेतना की दृष्टि से इसका महत्व है। विभिन्न प्रादेशिक और आंचलिक भाषायें अपने विशिष्ट क्षेत्रों में महत्वपूर्ण हैं परन्तु सम्पूर्ण राष्ट्र में संवाद सुलभ कराने में सक्षम नहीं हैं। इसके लिए हमें एक सार्वदेशीय भाषा चाहिये। नागरी लिपि में लिखी-पढ़ी जाने वाली जिस हिन्दी का विकास विगत दो-सौ वर्षो में प्रथमतः अंग्रेजी साम्राज्य की आवश्यकता के रूप में और धीरे-धीरे स्कूलों, फिल्मों, समाचार पत्रों तथा अन्य संचार माध्यमों के द्वारा हुआ उसने हिमालय से कन्याकुमारी तक और मुम्बई से कोलकाता तक देशवासियों को एक संवाद-सूत्र में बांध दिया। इस प्रकार की सार्वदेशिक संवाद भाषा ही भारत को एक राष्ट्र का स्वरूप प्रदान करती है। यदि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले भारतवासी किसी एक भाषा में संवाद नहीं कर सकेंगे तो वे जुड़ेंगे कैसे? एक-दूसरे की बात को समझेंगे कैसे? घर में आई विभिन्न प्रदेशों की वधुएं यदि अलग-अलग बोली ही बोलेंगी तो घर बंधेगा कैसे? जो घर की बात है वही राष्ट्र की बात है।

हिन्दी को राष्ट्र की संवाद भाषा के रूप में विकसित करना, उसे अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनाना और भारतीय जनतांत्रिक गण-संघ की पहचान के रूप में प्रतिष्ठित करना एक राष्ट्रीय और राजकीय एवं संघीय आवश्यकता उसी प्रकार है जिस प्रकार कि भारतीय संसद, भारतीय रक्षातंत्र और भारतीय न्याय-व्यवस्था।

आपने मुझे इस अवसर पर सम्मानित कर जो गौरव प्रदान किया है उसके लिए मैं जैमिनी अकादमी के अध्यक्ष, निदेशक और प्रबन्धक मण्डल के सदस्यों का हृदय से आभारी हूँ।"

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश
प्रगति प्रतिवेदन वर्ष १९९९–२००० ई.

[तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., की स्थापना सन् १९७९ में उत्तर प्रदेश शासन की 'श्री महावीर निर्वाण समिति' की उत्तराधिकारी संस्था स्वरूप एक रजिस्टर्ड सोसायटी के रूप में की गई थी। समिति का १९८७-९१ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-१५ (नवम्बर १९९१) के पृष्ठ ८१-८६ पर, १९९१-९२ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-१८ (नवम्बर १९९२) के पृष्ठ ८३-८४ पर, १९९२-९५ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-२५ (मार्च १९९५) के पृष्ठ ८१-८४ व ८६-८७ पर, १९९५-९६ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-२८ (मार्च १९९६) के पृष्ठ ९३-९७ पर, १९९६-९७ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-३२ (जुलाई १९९७) के पृष्ठ १४५-५० पर, १९९७-९८ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-३५ (जुलाई १९९८) के पृ. १८१-८४ तथा १९९८-९९ का प्रगति प्रतिवेदन **शोधादर्श**-३९ (नवम्बर १९९९) के पृ. २८५-८८ पर प्रकाशित है। प्रस्तुत प्रगति प्रतिवेदन अप्रैल १९९९ से मार्च २००० की अवधि के सम्बन्ध में हैं।]

वर्ष १ अप्रैल १९९९-३१ मार्च २००० में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, के समस्त कार्यक्रम गत वर्षों के अनुरूप सम्पादित हुये। जो विभिन्न प्रवृत्तियां सम्पादित की जाती रहीं उनमें शोध पुस्तकालय, **शोधादर्श**, तीर्थंकर छात्र सहायता कोष और महावीर जनकल्याण निधि, उल्लेखनीय हैं।

महावीर जनकल्याण निधि से इस वर्ष ७ असहाय महिलाओं को रु. ५,२८०.०० की सहायता प्रदान की गई।

तीर्थंकर छात्र सहायता कोष से इस वर्ष कक्षा ७ से स्नातकोत्तर स्तर तक के ३९ छात्र-छात्राओं को अध्ययन सहायता प्रदान करने में रु. १२,३५६.०० का व्यय किया गया।

शोध पुस्तकालय में जैन धर्म के सभी सम्प्रदायों के प्रायः सभी मूल ग्रन्थों, शोध-प्रबन्धों तथा शोधपरक एवं सामान्य साहित्य का संग्रह किया गया है और तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से भारत के अन्य धर्मों, दर्शनों व संस्कृति से संबंधित महत्वपूर्ण ग्रन्थों का भी संग्रह है। लखनऊ, कानपुर एवं अवध विश्वविद्यालयों के जैन विद्या पर शोधरत अनुसंधानकर्ताओं द्वारा तथा अन्य जिज्ञासु जैन-अजैन विद्वानों द्वारा पुस्तकालय का उपयोग किया जाता है। पुस्तकालय के ३२ नियमित सदस्य भी हैं। राजा राम मोहन राय पुस्तकालय प्रतिष्ठान द्वारा, उत्तर प्रदेश शासन के निर्देशन में, पुस्तकालय का निरीक्षण किया जाता है और उक्त प्रतिष्ठान द्वारा उत्तर प्रदेश सरकार के माध्यम से पुस्तकों एवं उपस्कर के रूप में अनुदान प्रदान किया जाता है। पुस्तकालय में वर्षान्त पर लगभग रु. १,९२,०००/- मूल्य की पुस्तकें थीं और लोहे की ११ बड़ी अल्मारियां व १ छोटी अल्मारी तथा २ लोहे के पुस्तक रैक थे। पुस्तकालय में ४३ पत्र-पत्रिकायें **शोधादर्श** के विनिमय में आती है तथा ६ की स्थायी सदस्यता ली हुई है। पुस्तकालय प्रतिदिन सोमवार को छोड़कर प्रातः ८ बजे से ११ बजे

तक नियमित रूप से खोलने की व्यवस्था है और पुस्तकालय के कार्य के लिये एक अंशकालीन लाइब्रेरियन नियुक्त हैं।

जैन विद्या की विभिन्न विधाओं के विद्वानों एवं चिन्तकों की शोध प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से विश्व-विश्रुत विद्वान स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन के मार्गदर्शन एवं प्रधान सम्पादकत्व में **शोधादर्श** का चातुर्मासिक शोधपत्रिका के रूप में शुभारम्भ फरवरी १९८६ में किया गया था। जून १९८८ में उनके निधन के उपरान्त उनके योग्य सुपुत्र-द्वय डॉ. शशि कान्त और श्री रमा कान्त जैन पत्रिका के सम्पादन के दायित्व का निर्वहन कर रहे हैं। प्रधान सम्पादक का दायित्व महामंत्री श्री अजित प्रसाद जैन वहन कर रहे हैं, और **शोधादर्श** पत्रिका की स्तरीय उत्कृष्टता को दृष्टिगत करते हुये २० नवम्बर, १९९९, को जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए उन्हें श्रुतसंवर्द्धन संस्थान एवं प्राच्य श्रमण भारती द्वारा 'आचार्य विमल सागर (भिण्ड) स्मृति श्रुतसंवर्द्धन पुरस्कार-९९' से सम्मानित किया गया है। इस वर्ष **शोधादर्श** के तीन अंक ३७, ३८ व ३९ प्रकाशित हुये जिनमें ३४० पृष्ठों की ज्ञानवर्धक, शोधपरक एवं विचार-प्रेरक सामग्री प्रस्तुत की गई। इसके सम्बन्ध में देश के विभिन्न भागों से प्रबुद्ध पाठक वृन्द की ७९ उत्साहवर्धक प्रतिक्रियायें प्राप्त हुईं जो अंक ३८, ३९ व ४० में प्रकाशित हैं। समिति के कार्यक्रमों की यह एक स्मरणीय उपलब्धि है।

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, की **नयी प्रबन्ध समिति** का निर्वाचन आगामी तीन वर्ष के कार्यकाल के लिए दिनांक २ जनवरी, २०००, को साधारण सभा की बैठक में नियमानुसार सर्वसम्मति से निम्नवत सम्पन्न हुआ –

अध्यक्ष	:	श्री लून करन नाहर जैन
उपाध्यक्ष	:	श्री कन्हैया लाल जैन **एवं** श्री राजकुमार जैन
महामंत्री	:	श्री अजित प्रसाद जैन
संयुक्त मंत्री	:	डॉ. शशि कान्त
उपमंत्री	:	श्री नरेश चन्द्र जैन **एवं** श्री रमा कान्त जैन
कोषाध्यक्ष	:	श्री बिजय लाल जैन
सदस्य	:	श्री नेमिचन्द्र जैन
		डॉ. विनय कुमार जैन
		श्री महावीर प्रसाद जैन पाटनी
		श्री संदीप कान्त जैन
		श्री कैलाश भूषण जिन्दल
		डॉ. पूर्ण चन्द्र जैन
		श्री रोहित कुमार जैन

श्री महेन्द्र प्रसाद जैन

श्री किशन चन्द जैन

श्री सुरेन्द्र नाथ जैन, **तथा**

श्री अजय जैन कागजी

रजिस्ट्रार सोसायटीज, उ. प्र., लखनऊ को, आयकर विभाग को और शासन के शिक्षा विभाग को अपेक्षित सूचनायें यथासमय भेजी जाती रही हैं।

समिति के लेखे का आडिट मेसर्स ए. जिन्दल एण्ड कम्पनी, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स, लखनऊ, द्वारा किया गया है। आलोच्य वर्ष में विभिन्न स्रोतों से कुल प्राप्तियां रु. ८२,४३४.६३ पै. की हुईं और विभिन्न मदों में कुल व्यय रु. ५०,११३/-हुआ। नियत जमाराशि के रूप में ध्रौव्य फण्ड १.४.१९९९ को रू. ११,५८,३१४/- था जो ३१.०३.२००० को बढ़कर रु. ११,७१,६१३/- हो गया। चालू अवशेष बैंक बचत खाते में रु. २४,५५४.२५ पै. और नकद रु. ४,६००.७१ पै. रहा।

इस वर्ष के दौरान श्री धनेन्द्र कुमार जैन (लखनऊ) को आजीवन सदस्यता, श्री रोहित कुमार जैन (लखनऊ) और श्री किशन चन्द जैन (लखनऊ) को साधारण सदस्यता तथा श्री अजय जैन कागजी को नवगठित प्रबन्ध समिति के कार्यकाल के लिये मानद सदस्यता प्रदान की गई।

श्री मुन्नेलाल कागजी जैन ट्रस्ट, चारबाग, लखनऊ, के प्रति हम आभारी हैं कि उन्होंने शोध पुस्तकालय के लिये श्री मुन्नेलाल कागजी जैन मन्दिर, चारबाग, लखनऊ, का एक कक्ष निःशुल्क उपलब्ध कराया हुआ है।

समिति के अध्यक्ष श्री लून करन नाहर जैन, उपाध्यक्ष श्री कन्हैया लाल जैन एवं श्री राजकुमार जैन, कोषाध्यक्ष श्री बिजय लाल जैन, संयुक्त मंत्री डॉ. शशि कान्त और उप मंत्री श्री नरेश चन्द्र जैन व श्री रमा कान्त जैन तथा समिति के सभी सम्माननीय सदस्यों का मैं आभारी हूँ कि उन्होंने समिति की विभिन्न प्रवृत्तियों को सुचारू रूप से संचालित करने में मुझे पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

- अजित प्रसाद जैन

महामंत्री

प्राप्ति–व्यय विवरण अप्रैल १९९९–मार्च २०००

सम्परीक्षित लेखा

प्राप्ति

प्रारम्भिक शेष :		
१.	रिजर्व फण्ड	११,५८,३१४.००
२.	बैंक बचत खाता	७,७२१.५७
३.	नकद राशि	२,७१०.४६
	योग	**११,६८,७४६.०३**
	समिति -सदस्यता शुल्क आदि	२,२६४.००
	शोधादर्श -ग्राहक शुल्क आदि	३,८७१.००
	शोध पुस्तकालय -सदस्यता शुल्क व जमानत	१,४२०.००
	सरकारी अनुदान	१,५००.००
	बैंक ब्याज	७३,०१०.६८
	अन्य प्राप्तियां	३६६.२५
	योग	**८२,४३४.६३**
	कुल योग	**१२,५१,१८०.६६**

व्यय

	शोध पुस्तकालय	६,१०२.७५
	शोधादर्श -प्रकाशन एवं वितरण	२१,२७२.००
	तीर्थंकर छात्र सहायता कोष	१२,३५६.००
	महावीर जन कल्याण निधि	५,२८०.००
	आडिट एवं आयकर परामर्शदाता की फीस	१,०२५.००
	स्टेशनरी	७६३.२५
	पोस्टेज	२५६.००
	बैंक चार्जेज	५५.००
	योग	**५०,११३.००**
अन्तिम शेष :		
१.	रिजर्व फण्ड	११,७१,६१३.००
२.	बैंक बचत खाता	२४,५५४.२५
३.	नकद राशि	४,६००.७१
	योग	**१२,०१,०६७.६६**
	कुल योग	**१२,५१,१८०.६६**

साहित्य सत्कार

कुण्डलपुर का सच : ले. व प्रकाशक – श्री रवीन्द्र जैन पत्रकार, आर. वे. हाउस, १० बी, प्रोफेसर कालोनी, भोपाल-४६२ ००२; जुलाई २०००; पृष्ठ १०३; मूल्य रु. २५/-

यह पुस्तक विख्यात साहित्यकार पुरातत्वविद् श्री नीरज जैन, सतना, की चर्चित पुस्तक **कराहता कुण्डलपुर** के प्रत्युत्तर में उनके आरोपों का खण्डन करने के प्रयोजन से प्रकाशित की गई है। प्रारम्भ के १६-२० पृष्ठों में क्षेत्र के इतिहास पर तथा निर्माणाधीन नवीन विशाल मंदिर की योजना के औचित्य पर प्रकाश डालते हुए शेष पुस्तक श्री नीरज के अतीत के अप्रिय अध्याय पर चर्चा तथा उनके व्यक्तित्व की कटु आलोचना से ही भरी है। यदि पुस्तक में मूल विशाल शिखर युक्त तथा वर्तमान के लघु शिखर युक्त बड़े बाबा के मन्दिर के चित्र, ६४ मन्दिरों के समूह का विहंगम चित्र, इस क्षेत्र को सिद्ध क्षेत्र की गरिमा प्रदान करने वाले श्रीधर केवली का परिचय, १० करोड़ की अनुमानित लागत वाले निर्माणाधीन नए मन्दिर की योजना का रेखाचित्रों सहित विस्तृत परिचय तथा क्षेत्र पर जीर्णोद्धार - नवनिर्माण पर विगत पांच वर्षो में किए गए व्यय तथा उसकी उपलब्धि का प्रमाणित ब्यौरा तथा क्षेत्र की प्रबन्ध व्यवस्था का परिचय (वर्तमान पदाधिकारियों के परिचय सहित) भी पुस्तक में समाविष्ट होते तो इसकी उपयोगिता कहीं अधिक बढ़ जाती।

शल्योद्धार भव आलोचना : ले. श्रीमद् विजय सुशील सूरीश्वर जी; सम्पादक श्री विजय जिनोत्तम सूरि जी; प्र. श्री सुशील साहित्य प्रकाशन समिति, राई का बाग, जोधपुर; १६६८ ई.; पृष्ठ १५६; मूल्य सदुपयोग

क्रोधादि चारों कषायों से मन-वचन-काय के योग से हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह मय जो आत्मा की वैभाविक परिणति होती है तथा लिए हुए नियमों का अतिचार, स्खलन होता है उसकी आलोचना निन्दा करते हुए गुरुदेव से प्रायश्चित लेकर उन्हें पुनः न करने की प्रतिज्ञा करना संयमी जीवन चर्या का अनिवार्य अंग है तथा इस प्रकार के आत्म मंथन के बिना आध्यात्मिक उत्कर्ष संभव नहीं है। समीक्ष्य कृति में पू. सूरी जी ने **शल्योद्धार भव आलोचना** के नाम से इस प्रक्रिया का संयमी साधकों के हितार्थ विस्तार से विवेचन किया है जो उपांग **महानिशीथ सूत्र** के प्रथम अध्ययन पर आधारित है।

गौरव गाथा आचार्य श्री विद्यानन्द : ले. श्री अखिल बंसल; प्र. बाहुबली सेवा संस्थान, १२६-बी, जादोन नगर, स्टेशन रोड दुर्गापुरा, जयपुर-३०२ ०१८; १६६६; मूल्य रु. २५/-

चित्रकथा से बाल मन सहज ही प्रभावित हो जाता है। बाल शिक्षा के क्षेत्र में यह एक सशक्त माध्यम स्वीकार किया गया है। समीक्ष्य कृति में **समन्वय वाणी** (पाक्षिक) के विद्वान सम्पादक श्री अखिल बसंल ने इस युग के सर्वाधिक प्रभावक दिगम्बर जैन आचार्य राष्ट्रसंत पू. श्री विद्यानन्द मुनि जी की प्रेरणास्पद गौरवमयी जीवन गाथा की झांकी शताधिक चित्रों के माध्यम से सशक्त रूप में प्रस्तुत की

है। चित्रांकन श्री अनन्त कुशवाहा द्वारा किया गया है तथा बाहुबली सेवा संस्थान ने आचार्य श्री के अमृत महोत्सव के सुअवसर पर इसे प्रकाशित करके अपनी विनयांजलि अर्पित की है।

बनना एक आत्मा का बहिरात्मा से अन्तर्आत्मा : डा. चीरंजी लाल बगड़ा, ४६, स्ट्रैन्ड रोड, तीन तल्ला, कलकत्ता-७०० ००७; द्वि. सं. २०००; पृ. ५३; मूल्य सदुपयोग

जीवन का अंत निकट जानकर घर-सम्पत्ति, परिजनों और अपनी देह से भी मोह-ममत्व का त्याग करके तथा शरीर व कषायों को क्रमशः क्षीण करते हुए शरीर परित्याग करने को ही जैन धर्म में समाधि-मरण या पंडित-मरण कहा है जो अनन्त कर्मों की निर्जरा का कारण है तथा जिसे अति निकट भव्य जीव ही प्राप्त करते हैं। शेष मरण बाल-मरण है। प्रस्तुत कृति में **दिशाबोध** के यशस्वी एवं जागरूक संपादक डा. चीरंजी लाल बगड़ा ने अपने पूज्य पिताश्री धर्मनिष्ठ सुश्रावक ८०-वर्षीय श्री जयचन्द लाल जी बगड़ा के समाधि-मरण की झांकी उपलब्ध कराई है जो अत्यन्त प्रेरणास्पद एवं अनुकरणीय है। बगड़ा जी की बहिरात्मा से अन्तर्आत्मा बनने की यात्रा समाधि-निधन के डेढ़ वर्ष पूर्व शुरू हुई जब उन्होने तीर्थंराज सम्मेद शिखर जी पर पू. आर्यिका सुपार्श्वमती जी से ११.०५. १९९६ को तीन वर्ष का यम समाधि नियम लिया। दिनांक २८.०३.१९९७ को उन्होंने समस्त परिजनों आदि से क्षमायाचना करके गृह त्याग दिया तथा शिखर जी में ही रहकर उत्तरोत्तर धर्म साधना करने लगे। दिनांक ०८.०८.१९९७ को उन्होने मुनि दीक्षा ग्रहण की, १५.११.१९९७ को यम सल्लेखना की घोषणा कर दी तथा १८.११.१९९७ को उनका समाधि-निधन हो गया। ऐसी निकट भव्य आत्मा को शत्-शत् वन्दन !

हंसते-हंसते जीना, हंसते-हंसते मरना : ले. श्री आनन्द प्रकाश जैन, एम. ए., 'शान्ति प्रिय', १३३, प्रेम कुटीर, जम्बूद्वीप, श्री हस्तिनापुर (मेरठ)-२५० ४०४; १९९७ ई.; पृ. ३२

केन्द्र सरकार में उच्च प्रशासनिक पद से सेवानिवृत्त ८३-वर्षीय धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री आनन्द प्रकाश "शान्ति प्रिय" पत्नी के स्वर्गवास के उपरान्त घर-परिवार का माया-मोह त्याग कर पिछले कुछ वर्षों से तीर्थ क्षेत्र श्री हस्तिनापुर के धर्ममय शान्त वातावरण में ही स्थायी रूप से रहते हुए अपना सारा समय धर्म-ध्यान, योग-साधना तथा त्यागी-व्रतीयों की वैयावृत्ति करने में आनन्द पूर्वक बिता रहे हैं और इस प्रकार अपनी जीवन संध्या का सार्थक उपयोग कर रहे हैं। उन्होंने संकल्प किया है कि वे हंसते-हंसते जीयेंगे तथा हंसते-हंसते ही मरेंगे। इस लघु पुस्तिका में उन्होंने जीने-मरने की इसी कला का सुन्दर विवेचन बड़ी आत्मीय एवं सरल शैली में किया है। पुस्तिका रोचक तथा पठनीय है।

जैन-दर्शन पारिभाषिक कोश : प्रस्तुति-मुनि श्री क्षमासागर जी; प्र. ज्ञानोदय विद्यापीठ, भोपाल; पृ. २८२; मूल्य रु. २५/-

अभिधान राजेन्द्र कोश तथा **जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश** जैसे जैन दर्शन संस्कृति के विशालकाय कोशों की परम्परा से हटकर शास्त्र-मर्मज्ञ मुनि श्री क्षमासागर जी ने जैन तत्व ज्ञान, आचार, कर्म सिद्धान्त, भूगोल, पुराण आदि से संबंधित मात्र १५०० पारिभाषिक शब्दों का संक्षिप्त परिचयात्मक

ु कोश प्रस्तुत किया है ताकि सामान्य जन सदा इसे अपने साथ रख सकें तथा स्वाध्याय करते मय या शास्त्र प्रवचन श्रवण करते समय कठिन पारिभाषिक शब्दों का तत्काल अर्थ बोध कर सकें। ज्य मुनि श्री ने इस जेबी कोश को प्रस्तुत करके स्वाध्यायी जनों का महान् उपकार किया है।

न तत्वविद्या : ले. मुनि श्री प्रमाण सागर म.; प्र. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली; २०००; पृ. ४२२; ल्य रु. १२५/-

आचार्य श्री माघनन्दि योगीन्द्र (१२वीं शती) का संस्कृत में सूत्र शैली में निबद्ध **शास्त्र मुच्चय** ग्रंथ जैन दर्शन-सिद्धान्त का सुप्रसिद्ध ग्रंथ है। पू. आ. श्री विद्यासागर म. के सुशिष्य युवा निराज श्री प्रमाण सागर ने गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ करते हुए २०० सूत्रों के इस थ का समीक्ष्य कृति में हिन्दी भाषा में विशद विवेचन प्रस्तुत किया है। चार अध्यायों में विभक्त स ग्रंथ में चारों अनुयोगों का पृथक-पृथक वर्णन/विवेचन (मूल संस्कृत पाठ सहित) किया गया है। षय को स्पष्ट करने और प्रस्तुति को बोध-गम्य बनाने के लिए उन्हें अलग-अलग शीर्षकों/उपशीर्षकों विभाजित किया गया है। समग्र जैन धर्म-दर्शन का संक्षेप में ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह ग्रंथ बहुत पयोगी है।

ुति विद्या : अनुवादक -साहित्याचार्य पं. पन्नालाल जैन 'बसन्त'; प्र. आगम प्रकाशन, ५३७३, नपुरी, रेवाड़ी (हरियाणा);१९९८; पृ. १६६; मूल्य-१६ भक्ति पाठ प्रतिदिन,

श्रीमत् स्वामि समन्तभद्राचार्य विरचित **स्तुति विद्या** अपर नाम **जिन शतक** को समीक्ष्य कृति में श्री वसुन्धराचार्य कृत संस्कृत टीका तथा पं. पन्नालाल जी कृत हिन्दी अनुवाद के साथ प्रस्तुत किया गया है। ११६ श्लोकों में निबद्ध इस ग्रंथ में वृषभादि चौबीस तीर्थंकरों की अलंकारिक भाषा बड़ी ही कलात्मक स्तुति की गई है। यथा- एक श्लोक के एक चरण को उलट कर रख देने से रा चरण, पूर्वार्ध को उलटकर रख देने से उत्तरार्ध और समूचे श्लोक को उलटकर रख देने से रा श्लोक बन गया है, आदि-आदि। इस प्रकार के काव्य-कला कौशलों की इस ग्रंथ में भरमार तथा यह शब्दालंकार, अर्थालंकार और चित्रालंकार के अनेक भेदों-प्रभेदों से अलंकृत है।

BC of Jainism - A Way of Noble Life by Sri Shanti Lal Jain; 1998; pp. 69; ice Rs. 90/-

Jainism is a very ancient yet most modern and well established Indian eligion and cultural system. The Jain way of life prescribes the best form of dustriousuess and happiness. This book explains the basic principles of inism to a beginner in a simple and lucid manner. The treatment of the ubject is objective and authentic. The book has been brought out for the enefit of the English speaking people all over the world.

. नेमीचन्द जैन - संदर्भ साहित्य : सह चिन्तन, भाग १ व २ : सम्पादक श्री प्रेमचन्द जैन; प्र. ा भैया प्रकाशन, ६५, पत्रकार कालोनी, कनाड़िया मार्ग, इन्दौर-४५२ ००१; २०००; पृ. प्रत्येक ड ३४; मूल्य प्रत्येक खण्ड रु. १०/-

जैन जगत के जाने-माने साहित्यकार, पत्रकार, मौलिक चिन्तक व शाकाहार प्रचार के लिए

पूर्ण रूप से समर्पित **तीर्थंकर** मासिक के यशस्वी संपादक डॉ. नेमीचन्द जैन ने विविध आयामी विपुल साहित्य का सृजन किया है। उनके साहित्य के अनेक अध्येताओं, सहचिन्तकों में से कुछ मनीषियों ने उनके व्यक्तित्व एवं साहित्य की विविधताओं का आकलन करते हुए जो आलेख लिखे हैं उनका संकलन इस लघु पुस्तिका के दोनों खण्डों में किया गया है। वस्तुतः नेमी भाई एक विराट व्यक्तित्व के धनी हैं। पुस्तक रोचक व पठनीय है।

माटी का सौरभ (मूकमाटी महाकाव्य से संकलित मानवीय मूल्य) : संकलनकर्ता डॉ. नीलम जैन; संयोजक ब्र. प्रदीप शास्त्री 'पीयूष'; प्र. श्री दिगम्बर साहित्य प्रकाशन समिति, बरेला, जिला जबलपुर; १९९८; पृ. ९२; मूल्य रु. १२/-

संत शिरोमणि पू. आचार्य श्री विद्यासागर म. के **मूकमाटी** महाकाव्य में माटी से मंगल कलश तक बनने की काव्य कथा झरती है। आचार्य श्री के सुशिष्य मुनि श्री समता सागर जी ने इसे मुक्ति की मंगल यात्रा कहा है। **जैन महिलादर्श** की विदूषी सम्पादिका डॉ. नीलम जैन ने समीक्ष्य कृति में मानवीय मूल्यों को इस महाकाव्य की स्वातंत्र्योत्तर भारत में प्रासंगिकता पर अपने विचार रखते हुए मानवीय मूल्य संबंधी इसके काव्यांशों का सार्थ संकलन प्रस्तुत किया है। पुस्तक के अंत में **मूकमाटी** में निहित १२८ सुभाषित भी प्रकाशित किए गए हैं। **मूकमाटी** महाकव्य की गंभीरता, सरसता व दार्शनिकता को समझने के लिए इस पुस्तक का अध्ययन बहुत सहायक सिद्ध होगा। पुस्तक संग्रहणीय है।

श्री सम्मेदशिखर मंगल पाठ : रचनाकार श्री सुभाष जैन (शकुन प्रकाशन); प्र. श्री दिगम्बर जैन शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर ट्रस्ट, वीर सेवा मन्दिर, २१, दरियागंज, नई दिल्ली-२; पृ. २४

अनादि निधन तीर्थंराज श्री सम्मेदशिखर जी की भक्ति में भाव विभोर होकर श्री सुभाष जी ने तीर्थंराज के कुछ भक्ति गीत, कीर्तन, आरती व पूजा लोकगीतों की धुनों पर रचकर इस लघु पुस्तिका में प्रस्तुत की हैं। समाज सेवी श्री सुभाष जी एक सिद्धहस्त कवि हैं। उनकी रचनाओं में सहजता, सरलता तथा गेय तत्व भरा है। तीर्थंराज के धर्मनिष्ठ यात्रियों में यह पुस्तिका अत्यन्त लोकप्रिय सिद्ध होगी, इसका हमें विश्वास है।

- अजित प्रसाद जैन

पुण्यास्रव-कथा (-कोश) महाकवि रइधू विरचित : सम्पादन एवं अनुवाद - प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन; प्र. श्री दिगम्बर जैन साहित्य-संरक्षण समिति, डी. ३०२, विवेक बिहार, दिल्ली-११० ०९५; २०००; पृ. ३१६+५० सजिल्द; मूल्य रु. ७५/-

महाकवि श्री पंडित रइधू ने चन्द्रवाड-पट्टन में १५वी शती ईस्वी में चौहानवंशी राजा रुद्रप्रताप के राज्यकाल में अपने गुरु श्री कमलकीर्ति की प्रेरणा से और पद्मावती-पुरवाड वंशी तोसउ वणीश्वर (साहू) के ज्येष्ठ पुत्र संघाधिपति नेमिदास के अनुरोध पर १३ संधियों में २५० कड़वकों में अपभ्रंश भाषा में **पुण्णासवकहा-(कोसु)** (पुण्यास्रव-कथा-कोश) की रचना की थी जिसमें पुण्य-पाप के फल के साथ-साथ पुण्य-पाप से भिन्न धर्म एवं आत्मानुभूति का निरुपण करने वाली २८ जैन

धार्मिक कथाओं का सरस एवं साहित्यिक वर्णन है। जैन अपभ्रंश साहित्य के गहन अध्येता डॉ. राजाराम जैन ने उक्त कृति की ऐलक पन्नालाल सरस्वती जैन भवन, ब्यावर, में संरक्षित अधुनाज्ञात एवं उपलब्ध एकमात्र प्रतिलिपि, जो लगभग ३०० वर्ष प्राचीन अनुमानित की गई है, का सम्पादन कर उसे अपने सरल सरस हिन्दी अनुवाद और सारगर्भित विशद प्रस्तावना से सज्जित किया है। अपभ्रंश साहित्य के अध्येताओं और कथा-साहित्य के रसिक हिन्दी पाठकों के हाथ में, अब तक अप्रकाशित रही, इस कृति को भव्य रूप में पहुंचाने के लिये इसके सम्पादक व प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

आख्या भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन : सम्पादक डॉ. अनुपम जैन; प्र. दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर-२५० ४०४; फरवरी २०००; पृ. ६४+११४+१३ सजिल्द; मूल्य रु. २००/-

भगवान ऋषभदेव के सार्वभौम व्यक्तित्व से जन-जन को परिचित कराने हेतु जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में ४-६ अक्टूबर, १९९८, को पू. गणिनी ज्ञानमती जी की प्रेरणा से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान एवं चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, के संयुक्त तत्वावधान में एक राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन का आयोजन हुआ था। इस सम्मेलन में देश के १० विश्वविद्यालयों के कुलपतियों व ३ पूर्व कुलपतियों सहित अनेक गणमान्य विद्वान मनीषियों एवं महानुभावों ने भाग लिया था। सम्मेलन की **आख्या** के प्रथम दो खण्ड प्रस्तुत प्रकाशन में समाहित हैं। प्रथम खण्ड शुभकामना संदेशों आदि औपचारिकताओं से युक्त है। ११४ पृष्ठीय द्वितीय खण्ड में विभिन्न विद्वानों के २३ आलेख हैं जिनमें १६ भगवान ऋषभदेव विषयक हैं, ६ जैन धर्म और संस्कृति के अन्य पक्षों से सम्बन्धित हैं तथा १ मानव जीवन में संगीत का योगदान और प्रभाव पर है और इस प्रकार विषय से किंचित हटकर है।

जैन दर्शन की प्राचीनता, कर्म सिद्धान्त एवम् आत्मा का स्वरूप : सम्पादक व संकलनकर्ता- श्री महावीर प्रसाद जैन स्वतंत्रता सेनानी; प्र. श्री दिगम्बर जैन साहित्य प्रकाशन समिति, ३३२, स्कीम नं. १०, अलवर (राजस्थान); २०००; पृ. २०४+३२; मूल्य रु. ३०/-

प्रस्तुत पुस्तक में जैन दर्शन की प्राचीनता व अर्वाचीनता, धर्म का स्वरूप, सुख-दुख क्या है, विश्व क्या है, कर्म सिद्धान्त और आत्मा का स्वरूप आदि ६ विषयों का विशद विवेचन किया गया है। आत्मा का स्वरूप समझाने हेतु प्राचीन ग्रन्थों की सुसंगत गाथाओं को आधार बनाया गया है। अन्त में श्री जुगल किशोर मुख्तार कृत 'मेरी द्रव्य पूजा' दी गई है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा ११वीं कक्षा के इतिहास के छात्रों के लिए प्रकाशित पाठ्य पुस्तक **प्राचीन भारत** के जैन और बौद्ध धर्म विषयक अध्याय १० में 'वर्धमान महावीर और जैन सम्प्रदाय' शीर्षक के अन्तर्गत आये कतिपय वर्णन दोषों का परिमार्जन कराने के उद्देश्य से विस्तृत भूमिका के साथ इस पुस्तक का प्राक्कथन डॉ. योगेश चन्द्र जैन, अलीगंज (एटा), की लेखनी से निस्सृत है।

छन्द-शतक : रचयिता - कविवर वृन्दावनदास; सम्पादक - श्री जमनालाल जैन; प्र. अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद्, २६१/३, पटेलनगर, मुजफ्फरनगर; द्वि. सं., १९९९; पृ. ५५; मूल्य रु. १०/-

सुललित चौबीसी-पूजाओं के रचनाकार के रूप में ख्याति प्राप्त, काशी में जन्मे, दिगम्बर जैन, गोयल गोत्रीय अग्रवाल जातीय कविवर वृन्दावन ने अपने पुत्र अजित दास को छन्द शास्त्र का ज्ञान सरल विधि से कराने हेतु मात्र १८ दिन में इस शतक की रचना विक्रम संवत् १८६८ (१८४२ ई.) की माघ कृष्णा दोयज को पूर्ण की थी। रचना के प्रायः प्रारम्भ में दोहा १३-१५ में रचनाकार ने अपनी प्रतिज्ञा निम्नवत अंकित की है –

गहत प्रतिग्या वृंद कवि, करि गुरु चरन प्रणाम।
अरथ सहित सब छंद के, परै अन्त मैं नाम।।
आठ गननि के छंद जे, तिनके गन जुत नाम।
छंद माहि गर्भित रहैं, जिनमें जिन गुण ग्राम।।
स्याद्वाद लच्छन सहित, जिनवानी सुखकंद।
ताही को रस छंद मैं, प्रगट धरत भवि वृंद।।

उपर्युक्त दोहों में रचनाकार ने अपना नाम संक्षिप्त कर 'वृंद' अंकित किया है। श्री जमनालाल जैन द्वारा सम्पादित इस कृति का प्रथम संस्करण सन् १९४८ ई. में डॉ. हीरालाल जैन की प्रस्तावना के साथ प्रकाशित हुआ था। अब साधिक ५० वर्ष पश्चात पुनः प्रकाशित इस द्वितीय संस्करण में वयोवृद्ध विद्वान सम्पादक ने भक्त और रसज्ञ कवि वृन्दावन जी का परिचय जोड़कर इसके महत्व में अभिवृद्धि की है। हिन्दी छन्दों के ज्ञानार्थियों के लिये कृति उपयोगी है।

भव आलोचना एवं प्रतिज्ञा : संकलनकर्ता व संपादक मुनि श्री विमलप्रभ; प्र. श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ जैन श्वेताम्बर मन्दिर विश्वकल्याण आत्म जैन फाउडेशन, ऋषिकेश रोड, भूपतवाला, हरिद्वार-२४९ ४१०; पृ. ८४+४; मूल्य रु. ५/-

इस लघु पुस्तिका का प्रणयन मुनि श्री ने

शिवमस्तु सर्व जगतः, परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु नाशं, सर्वत्र सुखी भवतु लोकः।।

की पुनीत भावना से ५ अणुव्रतों, ३ गुणव्रतों और ४ शिक्षाव्रतों का ज्ञान देने, तथा हिंसा, झूठ, चोरी, परिग्रह, क्रोध, मान व लोभ को समझाने, साथ ही श्वेताम्बर आम्नाय की मान्यतानुसार श्रावकोचित दिनचर्या-धर्मचर्या का मार्गदर्शन करने, के सदुद्देश्य से किया है।

श्री अवध दिगम्बर जैन समाज निर्देशिका २००० : संकलनकर्ता श्री बाबूलाल जैन छाबड़ा; सं. श्री सुनील कुमार जैन; प्र. श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा, उ. प्र., ऐशबाग, लखनऊ-२२६ ००४; २०००; पृ. २२२ सचित्र

जैन प्रतीकों और ६ परम पूज्य आचार्यों के चित्रों से सज्जित, बहिरंग और अतरंग आवरण पृष्ठ के साथ प्रकाशित, इस निर्देशिका में जहां अवध क्षेत्र के विभिन्न जनपदों में निवास कर रहे दिगम्बर जैन परिवारों का विवरण संकलित हुआ है, वहीं इस अंचल का मानचित्र और वहां के तीर्थ

क्षेत्रों व दिगम्बर जैन मन्दिरों व चैत्यालयों का परिचय भी अनेक बहुरंगीय व श्वेत-श्याम चित्रों के साथ दिया हुआ है। साथ ही, दिगम्बर जैनों की ८४ जातियों का विवरण, जैन व्रत एवं त्यौहार, चौबीस तीर्थंकरों का संक्षिप्त जीवन परिचय और उनके पंचकल्याणकों की जानकारी तथा महासभा का इतिहास, कई अन्य विविध जनोपयोगी सूचना सामग्री आदि के साथ इसमें समाहित हैं।

निर्देशिका के प्रारम्भ में पृ. ३ पर मुद्रित **णमोकार महामंत्र** को देखकर चित्त कुछ खिन्न हुआ। जिसे हम महामंत्र मानते हैं उसके प्रथम पद का असावधानी वश 'णमो अरिहताण' छपना अच्छा नहीं लगा। वैसे भी अपनी अल्प बुद्धि में यह बात नहीं बैठ पा रही कि जब एक ओर हम जैन धर्म का प्राण अहिंसा मानते हैं और भाव हिंसा तक को निंद्य समझते हैं, तब भले ही अरिहंताणं पद का अर्थ 'कर्म-शत्रुओं को नाश करने वाला' किया जाय, इस शब्द का जिसमें हिंसा निहित है, अंधानुकरण कर यह प्रयोग प्रचलन को क्यों प्राप्त हो रहा है। हमारी अल्प बुद्धि में 'णमो अरहंताणं' सही पद है जिसका अर्थ 'पूज्यों को नमस्कार' है।

Indian Cattle Wealth : by Dr. Chiranjee Lal Bagra; Pub. The Indian Vegetarian Congress, 46, Strand Road, 3rd Floor, Calcutta- 700 007; August 2000; pp. 25+6; contribution Rs. 20/-

The booklet contains lucid presentation of the talk delivered by its learned author at the 34th World Vegetarian Congress at Toronto, Canada, in July 2000 on **Indian Cattle Wealth.** It provides information to a lay reader about different species of livestock found in this country and its quantum, and also its utility and importance for society in general, and the need for its preservation. The author deserves congratulations for bringing out this informative hand-out so nicely.

असली पञ्चाङ्ग वि. सं. २०५७ : निर्माता चौ. पं. महेन्द्र कुमार जैन एवं पं. गजेन्द्र जैन; प्र. धर्मसन प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली-११० ००६; पृ. ६६; मूल्य रु. १७/-

ज्योतिष-रत्न पं. जैनी जीयालाल चौधरी ने वि. सं. १९३४ (१८७७ ई.) में **असली पञ्चाङ्ग** का प्रकाशन प्रारम्भ किया था। इसे उनके बाद उनके सुपुत्र चौ. शिखरचन्द निकालते रहे और अब उनके सुयोग्य पौत्र चौ. महेन्द्र कुमार जैन और प्रपौत्र पं. गजेन्द्र जैन प्रकाशित कर रहे हैं। ज्योतिष विद्या की, विशेषकर उसके फलित की, सामान्य जनों को ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी विविध प्रकार की जानकारी प्रदान करने वाला यह पञ्चाङ्ग इस प्रकार चार पीढ़ियों से इस क्षेत्र में जनसेवा कर रहा है और लोकप्रियता प्राप्त है। प्रस्तुत पञ्चाङ्ग में शुद्ध विवाह मुहुर्त्त; सभी धर्मों से सम्बन्धित व्रत, त्यौहार, उत्सव और अवकाश आदि की वर्गीकृत सूची; श्री जैन पर्व, व्रत एवं तीर्थंकरों के पञ्चकल्याणकों की सूचना; और व्यापार-विमर्श – इसके मुख्य आकर्षण हैं।

भावत्रयफलप्रदर्शी तथा बोधामृतसार : रचयिता – मुनिश्री कुंथुसागर; सम्पादक – पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री; हिन्दी टीकाकार – पं. लालाराम शास्त्री; मुद्रक – सन्मति प्रकाशन, मुम्बई ४०० ००४; २००० ; पृ. ४१६; मूल्य रु. २०/-

शुभोपयोग, अशुभोपयोग और शुद्धोपयोग इन तीन भावों के फल को प्रदर्शित करने वाली ३ अध्यायों में २६१ श्लोकों में निबद्ध कृति **भावत्रयफलप्रदर्शी** है। इसकी रचना वीर निर्वाण संवत् २४६७ (१६४० ई.) में पूर्ण हुई थी।

अपने जन्म-मृत्यु के विनाश, दूसरों की सुख-शान्ति हेतु और यथार्थ धर्म का बोध कराने के उद्देश्य से अज्ञान को हरने वाले, आत्मा का बोध कराने वाले और क्रोध-मान-माया-लोभ कषायचतुष्टय का नाश करने वाले ४ अधिकारों में ५३२ श्लोकों में **बोधामृतसार** की रचना वीर निर्वाण संवत् २४६३ (१६३६ ई.) में की गई थी।

इन दोनों कृतियों का सरल संस्कृत में प्रणयन कर्नाटक के बेलगाम जिले के ऐनापुर ग्राम में वीर निर्वाण संवत् २४२० (१८६३ ई.) में जन्मे मुनि श्री कुन्थुसागर ने किया था। वह मूलतः श्रावक सातप्पा और सरस्वती के पुत्र रामचन्द्र थे। उन्होंने आचार्य शान्तिसागर से दीक्षा ग्रहण की थी और उनको शिक्षा देने वाले गुरू मुनिश्री सुधर्मसागर थे। पं. वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित और पं. लालाराम शास्त्री की हिन्दी टीका सहित ये दोनों कृतियां काफी पहले प्रकाशित हो चुकी थीं। मुनिश्री भूतबली सागर की प्रेरणा से अब इनका पुनः प्रकाशन **लघुबोधामृतसार** के साथ किया गया है।

गीत के गाँव : रचयिता डॉ. शिवभजन 'कमलेश'; प्र. भारत बुक सेन्टर, १७, अशोक मार्ग, लखनऊ-२२६ ००१; २००० ई.; पृ. ६४+१०; मूल्य रु. ८०/-

जैसा कि कृति के नाम से स्पष्ट है, यह एक गीत-संकलन है। इसमें 'वाणी वन्दना' के अतिरिक्त ४५ गीत समाहित हैं। हिन्दी, गंगा और श्रमिक पर रचे आरम्भिक ३ गीतों के उपरान्त ४ गीत 'सद्भावना' शीर्षक के अन्तर्गत, २२ 'जीवन' के विभिन्न पक्षों पर, २ मानवीय सम्बन्धों पर, ४ राष्ट्रीय विषयों पर, ८ श्रृंगारिक भावों पर और २ आध्यात्मिक उद्भावना पर अनुस्यूत हैं। ग्रामीण अचंल में जन्मे और पले, भले ही वह अब वर्षो से जीवन यापन हेतु महानगरीय परिवेश में रह रहे हैं, कवि के मन में ग्रामीण अचंल में बिताये अपने शैशव की खट्टी-मीठी सुधियां समाई हैं और कदाचित् इसीलिये उन्होंने इस संकलन का नाम **गीत के गांव** रखा है। कवि की दृष्टि बहुआयामी एवं व्यापक है। अपनी अनुभूतियों को स्वर देने में वह सिद्धहस्त हैं। मुझे अनेक काव्य गोष्ठियों में उनके मधुर कण्ठ से उनके सुललित गीतों को, जिनमें से कुछ गीत इस संकलन में भी स्थान पाये हैं, सुनने का सौभाग्य और अमन्द आनन्द प्राप्त हुआ है। काव्य रसिक पाठक अर्थवत्ता और गुणवत्ता से युक्त इन सरस गीतों का रसास्वादन कर आनन्द सागर में निमज्जित होंगे, ऐसा विश्वास है।

– रमा कान्त जैन

The Hathigumpha Inscription of Kharavela And the Bhabru Edict of Asoka by Dr. Shashi Kant; Pub. D. K. Printworld (P) Ltd., `Sri-kunj', F-32, Bali Nagar, New Delhi-110 015; 2nd Revised Edition, 2000; pp. xxiv+168, B/w photographs 19, maps 2; size 23 cm, HB; Price Rs. 295/-

The book, **The Hathigumpha Inscription of Kharavela And the Bhabru Edict of Asoka** presentss a very critical and comprehensive study of the two most fascinating inscriptions of Ancient India. Since the discovery of

the Hathigumpha Inscription in 1825 AD, a hoard of scholars have attempted to decipher it and explain its contents. The study of Dr. Shashi Kant is the latest of them and, no doubt, the most authentic as well.

Equipped with the palaeographic background through the teaching of the late Prof. C.D. Chatterjee of Lucknow University (which the author himself acknowledges in his Preface to the Second Edition , p. x) and the in-depth knowledge of Jainology inherited from his illustrious historian father the late Dr. J. P. Jain, the author could accomplish the task of deciphering the epigraph afresh with some new restorations, new meanings and new interpretations and, of course, with some detailed informations. The Hathigumpha Inscription of Kharavela is the only evidence recording chronological events of his reign and mentioning for the first time about the war-ships or the naval wing in army, the name of our ancient country as Bharatavarsa, the geographical name of the northern part of our country as Uttarapatha, the assembly of the First Jain Council, the old and sacred Jain scripture Dvadasa Angas, etc.

Similarly, Dr. Shashi Kant deals with the Bhabru Edict of Asoka by translating it, discussing in detail the location of the Buddhist monastery, **Magadham Samgham** and identifying the Buddhist scriptures mentioned therein.

The most attractive is its third section which has been added in this Edition for the first time. It deals with (i) Genesis of the Prakrit Languages and (ii) Tradition of Writing, and Scripts, in Ancient India. Both these topics show the painstaking efforts of the author yielding crystal clear results which will go a long way to the researchers and students of history as well as linguistics.

Appendix III with Additional Notes is also a very important addition to this monograph, explaining some of the ambiguous and enigmatic phrases of these epigraphs and discussing some chronological and historical events, *e.g.*, Asikanagara and Kamhavemna, Coyatha, Satakamnim and Bahasatimita, Schism and Kharavela, Kalinga and Jainism, Nandas and Jainism, etc.

The contents of the epigraphs have been so logically and convincingly analysed in a lucid language that a number of reputed scholars, both Indian and foreign, have expressed great applause to it despite of their disagreement on certain terms and their meanings. Doubtlessly, the book is of immense value for students of Ancient Indian History in general and researchers in the field of Indian epigraphy, palaeography, Jainology , etc. in particular, and for which they will always owe to the author. For well bound get-up , flawless printing, clear illustrations and attractive cover jacket, the author and the publisher both deserve our thanks.

- Dr. A. L. Srivastava

Former Reader and Head,
Ancient Indian History,
C.M.P. College, Allahabad University;
C-94, Sector-A, Mahanagar, Lucknow - 226 006

आपकी समस्या – हमारा समाधान : वर्ष-२, अंक ८-६, अग-सित २०००; संपादक - डॉ. अशोक सहजानन्द; प्र. मेघ प्रकाशन, २३६, दरीबा कलां, दिल्ली-११० ००६; पृ. ४८; मूल्य रु. १५/-

जैन समाज में श्रमण वर्ग की आडम्बर-प्रियता के खिलाफ आवाजों को बुलंद करने के उद्देश्य से निकाला गया यह अंक विचार-संप्रेषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। विद्वान सम्पादक ने अपने सम्पादकीय में सही उद्बोधन किया है कि यदि जैन धर्म की अस्मिता को बनाये रखना है और युवा पीढ़ी को धर्म के नाम से ही वितृष्णा से रोकना है तो प्रदर्शन और आडम्बर को प्रश्रय देने वाले हर धार्मिक गुरू का मौन बहिष्कार किया जाना आवश्यक है। डॉ. प्रद्युम्न 'अनंग', श्री मेघराज जैन 'गर्ग', डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा, श्रीमती कुसुम जैन, श्री मोहन राज भंडारी और डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल ने इस विषय पर खुलकर चर्चा की है। हमारे लेख **मुनिधर्म सुरक्षा – एक चिंतनीय विषय** में एक 'श्रमण सुधार परिषद' के गठन का सुझाव भी दिया गया है जिसका न्यूनतम तीन-सूत्री कार्यक्रम हो - १. विद्यमान मुनि वेशधारियों का सम्यक् परीक्षण करके यदि उनका आचार सदोष पाया जाए तो तत्काल दीक्षा छेदकर उन्हें गृहस्थ होने के लिए बाध्य किया जाये, २. यदि कोई गृह त्याग कर साधु-साध्वी होने की इच्छा प्रकट करे तो सर्वप्रथम उसका किसी कुशल मनोरोग-चिकित्सक से स्वास्थ्य परीक्षण करा लिया जाय कि वह किसी मनोव्याधि को तो विरक्ति का पर्याय नहीं मान बैठा है, और ३. इसका सम्यक् परीक्षण कर लिया जाय कि उसका कोई आपराधिक वृत (criminal track record) तो नहीं है।

पं. दुर्गा प्रसाद शुक्ल द्वारा कुंडलपुर के सन्दर्भ में पुरातात्त्विक धरोहर से किन्हीं आचार्य श्री के आशीर्वाद से की जा रही छेड़छाड़ पर की गई विवेचना मननीय और चिंतनीय है।

साहसपूर्ण प्रकाशन के लिए डॉ. अशोक सहजानन्द साधुवाद के पात्र हैं।

शिवांजलि २००० : प्र. शिवसिंह 'सरोज' स्मारक समिति, १०७, कैन्ट रोड, लखनऊ-२२६ ००१; लोकार्पण ८-१०-२०००

कवि और पत्रकार श्री शिवसिंह 'सरोज' (अक्टूबर १६११ - २३/३/१६६३) की स्मृति में **शिवांजलि** का प्रकाशन उनके प्रशंसको द्वारा किया गया है। इसके सम्पादन का गुरुतर दायित्व अधिकांश में श्री वीरेन्द्र 'अंशुमाली' का रहा। हिन्दी पत्रकारिता में प्रायः ६० वर्ष के महती अवदान के अतिरिक्त सरोज जी की प्रतिष्ठा एक कवि के रूप में **लक्ष्मण** महाकाव्य से प्रस्थापित हुई। उनके जीवन और साहित्य पर लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अन्तर्गत सुश्री पुष्पा द्विवेदी ने शोध कार्य भी किया है।

श्री सरोज ने अपने महाकाव्य द्वारा इस मिथक का प्रचार कर दिया कि लखनऊ नगर को **रामायण** कथा के लक्ष्मण जी ने बसाया था। १६६० के दशक में यह विवाद उठा था और हमने गवेषणा करके तत्समय The Pioneer में श्री सरोज के इस प्रवाद का सप्रमाण खंडन किया था। यह नगर मध्यकालीन है और इसके नामकरण का आधार एक लखना मिस्त्री है जिसने यहां के शेख सूबेदारों का किला व महल तामीर किया था और शेख साहव ने खुश होकर आबादी को 'लखनौ'

नाम प्रदान किया था। श्री अंशुमाली आग्रह पूर्वक हमारा लेख 'श्री लक्ष्मण जी कैसे लखनऊ आये' प्रकाशनार्थ ले गये थे परन्तु खेद है कि वह तथ्यों को प्रकाशित करने का साहस नहीं जुटा पाये और मात्र प्रास्ताविक अंश ही प्रकाशित कर सके।

समाज प्रवाह : वर्ष १७, अंक २०३, १५-११-२०००; संपादक - श्री मधु श्री काबरा; प्र. अभिव्यक्ति प्रकाशन ट्रस्ट, गणेश बाग, जवाहर लाल नेहरू रोड, मुलुंड (प), मुंबई-४०० ०८०

यह मासिक पत्रिका, सामान्य हिन्दी पत्रिकाओं से विशिष्ट है। इसमें सामाजिक और राष्ट्रीय समस्याओं पर खुलकर विचार-विमर्श किया जाता है, और किसी दबाव या प्रभाव में लाग-लपेट या लीपा-पोती नहीं की जाती। इसी अंक में संपादकीय 'खुली आंखों का अंधियारा' संपादक की विवेचक दृष्टि का सटीक उदाहरण है। कविता-गीत-गज़ल काफी मात्रा में रहते हैं जो इसे सरसता प्रदान करने के साथ ही विचार-उत्प्रेरक भी होते हैं। प्रायः प्रत्येक पृष्ठ पर एक दीप-वाक्य है जो बहुत सार्थक है, यथा - 'समाज प्रवाह को ग्राहक नहीं, पाठक चाहिए', 'धर्म का मर्म कर्तव्य और करुणा है, भक्ति या मोक्ष नहीं', 'सच्चाई को बहुमत की नहीं, नैतिकता की जरूरत है', आदि।

दिशाबोध : वर्ष ५, अंक १, अक्टूबर २०००; सं. डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा; प्र. प्रबुद्ध जैन विचार मंच, ४६, स्ट्राण्ड रोड, तीन तल्ला, कोलकाता - ७०० ००७

विगत ४ वर्षो में **दिशाबोध** ने धर्म और समाज में व्याप्त अनाचार, कदाचार और भ्रष्टाचार के विरोध में आवाज़ उठाने का दुस्साहसपूर्ण कार्य किया है। इस अंक के सम्पादकीय 'धर्म पत्रकारिता का' में डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा ने उन शुभचिन्तकों की हिदायतों का उल्लेख किया है जिनमें उन्हें अपने पत्रकारिता के धर्म से विरत होने के लिए सावधान किया गया है। समाज की भीरुता का इससे बड़ा और क्या उदाहरण हो सकता है? श्री बगड़ा से मुझे भेंट करने का अवसर मिला है, वह कोई अल्हड़ युवक नहीं हैं वरन् एक प्रौढ़ मनस्वी हैं और सुलझे हुए व्यवसायी भी हैं, अतः उनका अन्ध-श्रद्धा के प्रति आक्रोश निरर्थक नहीं है। श्री बगड़ा से हमारा आग्रह है कि वह सत्य के अन्वेषण और उद्‌घाटन के अभियान को जारी रखें।

सम्पर्क : संकलन - डॉ. अनुपम जैन; प्र. तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर-२५० ४०४; द्वि.सं., शरद पूर्णिमा २००० ई.; पृ. ११२; मूल्य रु. ५०/-

सम्पर्क का प्रथम संस्करण ४ फरवरी को प्रकाशित हुआ था। प्रस्तुत संस्करण में सूचनायें अधिक व्यवस्थित और व्यापक हैं। तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ के पदाधिकारियों और सदस्यों के नाम व पतों के अतिरिक्त दिगम्बर जैन परम्परा में दीक्षित साधु/साध्वियों, जैन विद्या के अध्येताओं, जैन पत्र-पत्रिकाओं, प्रमुख जैन शोध संस्थानों और प्रमुख जैन प्रकाशकों एवं पुस्तक विक्रेताओं की सूचियां, इसमें संकलित हैं। एक स्थान पर व्यवस्थित ढंग से यह सब सूचना संकलित करके डॉ. अनुपम जैन ने उपयोगी कार्य किया है।

श्रमण : वर्ष ५१, अंक १-६, (जून २०००); सं. डॉ. शिव प्रसाद; प्र. पार्श्वनाथ विद्यापीठ, आई. टी.आई. मार्ग, करौंदी, वाराणसी-२२१ ००५; पृ. २२२; मूल्य रु. ५०/-

श्रमण का यह अंक 'पं. दलसुख भाई मालवणिया स्मृति अंक' के रूप में प्रकाशित है, अतः आवरण पर संभवतः उनका चित्र प्रदर्शित है (संभवतः इसलिये क्योंकि अंक में कहीं भी यह उल्लेख नहीं है) और प्रधान संपादक प्रो. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' ने अपने संपादकीय के अन्तिम डेढ़ पृष्ठ में उन्हें स्मरण करने का सौजन्य प्रदर्शित किया है यद्यपि संपादकीय के आद्य साढ़े तीन पृष्ठ पूज्य आचार्य श्री राजयशसूरीश्वर जी महाराज की यशोगाथा को समर्पित हैं। यह इस बात का संकेत है कि अब हमारे विद्वान अपने अग्रज विद्वानों का मृत्यूपरान्त सम्मान भी नं. २ पर ही करेंगे।

श्री शान्तिभाई वनमाली शेठ का परिचय भी पृ. १०६-१० पर कदाचित सम्पादकीय कलम से ही निस्सृत है। इसमें उनके दिवंगत होने का दिनांक ही अंकित नहीं है।

मालवणिया जी और वनमाली शेठ जी पार्श्वनाथ विद्याश्रम/विद्यापीठ से अन्यतम रूप से सम्बद्ध रहे थे। मालवणिया जी १९४४ से १९५७ तक निदेशक रहे थे और शेठ जी १९४५ से १९५० तक संचालक रहे थे। मालवणिया जी का जन्म १९१० में हुआ था और निधन २८-२-२००० को हुआ था। श्री शेठ का जन्म २१-५-१९११ को हुआ था और निधन ११-७-२००० को हुआ था। उनका स्मरण **शोधादर्श** के अंक ४० व ४१ में क्रमशः यथास्थान किया गया है।

शोधादर्श के इसी अंक में जैन साहित्य में शिव से सम्बन्धित डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री रमा कान्त जैन और डॉ. अमरपाल सिंह के आलेख और हमारी टिप्पणी हैं। **श्रमण** के इस अंक में डॉ. (श्रीमती) पुष्पलता जैन का 'महाभारत और जिनसेन के आदिपुराण में वर्णित शिव' और श्री ओमप्रकाश सिंह का 'अमरकोश में वर्णित शिवतत्त्व' उक्त सन्दर्भ में अवलोकनीय हैं। विद्यापीठ में २७-२९ मई, २०००, को सम्पन्न 'भारतीय संस्कृति में शिव' विषयक त्रि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में पठित कतिपय अन्य शोधपत्र, यथा प्रो. भागचन्द्र जैन का 'पुराणों में ऋषभदेव और शिव', डॉ. अशोक कुमार सिंह का 'जैन संस्कृत नाटकों में शिव', डॉ. श्रीप्रकाश पाण्डेय का 'जिनसहस्रनाम में उपलब्ध शिव नाम : एक विवेचन' और डॉ. शिव प्रसाद का 'विविधतीर्थकल्प में उल्लिखित कतिपय ज्योतिर्लिंग' भी उक्त सन्दर्भ में उपयोगी होंगे।

कल्लोल : ले. डॉ. सरयू शहा; प्र. प्रा.सौ. लीलावती कांतीलाल जैन, ५, दिशांत अपार्ट. दीपा हौ. सोसा., संघवी नगर, डी.पी. रोड, पुणे-४११ ००७; **धर्ममंगल**, वर्ष १५, अंक १७, २-११-२०००; पृ.४+७२

मराठी भाषा में रचित ललित कविताओं के इस संग्रह में कवयित्री डॉ. सरयू शहा ने गहन मानवीय संवेदनाओं के साथ दार्शनिक चिन्तन का सुन्दर गुंफन किया है। मराठी भाषा साहित्य के जानकार इन कविताओं से कल्लोल कर विशेष रसास्वादन कर सकते हैं। रेखाचित्रों में कविता के भाव उकेरे गये हैं। सुन्दर सज्जा के साथ प्रस्तुत करने के लिए लीलावती जी साधुवाद की पात्र हैं।

मांस-भक्षण-परिवर्त (बौद्ध महायान सूत्र – लंकावतार सूत्र का अष्टम परिच्छेद) : अनुवादक-सम्पादक डॉ. विजय कुमार जैन व डॉ. (श्रीमती) राका जैन; प्र. श्री दादूलाल जैन स्मृति प्रकाशन, गुनौर (जि. पन्ना); ५/७७६, विराम खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ-२२६ ०१०; अप्रैल २०००; पृ.४+२[illegible]; मूल्य रु. २०/-

डॉ. विजय कुमार जैन केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, लखनऊ, में बौद्ध दर्शन के वरिष्ठ प्रवक्ता हैं और उनकी सहधर्मिणी डॉ. राका जैन छत्रसाल शासकीय महाविद्यालय, पन्ना, में संस्कृत की असिस्टेन्ट प्रोफेसर हैं, अतः ये विद्वान दम्पति साधिकार संस्कृत में निबद्ध **लंकावतार सूत्र** की व्याख्या करने में समर्थ हैं।

बौद्ध धर्म का महायान सम्प्रदाय उत्तर और पश्चिमोत्तर भारत में ई. पूर्व २री-१ ली शती में यूनानी-शक आदि आक्रमक जातियों में बौद्ध धर्म गुरुओं द्वारा अपने प्रभाव-संचय की दृष्टि से उदय में आया और उसके मान्य ग्रन्थों की रचना संस्कृत में हुई। १ली शती ई. में पुरुषपुर (पेशावर) में कुषाण सम्राट कनिष्क (जो स्वयं भी आक्रामक था) द्वारा चतुर्थ संगीति आहूत की गई और उसमें बुद्ध वचनों को पुनः संकलित कर 'महायान' को स्वरूप प्रदान किया गया।

लंकावतार सूत्र के प्रस्तुत संस्कृत मूल पाठ और उसके हिन्दी अनुवाद से स्पष्ट है कि बौद्धों में तत्समय मांसाहार का प्रचलन था, अतः उसकी वर्जना को तार्किक ढंग से प्रचारित करने की आवश्यकता अनुभूत हुई। हमारा यह सुविचारित अनुमान है कि अरब में बौद्ध धर्म के प्रतिरोध में ही इस्लाम का उदय हुआ। 'बुत' के रूप में अभिज्ञात बुद्ध की मूर्तियों को तोड़ना परन्तु हज के दिनों में बौद्ध भिक्षुओं के समान बिना सिला वस्त्र धारण करना और पूरी तरह मांस भक्षण का निषेध करना, तथा साथ ही, बुद्ध के सम्बन्ध में अन्तिम समय में शूकर-मद्दव को खाने के आख्यान से प्रतिशोध स्वरूप शूकर-मांस को सर्वथा अभक्ष्य घोषित कर देना - कुछ ऐसे संकेत हैं जिन पर शोध अपेक्षित है।

भारतीय कला प्रतीक : डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव; प्र. अनुराग प्रकाशन, इलाहाबाद; १९८९; पृ. ६+१५८; मूल्य रु. १०५/-

भारतीय कला प्रतीकों पर यह एकल समग्र ग्रन्थ है और उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत भी है। इसमें स्वस्तिक, श्रीवत्स, चक्र, पञ्चांगुलांक, कलश, वृक्ष, पद्म, मीन-मिथुन, शालभंजिका और दोहद कला-प्रतीकों का साहित्यिक सन्दर्भो और उपलब्ध पुरातात्त्विक अवशेषों के आधार पर विवेचन किया गया है। कलावशेषों में प्राप्त इन प्रतीकों के ३५१ रेखाचित्र भी दिये गये हैं जिनसे प्रतीक की अभिव्यंजना सहज ग्राहय हो जाती है। सारा विवेचन संदर्भ संकेतो से समर्थित है। विषय-प्रवेश में अध्ययन की विधा को और इस अध्ययन के औचित्य तथा महत्व को स्पष्ट किया गया है। चित्रसूची, विस्तृत संदर्भ-ग्रन्थ सूची और शब्दानुक्रमणिका ने अध्ययन की गुणवत्ता को बढ़ाया है।

डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव प्राचीन भारतीय इतिहास, पुरातत्व और कला के गहन अध्येता हैं। भारतीय कला के जिज्ञासुओं और शोधार्थियों के लिए यह प्रस्तुति अत्यन्त लाभकारी है। इसका हिन्दी में प्रणयन भी एक उपलब्धि है। डॉ. श्रीवास्तव इसके लिए बधाई के पात्र हैं।

कच्ची माटी पकती धूप : ले. डॉ. प्रद्युम्न कुमार जैन 'अनंग'; प्र. मेघ प्रकाशन, २३९, दरीबा कलां, दिल्ली-११० ००६; २००० ई.; पृ. २१६; मूल्य रु. १५०/-

कच्ची माटी पकती धूप उपन्यास है। परिवेश आंचलिक है और परिदृश्य सामयिक है। लेखक डॉ. प्रद्युम्न कुमार व्यवसाय से अध्यापक रहे, चिन्तन से दार्शनिक रहे, आस्था से नैष्ठिक जैन श्रावक रहे और साहित्य की विधा में संवेदनशील, सहृदय और समन्वयवादी रहे। इस उपन्यास की परिकल्पना में उनके ये सभी पक्ष उभर कर आये हैं। शैली प्रवाहपूर्ण है। नायक एक आस्तिक जैन अध्यापक और एक समझदार मुसलमान अध्यापक हैं। जो कथा इसमें गूंथी गई हे, उससे उत्तर प्रदेश में साम्प्रदायिक तनाव को झेले हुए सभी हिन्दू-मुस्लिम परिचित हैं। इस कहानी में सदाशयी मुसलमान युवक मास्टर की कुर्बानी, इस्लामी साम्प्रदायिक जुनून के खातिर हो जाती है। गांव की सामाजिक परिस्थिति, दलित शोषण और राजनीति के दांव-पेंचो का भी अच्छा ताना-बाना है। उपन्यास पठनीय भी है और चिन्तनीय भी।

Spiritual Insights : Ishtopadesh and Samadhi Shatak by Pujyapada : Trans. with commentary by C. R. Jain & Raoji N. Shah; Ed. Dr. Jagdish Prasad Jain "Sadhak"; Pub. Radiant Publishers, E-155, Kalkaji, New Delhi-110 019; 2000 A. D.; pp.xii+ 142; price Rs. 300/-

In his lucid Introduction, Dr. J.P. Jain Sadhak, has succintly put the contents of the two didactical treatises engrossed in deep philosophical transaction, of Acharya Sri Pujyapada Devanandi who lived in the 5th century A.D. in Karnataka in the realm of the Ganga dynasty of the Deccan.

Ishtopadesh, properly the **Ishtopadesah,** verily the Discourse Divine, contains 51 *slokas* in chaste Sanskrit, and embodies the essence of Jain spiritual knowledge. It dwells upon the importance of realizing the inner self and sums up the whole theme in v. 51 "as one who maintains the serenity of mind by the effort of his will when he is respected as well as when disrespect is shown to him, and who has freed himself from the attachment to the non-self, obtains the matchless treasure of Moksha, whether he lives in a city or in a jungle". With the Sanskrit text is given the translation and commentary in English by Bar. Champat Rai Jain, Hindi rendering in *doha* by Br. Shital Prasad Ji, Gujrati rendering in couplets by Raojibhai Desai, and Marathi rendering in verse by an unknown poet. A verse index is also given at the end.

Samadhi Shatak, properly the **Samadhisatakam,** contains *Mangalacharana,* 105 verses and *prasasti* in chaste Sanskrit. It is a treatise on concentration or Self-Absorption, the *summum bonum* of *dhyana* or meditation. The whole theme is highly subjective like all the other philosophical systems emanating from the Indian thought process, except the Charvaka or Lokayata system. Only Charvaka has been criticised in v. 101, albeit he is objective, empirical and rational, avoiding the speculative and woolly. Also called the **Samadhitantram,** the object of the treatise is summed up in v. 105 that its study and practice would enable one to reach the summit of Human Life and thus to attain the highest goal of unexcelled perfection. It has been translated into. English with necessary commentary by Raoji Nemchand Shah

and has been rendered into Hindi verse by Kamta Prasad Jain. The Sanskrit text is given and it is accompanied by verse index at the end.

Spiritual Enlightenment : Paramatma Prakash by Yogindu Deva : Trans. R. D. Jain, Com. A.N. Upadhye, Ed. Jagdish Prasad Jain `Sadhak'; pub. Radiant Publishers, New Delhi; 2000 A.D.; pp. xi+ 148; price Rs. 300/-

Parmatma Prakash of Yogindu Deva is a treatise on Jain mysticism, originally the **Joindu-viraiu Parmappa-Payasu** in Apabhramsa language, it was divided into 2 *Adhikaras* (parts) by its Sanskrit commentator Brahmadeva. It contains 353 verses in all. In the first part the exposition deals with *Atman* which is of 3 kinds, *viz; Bahir-Atman* (outer soul), *Antar-Atman* (inner soul) and *Parmatman* (perfect soul). In the second part the exposition relates to *moksha* (freedom or salvation) and *Moksha-phala* (fruit of salvation), the ultimate *Parmatman Pada* (Godhood or divinity), synonymous with Hari, Hara, Brahman, Buddha and Siddha Jinendra Deva.

The original text is given with English translation by B. Rickhab Dass Jain (pub. 1915), summary of its contents, and commentary elucidating the concepts and evaluating the comparative worth, by Dr. A.N. Upadhye, and an introduction by Dr. Jagdish Prasad Jain `Sadhak' giving an insight into the contents and about the author.

It would be pertinent to note here that Joindu is assigned to the 7th century A.D. and is the earliest Jain author who wrote in Apabhramsa.

The Path to Enlightenment : Svayambhu Stotra by Samantabhadra- Trans. Devendra Kumar Goyal; Fore, Jagdish Prasad Jain `Sadhak'; pub. Radiant Publishers, New Delhi; 2000 A.D.; pp. xii+210; price Rs. 400/-

The **Svayambhu-stotram,** also known as the **Samantabhadra-stotram** and the **Chaturvinsati-Jina-stotram,** is reputed to be the composition of Swami Samantabhadra. It is the earliest known *stavana,* or Devotional Poem, composed in praise of the 24 Tirthankaras, in Sanskrit. There are 143 *slokas,* beginning with praise of the first Vrishabha Jaina and ending with 24th Vira Jina, composed in 11 verse-styles (*chhanda*). Interwoven are the dialectics enunciatimg the basic Jain doctrines, and the polemics refuting the other views.

In his learned Foreword Dr. Jagdish Prasad Jain Sadhaka has dwelt upon the conceptuals in the poem.

In his Preface and Introduction, Shri Devendra Kumar Goyal, an engineer by profession but a diligent student of Sanskrit stotras has delineated the contents and referred to the legends associated with Samantabhadra. The poem combines the Bhakti Yoga, Jnana Yoga and Karma Yoga conceptuals in the Jain philosophy. The legends do not enlighten as to the time and any other details of Samantabhadra's life. There is nothing to identify king Sivakoti of

Kashi, nor anything to connect the Samudreshvara temple with a burst Shiva-linga, near Bans Phatak in Varanasi, with Samantabhadra, beyond a conjecture. But the suggestion ought to be probed.

Samantabhadra was one of the greatest masters of Jaina literature, who is placed, on the basis of comparative studies, in the 2nd century A. D. A reference to Dr. Jyoti Prasad Jain's **The Jaina Sources of the History of Ancient India** (pp.143-49) would be useful.

The text carries the translation and commentary in Hindi by Dr. Pannalal Sahityacharya, and the translation into English, with transliteration into Roman and commentary, has been admirably accomplished by Shri Goyal. He has humbly acknowledged to have depended upon the works of Jugal Kishore Ji Mukhtar, basically, and of Prof. Udai Chandra Jain, for his introduction.

- डॉ. शशि कान्त

समाचार विमर्श

- श्री अजित प्रसाद जैन

शिखर जी में पानी-बिजली व्यवस्था फिर चरमराई

''पर्वत स्थित शीतल नाले से मधुबन में होने वाली पेय **जलापूर्ति पिछले कुछ दिनों से ठप्प हो गई है** जिसके परिणामस्वरूप दूर-दराज से आए हजारो तीर्थ यात्रियों को काफी परेशानी का सामना करना पड़ रहा है। बीस पंथी कोठी के प्रबन्धक ने बताया कि **मधुबन में विद्युत आपूर्ति भी ठीक से नहीं हो रही है**। ... अज्ञात असामाजिक तत्वों ने कुछ दिनों पूर्व शीतल नाले के पास से आपूर्ति के लिए लगे पाईपों में से दो पाईपों को गायब कर दिया, जिससे समूचे मधुबन क्षेत्र की जलापूर्ति ठप्प हो गयी है। **विभागीय लापरवाही व सुरक्षा के अभाव में** शीतल नाले से होने वाली जलापूर्ति आए दिन बाधित होती रहती है। पर्वत पर बसे गांव के लोगों द्वारा भी यदा-कदा जलापूर्ति बाधित कर दी जाती है। शीतल नाला ही एक ऐसा जल स्रोत है जो समूचे मधुबन को पानी उपलब्ध कराता है। भीड़ वाले दिनों में जलापूर्ति बाधित हो जाने पर संस्थाओं को टैंकों से पानी लाने की व्यवस्था करनी पड़ती है। ... मधुबन में दो ट्रान्सफार्मरों के जल जाने से पिछले कुछ हफ्तों से मधुबन की आधी से ज्यादा आबादी प्रभावित पड़ी है तथा हजारों तीर्थयात्रियों को कष्टकर स्थिति का सामना करना पड़ रहा है....।''

- **सम्मेदाचल रश्मि,** २० अक्टूबर, २०००

यह हाल है जल विद्युत आपूर्ति की मूलभूत व्यवस्था का जैनधर्म के सबसे बड़े तीर्थ क्षेत्र पर जहां प्रायः पूरे वर्ष ही सहस्रों की संख्या में धर्मनिष्ठ तीर्थयात्री आते जाते रहते हैं तथा त्यागी व्रती मुनि-आर्यिकाओं का भी अच्छा खासा जमावड़ा बना रहता है। इस तीर्थराज के विकास के लिए बिहार सरकार द्वारा एक शासकीय समिति गठित की हुई है जिसमें उच्च अधिकारियों के अतिरिक्त दिगम्बर-श्वेताम्बर - दोनो आम्नायों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हैं। विगत कुछ वर्षो से दिगम्बर जैन समाज द्वारा गठित 'मधुबन विकास समिति' भी इस क्षेत्र के समग्र विकास के लिए संकल्पित हो कर कार्यरत है तथा अब तक नए निर्माण कार्यो पर लाखों रुपया व्यय कर चुकी है। जल-विद्युत आपूर्ति की स्थिति तो शोचनीय है ही, ईसरी-मधुबन मार्ग में तथा पर्वत के ऊपर यात्रियों के लूटे जाने के समाचार भी आए दिन प्रकाश में आते रहते हैं। हमारी समझ में इस महान् तीर्थ क्षेत्र को नए महामंदिरो, होटलों जैसी सर्व सुविधा युक्त धर्मशालाओं, अतिथि गृहों की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी जल-विद्युत आपूर्ति को तथा सुरक्षा व्यवस्था को पूर्ण रूप से सुदृढ़ कराने की है। क्या हम आशा करें कि तीर्थराज के विकास के लिए समर्पित सभी समितियां एवं धर्म समाज नेता सर्वप्रथम इन मूलभूत आवश्यकताओं को सुनिश्चित कराने में अपना सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित करेंगे?

श्री सम्मेद शिखर जी में जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर

"तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर जी में जैन युवा संगठन कलकत्ता द्वारा निर्मित श्री दिगम्बर जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर का उद्‌घाटन आचार्य श्री संभव सागर जी व आ. श्री सन्मति सागर म. के सानिध्य में तथा विशाल जन समुदाय की उपस्थिति में दि. २० मार्च, २०००, को हुआ। आ. श्री संभव सागर म. ने अपने आशीर्वचन में कहा कि इस अस्पताल से मधुबन तथा आस-पास के गांवों में रहने वाले हजारो लोग लाभान्वित होंगे। संगठन के सदस्यों को आशीर्वाद देते हुए आचार्य श्री ने कहा कि सम्मेद शिखर में अस्पताल का निर्माण कराकर उन्होंने एक अनुकरणीय कार्य किया है। .... इस हास्पिटल में अभी Outdoor Department, ECG, Oxygen चालू किया गया है एवं निरन्तर दो MBBS डाक्टरों एवं कम्पाउन्डर की सेवाएं भी उपलब्ध हैं तथा रोगियों को सभी आवश्यक औषधियां निःशुल्क दी जाती हैं। आने वाले दिनों में X-Ray तथा पैथोलोजी विभाग भी जनसाधारण के सेवार्थ चालू किए जाएंगे। ..."

– **जैंन मित्र**, ८ जून, २०००

मानव मात्र के सेवार्थ प्रारम्भ किए गए इस अस्पताल का हम स्वागत करते हैं तथा इसकी स्थापना के लिए दिगम्बर जैन युवा संगठन कलकत्ता का अभिनन्दन करते हैं। किन्तु अहिंसा महाव्रत के धारी दो वरिष्ठ दिगम्बर जैन आचार्यो द्वारा इसके उद्‌घाटन समारोह को अपना सानिध्य एवं आशीर्वाद प्रदान करना कुछ विचित्र लगता है। यह सर्वविदित है कि अधिकांश एलोपैथिक औषधियां मांस उत्पादों से निर्मित होती हैं और जो नहीं भी होती उनमें से अधिकांश को कैपसूलों में ही दिया जाता है जो मांस-उत्पाद ही है। अतः हमारे इन पू. आचार्यो को हिंसा की अनुमोदना का दोष तो लगा ही। अच्छा होता यदि हमारे पूज्य आचार्य-आर्यिकाएं तीर्थराज पर सुयोग्य वैद्यों की देखरेख में चलने वाले एक उच्च कोटि के आयुर्वेद चिकित्सालय की स्थापना की प्रेरणा समाज के दानवीरों को देते, जिससे सम्बद्ध एक आधुनिक उपकरणों से युक्त शुद्ध औषधि निर्माणशाला भी होती जिसमें श्री सम्मेद शिखर जी के वनों में उत्पन्न होने वाली जड़ी-बूटियों का भी उपयोग किया जाता। इस प्रकार हमारे त्यागी व्रती श्रावकों सहित साधुओं को भी निर्दोष चिकित्सा व अहिंसक औषधियां उपलब्ध हो जातीं।

'वीर' और अब 'अतिवीर' भी

"भारतीय जैन मिलन के अन्तर्गत जैन मिलन फाउन्डेशन की **शानदार बैठक** फाउन्डेशन के ट्रस्टी **अतिवीर** विजय कुमार जैन, संयोजक प्राथमिक शिक्षा, भारतीय जैन मिलन के सौजन्य से प्रीति विहार दिल्ली के **शानदार हाल** (झंकार रेस्टोरैंट) में दि. २३ जुलाई ...... को सम्पन्न हुई। .... काफी संख्या में **अतिवीर** ट्रस्टीगण बैठक में दूर-दूर से उपस्थित हुए। भा. जैन मिलन के राष्ट्रीय अध्यक्ष **अतिवीर** सुरेश चन्द्र जैन देहरादून से .... नहीं पधार सके ......।"

- **भारतीय जैन मिलन समाचार**, अगस्त २०००

भारतीय जैन मिलन में प्रारम्भ से ही सभी सदस्यों को 'वीर' विशेषण के साथ संबोधित करने की प्रथा रही है। यह कदाचित् इस बात पर सार्वजनिक रूप से बल देने के लिए किया गया होगा कि वीर पुरुष ही सच्चा अहिंसक हो सकता है तथा अहिंसक होना कायरता की निशानी नहीं है।

किन्तु अब ऐसा लगता है कि मिलन के केन्द्रीय पदाधिकारीगणों को 'वीर' सम्बोधन से आम आदमी की गंध आने लगी है तथा उनके विशिष्ट दर्जे को दर्शाने के लिए 'अतिवीर' विशेषण प्रयुक्त करना प्रारम्भ कर दिया गया है।

तीर्थंकर वर्द्धमान के बाल्यकाल में ही उनके अदम्य साहस एवं वीरता के कार्यों को देखकर देवों ने उन्हें 'वीर' एवं 'अतिवीर' के विशेषणों से अलंकृत कर उनकी वन्दना-स्तुति की थी। वह तो चतुर्थ काल था। किन्तु अब इस काल में किसी उपाधि के धारण करने वाले में उस उपाधि के अर्थ में निहित योग्यता का भी होना आवश्यक नही है। हम भारतीय जैन मिलन द्वारा अवतरित इस युग के इन नए 'अतिवीरों' का अभिनन्दन करते हैं तथा आशा करते हैं कि कुछ अभिनव संस्थाओं के कल्पनाशील संयोजक इस युग के 'महावीरों' का भी थोक के भाव में अवतरण करेंगे।

पाठ्य पुस्तक से आपत्तिजनक अंश हटाये जाने की घोषणा

"दिगम्बर जैन महासमिति ने भगवान ऋषभदेव निर्वाण महामहोत्सव समिति के साथ मिलकर विगत चार वर्षो से पाठ्य पुस्तकों में निहित जैन धर्म विषयक भ्रांतियो के निराकरण हेतु एक सशक्त अभियान छेड़ रखा था। ..... देश के मनीषी विद्वानों एवं कुलपतियों द्वारा की गई सर्वसम्मत अनुशंसा तथा महासमिति के वरिष्ट कार्यकर्ता श्री खिल्लीमल जैन एडवोकेट द्वारा किए गए सतत् सघन पत्राचार .... एवं अनेक धार्मिक सामाजिक संगठनों द्वारा शासन पर बनाए गए दबावों के कारण केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री माननीय श्री मुरली मनोहर जोशी ने अपने इन्दौर-उज्जैन प्रवास में यह घोषणा की कि **NCERT द्वारा कक्षा ११ हेतु प्रकाशित इतिहास की पाठ्य पुस्तक "प्राचीन भारत" से "जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म' विषयक पाठ हटा दिया जाएगा।"**

– **दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका,** १७-३० सितम्बर, २०००

यदि माननीय मंत्री जी की घोषणा की सही रिपोर्टिंग हुई है तो हम यह समझने में असमर्थ हैं कि इसमें प्रमुदित होने की क्या बात है। उक्त पाठ के हटा दिए जाने से तो विद्यार्थी यही समझेंगे कि उस काल में भारत में जैन धर्म व बौद्ध धर्म का अस्तित्व ही नहीं था। हां, यदि मंत्री जी यह घोषणा करते कि उक्त पाठ को समुचित रूप से संशोधित करा दिया जाएगा तो बात और थी।

जैन संत को 'पामिस्ट आफ दि मिलेनियम' अवार्ड

"नई दिल्ली, २७ अगस्त – नव तेरापंथ के उपाचार्य श्री मानमल जी म. को भारत निर्माण संस्था की ओर से 'पामिस्ट ऑफ दि मिलेनियम' (सहस्राब्दि हस्तरेखा विशारद) एम.सी. भंडारी मेमोरियल अवार्ड, से सम्मानित किया गया। दिल्ली राज्य के शिक्षा व उद्योग मंत्री ने एक भव्य समारोह में उपाचार्य जी को पुरस्कार प्रदान किया। उपाचार्य श्री को इसके पूर्व 'ज्योतिष रत्न' व

'श्रमण रत्न' उपाधियो से अलंकृत किया जा चुका है।"

- **तेरापंथ भारती**, १५ सितम्बर, २०००

समाचार को पढ़कर हर्ष हुआ, उपाचार्य श्री कृपया हमारी बधाई स्वीकार करें। हमें और भी अधिक हर्ष होता यदि वे गृह त्यागी जैन संत न होकर मात्र गृहस्थ श्रावक होते। हस्त रेखा विशारद (तथा उसके पूर्व ज्योतिष रत्न) की ख्याति अर्जित करने में उन्हे अपनी इन विद्याओं का व्यापक रूप में प्रयोग/प्रदर्शन करना पड़ा होगा तथा उन्होंने अनेकों को उपकृत किया होगा, और चूंकि उन्होंने अवार्ड के साथ दी जाने वाली सम्मान राशि स्वीकार की है इससे यह अनुमान लगाना भी कदाचित् असंगत नही होगा कि वे उपकृत व्यक्तियों से भेंट (या फीस) भी स्वीकार करते रहे होंगे तथा उनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष बैंक बैलेस भी होगा। तिस पर भी वे 'श्रमण रत्न' (अर्थात्, आदर्श संत) की उपाधि से अलंकृत हैं। निवृत्ति एवं वीतरागता प्रधान जैन श्रमण का यह कैसा संस्करण है, हम समझने में असमर्थ हैं।

२१वीं सदी का पुरुषमेध सोत्रामणी महायज्ञ

"**हरिद्वार,** ७ नवम्बर – आदि संस्कृति और ऋषि परम्परा के अनुरूप विश्व कुंडलिनी जागरण व राष्ट्र समृद्धि के लिए अखिल विश्व गायत्री परिवार के तत्वावधान में आज **पुरुषमेध व सोत्रामणी प्रयोगों से युक्त** सृजन संकल्प विभूति महायज्ञ भव्य देव पूजन के साथ शुरू हुआ। युग ऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य के प्रतिनिधि के रूप में शांतिकुंज प्रमुख शैल बाला पण्ड्या ने बताया कि यह महायज्ञ विश्व कुण्डलीय जागरण कर मानवीय चेतना को विकसित करेगा....।

विशाल १५०२ कुण्डीय यज्ञशाला में बैठे लगभग २५००० गायत्री साधकों के समक्ष मंच से यज्ञारम्भ की घोषणा वैदिक मंत्रो के पाठ के साथ पंचम स्वर में की गई, ...।

उत्तरांचल के प्रथम मुख्यमंत्री नित्यानंद स्वामी भी शपथ ग्रहण करने के तुरन्त बाद सृजन संकल्प विभूति महायज्ञ में भागीदारी करने के उद्देश्य से अपने सहयोगी मंत्रियो सहित यहां पहुंचे। .... श्री स्वामी ने इस महायज्ञ को ऐतिहासिक आयोजन बताते हुए कहा कि उत्तरांचल के जन्म की औपचारिकताएं महायज्ञ काल में पूर्ण होना शुभ लक्षण है। .... मंत्री श्री मातबर सिंह कण्डारी ने कहा कि इस महापूर्णाहुति का विश्वव्यापी प्रभाव होने से सार्थक परिणाम सामने आंएगे जो कि उत्तरांचल की धरती के लिए गौरव की बात होगी ....। बताया गया है कि इस महायज्ञ में गायत्री परिवार के ५० लाख श्रद्धालुओं ने भाग लिया।"

- **दैनिक जागरण**, ८ व १२ नवम्बर २०००

यह पढ़कर चौंकिए मत कि वैदिक यज्ञो में सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वफलदायी माने जाने वाले **पुरुषमेध महायज्ञ** की परम्परा आज भी जीवित ही नही है वरन् राजनेताओं की श्रद्धा का भी केन्द्र है। यह दूसरी बात है कि देश के वर्तमान कानूनों के चलते इस महायज्ञ में भाग ले रहे याजक एवं पुरोहित गण यज्ञ की पूर्णता के लिए आवश्यक नर बलि का प्रबन्ध करने में अपने को असहाय पाते

हों। प्राचीन जैन आख्यानको में एक कथा आती है जिसमें एक हिंसा-भीरू महिला ने आटे से बने मुर्गे की बलि देवी को देकर बलि की औपचारिकता पूरी की। कथा में इसका उल्लेख नहीं मिलता कि महिला अपनी इस चतुरता से देवी को छलने में भी सफल हुई कि नहीं (यद्यपि जैन दृष्टि से तो वह भाव हिंसा की दोषी मानी गई ही)। पुरुषमेध महायज्ञ के धर्मनिष्ठ आयोजकगण इस आख्यानक से प्रेरणा लेकर ऐसा ही कोई विकल्प खोज कर पुरुष बलि की अनिवार्यता की औपचारिकता पूरी कर सकते हैं।

चन्द्रमा पर इंसान के पैर अभी पड़े ही नहीं - अमरीकी दावा झूठा

"२२ जुलाई, १९६९, को नील आर्मस्ट्रांग और एडविन एल्ड्रिन ने क्या वास्तव में चन्द्रमा की यात्रा की थी? मनुष्य के इतिहास की इस महानतम उपलब्धि के ३२ साल बाद अमरीका के ही एक वैज्ञानिक राल्फ रेने ने इस तथ्य को चुनौती देते हुए कहा है कि अमरीकी अंतरिक्ष संस्था नासा ने ट्रिक फोटोग्राफी के जरिए संसार को बेवकूफ बनाया और सच यह हैं कि आज तक चन्द्रमा पर किसी मनुष्य ने पांव नही रखा है।

रेने को सबसे पहला शक इस बात पर हुआ था कि चन्द्रमा पर लगाया **अमरीका का झंडा हवा में लहराता कैसे दिखाई पड़ रहा है** जबकि चन्द्रमा पर किसी किस्म का वायुमंडल या हवा है ही नहीं। रेने के अनुसार चालीस अरब डालर का **अपोलो अभियान कुल मिला कर धोखा** था और इसकी उच्चस्तरीय जांच होनी चाहिए। उन्होंने एक किताब की शक्ल में अपने तर्क-दस्तावेज सामने रखे हैं और संसार को चुनौती दी है कि उनके सवालों का जवाब देकर बताए। .... रेने का कहना है कि तस्वीरों और धुंधले फुटेज के अलावा मनुष्य की चन्द्रमा यात्रा का और कोई सबूत नहीं है और इसमें भी कई धांधयियां हैं। ऐसा इसलिए हुआ कि दुनियां की उच्चतम तकनीक से लैस नासा ने सीधी शूटिंग का फुटेज कभी दिखाया ही नही। चन्द्रमा यात्रा की उपलब्धियों के तौर पर **जो फिल्म दुनिया भर में दिखाई गयी है वह दरअसल ह्यूस्टन में एक टी.वी. से खींची गयी थी** और इसीलिए धुंधली है। ..... अपोलो-२२ के दोनो यात्री काफी देर तक चहल कदमी करते दिखाई पड़े और एक बार भी आउट आफ फोकस नहीं हुआ। जब यात्री दो ही थे तो रेने ने पूछा है कि फोटोग्राफी कौन कर रहा था। इसी तरह अमरीका के झण्डे की लम्बी छाया चन्द्रमा की सतह पर पड़ती दिखाई दी लेकिन जो यात्री फोटो खींच रहे थे उनकी छाया चित्र में नहीं है। .... आदि आदि।"

- **राष्ट्रीय सहारा**, २१ नवम्बर, २०००

इस समाचार को पढ़कर श्रद्धालु जन अवश्य ही राहत की सांस लेंगे कि आधुनिक विज्ञान-अनुसंधान भी उनकी आस्था को अभी तक झुठला नहीं पाया कि चन्द्रमा हमारी पृथ्वी की तरह कोई ग्रह (या उपग्रह) नही है बल्कि ज्योतिष देव चन्द्रेन्द्र का विमान है जिस पर मनुष्य के चरण पड़ने संभव ही नही हैं।

भाषा समिति का विचित्र पालन

दिगम्बर जैन समाज अपनी श्रमण संस्था को जितना सम्मान देता है, जितनी श्रद्धा से उनकी पूजा-अर्चना करता है, वैसा अन्यत्र कम ही मिलेगा। अनेक श्रद्धालु जन दिगम्बर जैन मुनि को जीवन्त तीर्थंकर का स्वरूप ही मानकर उनकी चरण वन्दना करते हैं। मुनि के त्रयोदश विध चरित्र का एक प्रमुख अंग भाषा समिति (या वाणी संयम) का पालन करना भी है। किन्तु आज कतिपय दिगम्बर मुनि (जिनमें कुछ दीक्षा-वयवृद्ध आचार्य भी शामिल हैं) जिस प्रकार भाषा समिति को ताक पर रखकर समाज के विभिन्न वर्गों के प्रति व्यंग्यपूर्ण अशिष्ट भाषा का यदा-कदा खुलेआम उपयोग करते देखे जा रहे हैं उससे तो यह आशंका होती है कि जब इनसे वाणी संयम ही नही पलता तो अन्य इन्द्रियों का भी संयम क्या पल पाता होगा।

कुछ समय पूर्व एक आचार्य श्री ने फरमाया था कि सभी जैन विद्वान 'कुत्ते' हैं। एक अन्य आचार्य श्री ने उन्हे 'बिच्छू' की संज्ञा से विभूषित किया था। अभी **दिशाबोध** (अगस्त २०००) में श्री मिलाप चंद डंडिया ने एक बहुमान्य युवा मुनि प्रवर के विगत जयपुर चातुर्मास में दिए गए प्रवचनों के निम्न अंश उद्धृत किए हैं - "यहां की महिलाएं वेश्याएं हैं ....। जयपुर जैन नगरी नहीं पाप नगरी है। .... अरे देखना कहीं चूलगिरि वालों का (चूलगिरि क्षेत्र के पदाधिकारियों के प्रवचन सभा में उपस्थित न होने पर) भी मिलाप चंद की तरह एक्सीडेन्ट (बस से कुचलकर मरण) तो नहीं हो गया ....।"

इन साधुओ द्वारा भाषा समिति की घोर उपेक्षा किये जाने से तो उनके दीक्षा गुरुओं पर भी उंगली उठती है जिन्होंने पात्र-अपात्र का विचार किये बिना उन्हें मुनि दीक्षा दे दी।

जैन मन्दिर बनाम मैरिज हाउस

"आचार्य सन्मति सागर जी की प्रेरणा से निर्मित शिवपुरी का दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ मन्दिर **उन्ही आचार्य श्री के कारण** अब किराए पर शादी विवाह हेतु दिया जा रहा है।"

- **जैन गज़ट**, २५ मई, २०००

हम उन आचार्य की सूझबूझ की दाद देते है जिन्होंने वीतरागता की कार्यशाला जिन मन्दिर को महान् मोहराग के कारण शादी-विवाह गृह के रूप में परिणत कर दिया तथा इस प्रकार जैन मन्दिर को अर्थोपार्जन का साधन बनवा दिया। हमे इस समाचार पर सहसा विश्वास नही होता। किन्तु यदि यह सत्य है तो कदाचित् ऐसे ही गुरुओं को लक्ष्य करके कविवर भूधरदास कह गए हैं - "ते कुगुरु जन्म-जल उपल नाव"।

नन्दीश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक

"**प्रतापगढ़** में दि. १५-७-२००० को पूज्य पट्टाचार्य श्री अभिनन्दन सागर म. के ससंघ (१८ पिच्छी) चातुर्मास स्थापना के सुअवसर पर संघ सानिध्य में प्रातः १००८ श्री नन्दीश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक हुआ।"

- **जैन मित्र**, ३ अगस्त, २०००

दिगम्बर मन्दिरों में भगवान के रूप में केवल तीर्थंकरों तथा सिद्ध भगवानों की ही पूजा-अर्चना करने की परम्परा है। कोणेश्वर, बटेश्वर, पिप्पलेश्वर (महादेव) की तर्ज पर जैन धर्म में ये कौन से नन्दीश्वर भगवान अवतरित हो गए, यह हमारी समझ में नहीं आया।

जैन पौराणिक कथ्यों के अनुसार मध्यलोक के आठवें द्वीप का नाम नन्दीश्वर द्वीप है। इस द्वीप तक मनुष्य की पहुंच नहीं है पर यहां अकृत्रिम जिन चैत्यालय हैं। अष्टान्हिका पर्व में देवगण नन्दीश्वर द्वीप जाकर सिद्ध भगवान की पूजा अर्चना करते हैं तथा उनका अनुकरण कर भरत क्षेत्र के श्रावकगण भी अष्टान्हिका पर्वो में बड़े समारोह पूर्वक सिद्धचक्र विधान की पूजा करते हैं। सिद्ध भगवान निराकार होते हैं, उनका कोई नाम विशेष भी नहीं होता। जाहिर है इन अकृत्रिम चैत्यालयों में तीर्थंकर प्रतिमायें नही होतीं, अन्यथा देवों द्वारा उनकी पूजा अर्चना का भी उल्लेख होता। हमारा शास्त्र ज्ञान अत्यल्प है। शास्त्र-मर्मज्ञ पाठकों से निवेदन है कि वे नन्दीश्वर भगवान विषयक हमारी उलझन का समाधान करने का अनुग्रह करें।

अभिनन्दन

सुश्री सरोज जैन, इन्दौर, को उनके शोध-प्रबन्ध **प्रमुख जैन पुराणों में प्रतिपादित राजनीति का समीक्षात्मक अध्ययन** पर इन्दौर विश्वविद्यालय ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

श्री अनिल चौधरी, दमोह, को **डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य का व्यक्तित्व और कृतित्व** पर सागर वि.वि. ने पी-एच.डी.उपाधि प्रदान की।

कुमारी सविता जैन, सागर, को उनके शोध-प्रबन्ध **जयोदय और वृहत्त्रयी का तुलनात्मक अनुशीलन** पर बरकतुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

महासती श्री हेमप्रभा 'हिमांशु', कुचेरा, को उनके संस्कृत शोध-प्रबन्ध **जैन स्तोत्र साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन** पर जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

चेन्नई उच्च न्यायालय में न्यायाधीश **श्री नागेन्द्र कुमार जैन** को **मुख्य न्यायाधीश** पद पर नियुक्त किया गया।

ज्ञानदीप, तेराताली, मंगलकलश, तलवार तथा कीलों पर नृत्य के लिये विख्यात, भीलवाड़ा निवासी १२-वर्षीया **कु. वीणा अजमेरा** का नाम **लिमका बुक ऑफ रिकार्ड्स २००१** में उनकी अतिविशिष्ट उपलब्धियों को अधिमान्य करते हुए सम्मिलित किया गया।

पद्मभूषण श्रीमती शरन रानी बाकलीवाल को लखनऊ में **राय उमानाथ बली संगीत सम्मान** से सम्मानित किया गया।

श्री महावीर कासलीवाल, मुम्बई, को विज्ञान एवं तकनीकी उद्योग क्षेत्र में स्वदेशीकरण के लिये महत्वपूर्ण योगदान हेतु, इन्टरनेशनल बिजनेस काउन्सिल द्वारा **मदर इंडिया इंटरनेशनल अवार्ड** प्रदान किया गया। उन्हें **नेशनल गोल्ड स्टार अवार्ड** भी प्रदान किया गया।

नागपुर के इतवारी लाल इमली परिसर में आग को बुझाने में साहस का परिचय देने हेतु श्री **अजय टक्कामोरे** को पुलिस आयुक्त नागपुर द्वारा सम्मानित किया गया।

पं. नाथूलाल जैन शास्त्री (इन्दौर) को आगमिक ज्ञान के संरक्षण हेतु **आ. शांतिसागर छाणी स्मृति श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार, डॉ. जयकुमार जैन** (मुजफ्फरनगर) को जिनवाणी प्रभावना हेतु **आ. सूर्यसागर स्मृति श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार, डॉ. शेखरचन्द्र जैन** (अहमदाबाद) को जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान हेतु **आ. विमलसागर (भिण्ड) स्मृति श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार, डॉ. बी. के. खड़बड़ी** (मिरज) को जैन विद्याओं के पारम्परिक अध्ययन/अनुसंधान के क्षेत्र में समग्र योगदान हेतु **आ. सुमतिसागर स्मृति श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार** तथा **डॉ. (श्रीमती) रश्मि जैन** (फिरोजाबाद) को जैन धर्म-दर्शन के क्षेत्र में लिखी मौलिक शोधपूर्ण अप्रकाशित कृति हेतु **मुनि वर्द्धमान सागर स्मृति श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार**, वर्ष २०००, प्रदान किये गये और **श्री प्रेमचन्द जैन 'तेलवाले'** (मेरठ) को

वर्ष २००० का **सराक पुरस्कार** प्रदान किया गया।

श्री दिगम्बर जैन आदर्श महिला विद्यालय, श्री महावीर जी, की **ब्र. कमलाबाई** को भारत सरकार द्वारा **श्रीमती अहिल्यादेवी होल्कर स्त्री शक्ति पुरस्कार** से सम्मानित किया गया।

हल विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर **श्री भीखू भाई पारख** का ब्रिटेन की लार्ड सभा में मनोनयन किया गया।

श्री रामगोपाल जैन, पटना, को बिहार सरकार द्वारा **बिहार राज्य धार्मिक न्यास बोर्ड का अध्यक्ष** मनोनीत किया गया।

हार्ट हास्पिटल, जयपुर, के संचालक **डॉ. रवीन्द्र जैन टोंग्या** को रोगियों की विशिष्ट सेवा एवं चिकित्सा हेतु **फैलों ऑफ एडिनबर्ग रायल कालेज ऑफ फिजिशियन्स** के प्रतिष्ठित अवार्ड से सम्मानित किया गया।

श्री प्रदीप कासलीवाल (इन्दौर) दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्वाचित हुए और उन्होंने **श्री माणिकचन्द जैन पाटनी** (इन्दौर) को राष्ट्रीय महामंत्री, **श्री कान्तिचन्द जैन बड़जात्या** (दिल्ली) को राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष, **श्री महेन्द्र कुमार जैन** (दिल्ली) को अतिरिक्त महामंत्री और **डॉ. अनुपम जैन** (इन्दौर) को **महासमिति पत्रिका** का प्रधान सम्पादक मनोनीत किया।

डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा (कलकत्ता) को ऑल इण्डिया सोसायटी फार प्रिवेन्शन ऑफ क्रूएल्टी टु द एनीमल्स की कार्यकारिणी समिति में सदस्य मनोनीत किया गया।

भगवान महावीर फाउण्डेशन, चेन्नई, द्वारा सर्वजीव मंगल प्रतिष्ठान के संस्थापक-अध्यक्ष **डॉ. कल्याण गंगवाल** को, **कैंसर इन्स्टीट्यूट चेन्नई** को तथा **आदिवासी महिला समिति,** अगरतला (त्रिपुरा), को **महावीर अवार्ड-२०००** से पुरस्कृत एवं सम्मानित किया गया।

जलगाँव में रतनलाल सी. फाउण्डेशन की ओर से अहिंसात्मक चिकित्सा पद्धति के क्षेत्र में योगदान हेतु जोधपुर के **श्रीं चंचलमल चोरड़िया** को और अहिंसा के क्षेत्र में विविध योगदान हेतु **डॉ. नेमीचन्द जैन** (इन्दौर) तथा **डॉ. उदयलाल जारोली** को **अहिंसा कार्यकर्ता अवार्ड** से सम्मानित किया गया।

२५ नवम्बर को **बाबू महावीर प्रसाद जैन,** हिसार, ने शताब्दी पूरी की और २६ जुलाई, १६२२, से हिसार में ही वकालत के पेशे में सतत संलग्न रहकर अभी भी कार्यरत ७८-वर्षीय लीगल प्रैक्टिस का कीर्तिमान स्थापित कर वह **लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड्स** में उल्लेख का पात्र बने।

उपर्युक्त सभी सम्मानित महानुभावों का उनकी उपलब्धि के लिए **शोधादर्श** परिवार अभिनन्दन करता है और उन्हें अपनी शुभकामना प्रेषित करता है।

समाचार विविधा

तत्त्वार्थ सूत्र पर संगोष्ठी : सांगली (महाराष्ट्र) में १८-१९ अक्टूबर, २००० ई., को आचार्य उमास्वाति प्रणीत सिद्धान्त, दर्शन और अध्यात्म के ग्रन्थ **तत्त्वार्थसूत्र** पर **प्रगति आणि जिनविजय** के सम्पादक डॉ. सुभाषचन्द्र अक्कोले, जयसिंहपुर, की अध्यक्षता में दो-दिवसीय विद्वत् संगोष्ठी सम्पन्न हुई। उद्घाटन सांगली-मिरज-कुपवाड महानगरपालिका के महापौर श्री सुरेश पाटिल ने किया और १५ विद्वानों ने इस ग्रन्थ के विभिन्न पक्षों पर अपनी सारगर्भित वक्तृताएं दीं। इस अवसर पर पाकेट साइज में मराठी अनुवाद सहित प्रकाशित **तत्त्वार्थसूत्र** का लोकार्पण डॉ. वीरेन्द्र हेगड़े द्वारा किया गया।

जैन धर्म-संवर्धन विद्वत् संगोष्ठी : अहमदाबाद में २१ व २२ अक्टूबर को जैनधर्म संवर्धन संस्थान की ओर से प्रा. निहालचन्द जैन (बीना) के संयोजन में जैन धर्म संवर्धन विद्वत् संगोष्ठी ४ सत्रों में सम्पन्न हुई। प्रथम सत्र की अध्यक्षता पं. रतनलाल जैन शास्त्री (इन्दौर) ने की और इसमें डॉ. सुशील जैन (मैनपुरी) ने 'जैन धर्म एवं स्वास्थ्य' पर वार्ता दी, द्वितीय सत्र की अध्यक्षता प्रा. नरेन्द्र प्रकाश जैन (फिरोजाबाद) ने की और इसमें डॉ. अनिल कुमार जैन (अहमदाबाद) ने 'जैन धर्म और पर्यावरण' पर तथा प्रा. निहालचन्द ने 'पंचाणुव्रतों में शिक्षा के तत्व' पर वार्ता दी। डॉ. सुशील जैन की अध्यक्षता में सम्पन्न तृतीय सत्र में ब्र. प्रभा जी (जबलपुर) ने 'ध्यान एक वैज्ञानिक अनुशीलन' पर और प्रा. नरेन्द्र प्रकाश ने 'अनेकान्त दर्शन की व्यावहारिक पृष्ठभूमि' पर अपने विचार व्यक्त किये। चौथे समापन सत्र में पं. रतनलाल शास्त्री की 'जैन दर्शन में संयम एवं स्वरूपाचरण चारित्र' पर तथा मुनि श्री प्रसन्नसागर जी की 'जैन दर्शन में मंत्र-यंत्र-तंत्र' पर वार्ताएं हुईं। समागत सभी विद्वानों का सम्मान किया गया।

भारत सरकार का "भारत माता" को नायाब तोहफा : आजादी बचाओ आन्दोलन के श्री राजकुमार बरड़ीया (परवाड़, जि. अमरावती,-४४४ ८०५) ने सूचना दी है कि पिछले दिनों डब्लू. टी. ओ., दूसरे शब्दों में अमेरिका, की शर्तो के अनुसार बनाई गई नई आयात-निर्यात नीति की भारत सरकार ने घोषणा कर पहली किश्त में ७१४ उत्पादों पर पाबंदी हटा ली है। इनमें ८० वस्तुयें कृषि उत्पाद हैं जैसे कि आलू, शकरकन्द, नारियल, मक्का, चावल, गेहूं। लघु उद्योग क्षेत्र के लिये आरक्षित आइटमों में से ६० बाहर कर दिये गये हैं, यथा - कच्चा रेशम, रेशमी धागा, नारियल रेशा – कोयर, मोमबत्तियां, लोहे की बाल्टियाँ। यही नहीं, अप्रैल २००० के बाद जो सामान अमरीका से मुक्त आयात होकर आ सकेंगे उनमें बड़ी संख्या में सुअर, चिड़ियों, बत्तखों, खरगोशों, मछलियों तथा अन्य निरीह प्राणियों के मांस तथा खून आदि भी शामिल हैं। आखिर एक कृषि प्रधान, धर्मप्राण, सर्वाधिक प्राचीन गौरवमयी सभ्यतावाले महानतम राष्ट्र में विदेशों से आटा, चावल, नमक, सिगरेट, बीड़ी, कुत्ते व बिल्ली के भोजन, मोमबत्तियाँ, नैपकिन्स, पान के पत्ते, और हजारों मासूम प्राणियों के मांस और खून, आदि यदि आयात हों तो शेष कुछ भी कहने को नहीं रह जाता। सचमुच भला संस्कृति, धर्म, वन्दे मातरम्, स्वदेशी एवं हिन्दुत्व के पुरोधाओं का इससे बेहतर और नायाब तोहफा

"भारत माता" को और क्या हो सकता है?

महावीर जन्मकल्याणक महोत्सव हेतु राष्ट्रीय समिति : भारत सरकार के संस्कृति विभाग के संकल्प सं. एफ१५-५/६६/सी एण्ड एफ, दिनांक १६.१०.२००० द्वारा तीर्थंकर महावीर के जन्मकल्याणक के २६०० वर्ष को समुचित रूप से मनाने के लिए भारत सरकार ने प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय समिति का गठन किया है। उपाध्यक्ष केन्द्रीय मंत्री, पर्यटन एवं संस्कृति, हैं, और सदस्य-सचिव भारत सरकार के संस्कृति विभाग के संयुक्त सचिव हैं। इनके अतिरिक्त ५६ सदस्य हैं जिनमें ८ केन्द्रीय मंत्री, १ राज्यपाल, ६ मुख्यमंत्री, १ राज्यसभा सदस्य, १ विधान परिषद सदस्य, १ भारत सरकार का सचिव और १ ईसाई समुदाय का, १ सिख समुदाय का, २ इस्लामी समुदाय के, १ बौद्ध समुदाय का और ३ सनातनी हिन्दु समुदाय के प्रतिनिधि हैं – तदनुसार २६ सरकारी सदस्य हैं, और शेष २७ जैन समाज के विभिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधिस्वरूप हैं जिनमें भगवान महावीर २६०० वां जन्मकल्याणक महोत्सव महासमिति के भी ७ पदाधिकारी सम्मिलित हैं। यद्यपि विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में भारी संख्या में जैन विद्वान हैं और अन्यथा ख्याति प्राप्त विद्वान भी हैं परन्तु उनमें से कोई भी राष्ट्रीय समिति में सदस्य होने के योग्य नहीं पाया गया, क्यों?

जैन समुदाय के बारे में राजस्थान हाईकोर्ट का निर्णय : राजस्थान हाईकोर्ट की जोधपुर पीठ के न्यायमूर्ति राजेश वालिया ने विजयशांति एजूकेशनल ट्रस्ट की याचिका को मंजूर करते हुए यह निर्वचन दिया कि केन्द्र सरकार द्वारा अल्पसंख्यक सम्बन्धी जारी अधिसूचना एक सीमित उद्देश्य के लिए है, न कि संविधान के अनुच्छेद २६ व ३० संबंधी अधिकारों के प्रयोग के लिए है, और चूंकि जैन समुदाय एक अलग धार्मिक समुदाय है और राजस्थान में उसकी जनसंख्या अल्प होने के कारण वह अल्पसंख्यक समुदाय की श्रेणी में आता है, केन्द्र सरकार द्वारा इस सम्बन्ध में अधिसूचना जारी करने या न करने भर से उस समुदाय को संविधान में दिए अल्पसंख्यक समुदाय के अधिकारों से वंचित नहीं रखा जा सकता।

यह संवैधानिक स्थिति है परन्तु इससे अनभिज्ञ अथवा जानबूझकर अनभिज्ञ बने जैन समाज, विशेषकर दिगम्बर सम्प्रदाय, के नेता लोग अल्पसंख्यक अधिसूचित किये जाने की ज़िद ठाने हुए हैं। इससे इन नेताओं को तो शायद कोई राजनैतिक लाभ मिल जाये क्योंकि आम जनता इस प्रकार के भावनात्मक मुद्दों पर आवेशगत हो जाती है और नेता जी की नेतागिरि कुछ समय के लिए सुरक्षित हो जाती है, परन्तु जैन समाज के जन सामान्य को कोई लाभ नहीं होना है–हानि अवश्य हो सकती है।

विदेश में भी दिगम्बर-श्वेताम्बर मनभेद : टोरंटो (कनाडा) से श्री अजित जैन ने समाचार भेजा है कि वहां हिन्दी भाषी दिगम्बर जैनों को जैन सोसाइटी ऑफ टोरंटो की अध्यक्ष सुश्री लता चैम्पसी, जो गुजराती भाषी श्वेताम्बर जैन हैं, से दिगम्बर समाज के अस्तित्व के प्रश्न को लेकर शिकायत है। वह यह भी चाहते हैं कि मन्दिर बड़े भवन में स्थानान्तरित किया जाये जहां विभिन्न आम्नाय के अनुयायी स्वतंत्र रूप से पूजा-अर्चना कर सकें क्योंकि वर्तमान भवन में एक ही कमरे में श्वेताम्बर व दिगम्बर वेदियां हैं। सम्प्रति यह निश्चय किया गया है कि सूचनायें अंग्रेजी, गुजराती

और हिन्दी, तीनों भाषाओं में प्रसारित की जायें और हिन्दी में लिखित सामग्री भी प्रकाशित की जाये।

बदरीनाथ में श्वेताम्बर जैन मन्दिर : विगत जुलाई से ही राष्ट्रीय समाचार पत्रों, यथा **दैनिक जागरण**, में बदरीनाथ में श्वेताम्बर जैन मन्दिर के निर्माण सम्बन्धी विवाद की चर्चा होती रही है, जिसका समाकलन इसी अंक के संपादकीय अग्रलेख में श्री अजित प्रसाद जैन द्वारा किया गया है। परन्तु यह विस्मय की बात है कि किसी जैन पत्र में इस विषय को लेकर कोई सुगबुगाहट नहीं है। दिगम्बर, स्थानकवासी और तेरापन्थी पत्रों में चर्चा न होना अस्वाभाविक नहीं है, किन्तु जागरूक श्वेताम्बर पत्रों यथा **श्वेताम्बर जैन** और **स्थूलिभद्र संदेश** का मौन विस्मयकारी है। हमने इन पत्रों के विद्वान सम्पादक श्री वीरेन्द्र सिंह लोढ़ा और श्री ललित कुमार नाहटा से स्थिति पर प्रकाश डालने का अनुरोध किया।

श्री नाहटा ने अवगत कराया है कि - "जैन पत्र-पत्रिकाएँ संबंधित व्यक्तियों द्वारा सूचना न मिलने के अभाव में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर पा रहे हैं। सम्बन्धित व्यक्ति लगता है असमंजस की स्थिति में हैं। बद्रीनाथ के स्थानीय व्यक्ति विरोध कर रहे हैं जनमत के आधार पर। जनमत का झुकाव जिनमत के अनुरूप हो, आवश्यक नहीं।"

जनगणना २००१ और जैन

भारत सरकार द्वारा ९ फरवरी २००१ से २८ फरवरी २००१ तक सम्पूर्ण देश में पूर्व की भांति जनगणना करायी जायेगी। ध्यातव्य है कि १९९१ में की गई जनगणना में देश में जैन धर्मावलम्बियों की कुल संख्या मात्र ३३ लाख दिखाई गई है जबकि १९८१ की जनगणना में यह संख्या ३२ लाख थी। १९८१ में देश की कुल जनसंख्या ६६.५३ करोड़ थी जो १९९१ में बढ़कर ८३.८६ करोड़ हो गई और उसमें २६% की वृद्धि हुई। सम्पूर्ण जनसंख्या के अनुपात में जैन धर्मावलम्बियों की कुल संख्या में सरकारी आंकड़ों के अनुसार १९८१ के दशक से १९९१ के दशक तक पहुँचते-पहुँचते १५% की कमी आ जाने से यह आशंका, जो स्वाभाविक है, उद्भूत हुई कि जनगणना के समय जैनधर्मावलम्बियों द्वारा अपेक्षित जागरूकता न बरतने के कारण ऐसा हुआ है। अभी तो भारत के प्रमुख धर्मावलम्बियों में जैन धर्मावलम्बियों की गणना छठे स्थान पर है और देश की कुल आबादी में वे ०.४१ प्रतिशत आगणित हुए हैं, किन्तु यदि उनमें अपनी स्थिति के सम्बन्ध में उदासीनता बनी रही तो उनकी जनसंख्या का सही आकलन दुष्कर हो जायगा। अतः आवश्यकता इस बात की है जब इस बार जनगणना हेतु प्रगणक (enumerator) उनके घर पहुँचे और निर्धारित फार्म पर विवरण भरवायें अथवा स्वयं भरें तो सभी जैनधर्मावलम्बी यह सुनिश्चित कर लेवें कि उक्त फार्म में धर्म सम्बन्धी कालम ८ में उनके और उनके परिवार के सदस्यों के सम्बन्ध में 'जैन' और उसके आगे कोष्ठक में ६ संख्या अंकित हो जाय। साथ ही इस बात की भी प्रबल आवश्यकता है कि जैन धर्मानुयायी अपने आचरण को ऐसा समुन्नत करने का प्रयास करें कि किसी को भी उनकी ओर उंगली उठाने की आवश्यकता न पड़े और वे आदर्श नागरिक माने जायें।

शोक संवेदन

२४ अगस्त, २००० ई., को मुम्बई में हिन्दी फिल्मों के सुप्रसिद्ध संगीतकार ७२-वर्षीय **श्री कल्याणजी वीरजी शाह** का निधन हो गया।

२७ अगस्त को इन्दौर में कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ के अध्यक्ष श्री देव कुमार सिंह कासलीवाल की धर्मपत्नी, ७५-वर्षीया **श्रीमती कुसुम कुमारी देवी कासलीवाल** का निधन हो गया।

२५ सितम्बर को नई दिल्ली में मध्य प्रदेश के भूतपूर्व उद्योग मंत्री तथा सम्प्रति अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद के महामंत्री, ७६-वर्षीय **डा. राजेन्द्र जैन** का निधन हो गया।

४ अक्टूबर को राजगढ़ (ब्यावरा) में ६४-वर्षीय सुश्रावक **श्री त्रिलोकचन्द जैन** (डॉ. अनुपम जैन के पिता) का ट्रक-बस दुर्घटना में निधन हो गया।

११ अक्टूबर को दिल्ली में प्रख्यात साहित्यकार, ८८-वर्षीय **पद्मश्री यशपाल जैन** का स्वर्गवास हो गया।

२७ अक्टूबर को लखनऊ में नगर की अनेक शिक्षण एवं सामाजिक संस्थाओं से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे ८७-वर्षीय श्री सलेख चन्द जैन का स्वर्गवास हो गया।

अक्टूबर में ही हिन्दी के कर्मठ सेवी **पद्मश्री डॉ. लक्ष्मी नारायण दुबे** का निधन हो गया।

१० नवम्बर को ३६-वर्षीय **श्री नवीन सेठी** (आत्मज श्री निर्मल कुमार सेठी) का कार दुर्घटना में निधन हो गया।

२२ नवम्बर को लखनऊ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के आजीवन सदस्य और प्रबन्ध समिति के सदस्य, ५४-वर्षीय **श्री महावीर प्रसाद जैन पाटनी** का असामयिक निधन हो गया।

२८ नवम्बर को लखनऊ में सुप्रसिद्ध कला-मर्मज्ञ, गायिका और अभिनेत्री ६३-वर्षीय **श्रीमती शाहिदा रहमान शाहीन सुल्ताना** दिवगंत हो गईं।

उपर्युक्त सभी दिवगंत के प्रति **शोधादर्श** परिवार अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, आत्मा की चिर शान्ति और सद्गति के लिये जिनेन्द्र देव से प्रार्थना करता है, और स्वजनों-परिजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

पाठकों की दृष्टि में

अंक जुलाई देखने को मिला। जहां सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक तथा ऐतिहासिक तथ्य और सत्य उजागर करने में आप प्रयत्नशील हैं वहीं प्राचीन और अर्वाचीन सामाजिक समस्याओं को रखते हुए उनके उपयुक्त सुझाव भी दिए गए हैं। मुनिपद से भट्टारक पद की ओर यात्रा अधार्मिक है और असंयम की द्योतक है। हमने अ. भा. शास्त्री परिषद में सीकर में इस का विरोध व्यक्त किया था। आजकल मुनि और धनी का विलक्षण नाता जुड़ गया है। धर्म और धार्मिक उत्सव जब क्रय-विक्रय की वस्तु बन जाते हैं, तब धनिक ही श्रेष्ठता प्राप्त कर लेते हैं। हमारा धर्म केवल आत्मचिन्तन था पर अब आत्मकल्याण की ओर कम और व्यक्तिगत पद-प्रतिष्ठा की ओर अधिक अग्रसर हो रहा है। साधुओं में शिष्टाचार की समस्या की ओर से समाज उदासीन है, कुछ कहना भी पाप है। ऐसी अंध-श्रद्धा जहां हो वहां सुधार संभव नहीं। आप अपने संयम को सन्तुलित रखते हुए जो विचार प्रस्तुत कर रहे हो, वह कालोचित हैं। आपका अभिनन्दन!

– **(प्रा. डॉ.) कुलभूषण लोखंडे**, सं. **दिव्यध्वनि**, सोलापुर

अंक सुरुचिपूर्ण व पठनीय सामग्री से ओतप्रोत है। श्री विद्यानन्द जी व महाकवि स्वयंभू संबंधी जानकारी ज्ञानवर्द्धक है। सम्पादकीय में समिति द्वारा कई उलझी हुई बातों को सुलझाने का सरल तरीका बुद्धिमत्ता पूर्ण ढंग से बताया गया है। विचार बिन्दु की सामग्री चिन्तन हेतु नया आयाम खोलती है। परिचर्चा के अन्तर्गत भी कई समस्याओं का समाधान अपने ढंग से बताया गया है। साहित्य सत्कार भी कई अच्छे ग्रंथों की जानकारी देता है। अंग्रेजी लेख भी अच्छे हैं। इस प्रकार अंक अच्छा बन पड़ा है। बधाई स्वीकार करें।

– **मदन मोहन वर्मा**, ग्वालियर

अंक की सामग्री विशिष्ट लगी।

– **मूलचन्द जैन अजमेरा**, हरदा

शोध लेख पठनीय हैं, मेहनत लगी है। डॉ. रज्जन कुमार ने जैन धर्म सम्बन्धी तथ्य in short अच्छे लिखे हैं। डॉ. शशि कान्त के क्रांतिकारी लेख हमेशा पठनीय रहे हैं। शिथिलाचार पर प्रत्येक लिखने की हिम्मत न कर सकेगा। लिखते हैं, खूब लिखते हैं, सभी सटीक। शर्म आती है जब बदनामी होती है महावीर प्रभू के वेष की।

– **महाबीर प्रसाद जैन सर्राफ**, नई दिल्ली

पत्रिका की सामग्री उचित है। सम्पादकीय पढ़ी। दिगम्बर जैन समाज की राष्ट्रीय संस्थाओं की समन्वय समिति की बैठक के निर्णयों पर केन्द्रित इस चर्चा में आपने निर्णयों की समीक्षा कर नीर-क्षीर करने का प्रयास किया है। आपने साहस पूर्वक यथार्थ उजागर करने की कोशिश की, धन्यवाद! असल में कोई संस्था अब समाज की नहीं रह गई है। सब व्यक्तिवादी हैं। संस्थायें अब

श्रावकों के मत-अभिमत के बजाय श्रमणों के संकेत पर निर्णय करती हैं क्योंकि श्रमण अर्थसंग्रह के निमित्त बन गये हैं। अब विद्वान भी मुँह देखी कहने लगे हैं। मतभेद, मनभेद की स्थिति तक गहरा गये हैं।

धर्ममंगल पत्रिका के विरुद्ध शास्त्री परिषद के अधिवेशन में निन्दा प्रस्ताव पारित हुआ है। शास्त्री परिषद के अध्यक्ष को कौन समझाये कि साधुचर्या का दोषमार्जन न होने देने का दुष्परिणाम आजीवन कौन भोगेगा?

कराहता कुण्डलपुर के बाद **कुण्डलपुर का सच** भी छपा है। श्री प्रकाश सिंघई, दमोह, की मारपीट हो चुकी है। पूरे प्रकरण पर **क्रांतिबोल** पत्र का विशेषांक पुनः प्रकाशित हो चुका है। यह कैसी तीर्थभक्ति है जो लगातार विवाद बढ़ा रही है। समूचे प्रकरण में आचार्य विद्यासागर जी को प्रमुख मानकर उनके नाम पर मनमानी की जा रही है। यदि कुछ अनर्थ हो गया तो समाज मुंह दिखाने लायक न रहेगा।

मुरैना में मोरों की हत्या पर आपने जो शंका उठाई है वह सच हो सकती है। आजकल केशलुच्छन और पिच्छिका परिवर्तन भी समारोह पूर्वक होने लगे हैं। मनमाने व्यय से खरीदी गई पीछी के व्यापार के लिए मोरों की सामूहिक हत्या के संदर्भ में यदि विकल्प खोजे जायें तो ठीक रहेगा।

– **दामोदर जैन**, टीकमगढ़

शोधादर्श अपने नाम के अनुरूप धार्मिक-सामाजिक गतिविधियों पर जैन धर्म और दर्शन के आलोक में निर्भीक, साहसिक, स्पष्ट, सटीक, पक्ष-व्यामोह रहित यथार्थ पक्ष प्रस्तुत करने वाला निर्मल दर्पण है। इसमें सभी जाने-पहचाने पक्ष अपनी अंतर-वाह्य प्रवृत्तियों का स्वरूप वीतराग भाव से सहज ही देख सकते हैं। ऐसी साहसिक, सार-भूत पत्र-पत्रिका पढ़ने में नहीं आयी। अपने को शोधी-खोजी, तथाकथित संस्कृति रक्षक एवं समाज उद्धारक का दंभ भरने वाले अपना लौकिक स्वार्थ सिद्ध होते ही या क्षणिक प्रतिकूलता का आभास होते ही अपने असली वणिक स्वरूप में आ जाते हैं और समाज हित की दुहाई देकर अपना मत/विचार बदल देते हैं। उनके लिए निम्न पंक्तियां समर्पित हैं –

विवेकी की अत्यल्प चूक पर हंसो, गुर्राओ
अविवेकी-सबल के समक्ष नतमस्तक हो जाओ।
स्वार्थ-सिद्धि हेतु सब-कुछ भूलो।
स्वार्थ-सिद्ध होने पर, सबको भूलो।
पद-पैसा-प्रसिद्धि-भोग की तृप्ति हेतु
जिनेश्वरी-दीक्षा को बनाओ सेतु।
हुण्डावसर्पणी काल का यही दोष
करें हम, लांछित हों अन्य, यही घोष।

शोधादर्श के सम्पादकीय, समाचार-विमर्श, साहित्य-सत्कार, समाचार-विविधा आदि ऐसे स्थायी स्तम्भ हैं जो पाठकों को विचारोत्तेजक एवं दिशाबोधक यथार्थ सामग्री प्रदान करते हैं। समन्वय समिति के निर्णय, **कराहता कुण्डलपुर** आदि में आपके निष्पक्ष एवं साहसिक प्रस्तुतीकरण हेतु साधुवाद स्वीकार करें। **शोधादर्श** का प्रत्येक अंक बेजोड़ और संग्रहणीय हैं।

– **(डॉ.) राजेन्द्र कुमार बंसल,** अमलाई

श्री अजित प्रसाद जी की, रमा कान्त जी की तथा आपकी जो सूक्ष्म दृष्टि है वह प्रशंसनीय है। चाहे वह पुस्तक समीक्षा हो या कोई समाचार, आपकी विशेष टिप्पणी के साथ होता है जो कि बहुत ही सटीक होती है।

मुरैना में मोरों को मारे जाने सम्बन्धी समाचार आपने प्रकाशित किया है। साथ ही आपने लिखा है कि हमारे पूज्य आचार्यो एवं गणिनी आर्यिकाओं को मयूर-पिच्छि के विकल्प पर गंभीर चिन्तन करना चाहिए। मैं आपकी इस बात से पूर्ण सहमत हूँ। मैंने इसी आशय का एक लेख बहुत पहले लिखा था जो १६ जून व २३ जून १६८८ के अंकों में **जैन संदेश** में प्रकाशित हुआ था।

– **(डॉ.) अनिल कुमार जैन,** अहमदाबाद

संस्मरण "दानी कर्ण आज भी हैं" किसी के प्रति मिथ्या-धारणा या पूर्वाग्रह रखने की हमारी दुष्प्रवृत्ति के विरुद्ध, वस्तुस्थिति की खोज का सद् आह्वान है। सम्पादकीय में विचारित "श्रमण शिथिलाचार" तथा "जीर्णोद्धार में पुरातत्व की रक्षा" में उठाये गये प्रसंग धर्म एवं धर्मायतनों की गरिमा को बचाए रखने हेतु सम्पादक जी की चिर-परिचित चिन्ता को उजागर करते हैं।

'समाचार-विमर्श' में "मोरों की हत्या" का समाचार किसी भी अहिंसा-प्रेमी एवं अहिंसाचारी का दिल दहला देने में पूर्णतः सक्षम है, किन्तु आज हमारे तथामान्य अहिंसाचारियों-अणुव्रतियों एवं महाव्रतियों दोनों का न तो हिंसा के समाचार से दिल दहलता है, ना ही अहिंसा पर कुठाराघात से रोंगटे खड़े होते हैं। अन्यथा एक लम्बे समय से मयूर-पिच्छियों में, मारे गये मोरों के पंखों के प्रयोग का समाचार जो अन्यत्र भी पढ़ने-पढ़ाने में आया है, क्या हमारे चतुर्विध संघ को अविलम्ब ही कुछ सोचने एवं तदनुसार निर्णय हेतु बाध्य नहीं करता?

रामलीला, कृष्णलीला जैसे समारोहों की तर्ज पर दान-पर्व अक्षय-तृतीया का जीवन्त अभिनय जैसी प्रवृत्तियाँ, चाहे वे अभिनय साधु-वर्ग द्वारा किये-कराये जाएँ अथवा श्रावक-वर्ग द्वारा, किंचित् भी सराहनीय एवं सहनीय नहीं होनी चाहियें।

– **मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त',** अलीगढ़

समाज को गुमराह होने से बचाने, शिथिलाचार को रोकने हेतु यथार्थ दिशाबोध देने वाली पत्रिका **शोधादर्श** है। संपादकीय अंक का प्राण है। गुरुगुण-कीर्तन (अंक ४०) में आ. हेमचन्द्र सूरी के संबंध में सटीक जानकारी दी गई है। 'समाचार विमर्श' स्तंभ में की गई समीक्षा समाज की गतिविधियों का दर्पण हैं जिन्हें देख पढ़ सुनकर शर्म से मस्तक झुक जाता है। आपकी पेनी लेखनी

द्वारा समयोचित किया जा रहा प्रहार समाज को सचेत करने में सार्थक हो, ऐसी शुभकामना हैं।

– **शैलेश कापड़िया,** सं. **जैन मित्र,** सूरत

एक हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन सांगानेर के भव्य संघी जी मन्दिर में अनेक प्रतिमाओं को, प्राचीन निर्माण से बेमेल नवनिर्मित ऊपरी खण्ड में विराजमान कराने से पूर्व, एमरी स्टोन से रगड़-रगड़ कर व औजारों का प्रयोग कर बिल्कुल नया जैसा बना दिया गया। कई प्रतिमाओं के तो चिन्ह तक बदल दिए गए हैं – महावीर को आदिनाथ और अजितनाथ को संभवनाथ बना दिया गया है। सांगानेर की प्राचीन नसियाँ में स्थित जिनालय को नींव सहित उखाड़ फेंका गया है।

नये निर्माण के नाम पर मध्य प्रदेश स्थित कुण्डलपुर में बड़े बाबा के मन्दिर में जैसा घमासान मचाया गया है वह रोंगटे खड़े कर देने वाला है। इस पवित्र क्षेत्र में कई जिनालयों को नींव सहित नेस्तनाबूद कर दिया गया है। मुख्य जिनालय के गुम्बदों में से एक ६० फुट ऊँचा था और दूसरा ६५ फुट। पहले गुम्बद को ७० फुट गिरा दिया गया और अब वह मात्र २० फुट का रह गया है। ६५ फुट गुम्बद के ४० फुट ध्वस्त किए जा चुके हैं और वह अब मात्र २५ फुट का रह गया है। इस तीर्थ में हो रहे विध्वंस को उजागर करने के लिए श्री नीरज जैन के साथ अशोभनीय व्यवहार किया गया और जान से मार डालने की धमकियाँ दी गई। समाज की पुरा सम्पदा के साथ छेड़छाड़ आदि की अनगिनत घटनाएं हैं। सदियों पुरानी संस्कृति की रक्षा हर जाति व धर्म के लोगों का प्राथमिक कर्तव्य है। इसके लिए प्रबुद्ध वर्ग को अब संगठित होकर आगे आना चाहिये। इसी हेतु पुरा सम्पदा की रक्षा के लिए एक मंच की स्थापना का विचार मन में आया है।

– **मिलाप चन्द डंडिया,** जयपुर

Your Shodhadarsha is one such marvellous magazine that keeps me waiting with curiosity for matters of great interest. Every time I receive it, it binds me to go through it fully at a stretch. Every time it brings me new flash of thoughts on different topics pertaining to our history, literature, religion, society etc.

The Guruguna-Keer-trana, the very title of which is meaningful, gives an insiqht into the great literary achievements of our revered purvacharyas and fills our heart with unbound reverence for them.

Now-a-days history plays a vital role in deciding the place or position of a religion or philosophy. Great scholars who are very few in number and in whose list the revered name of Dr. Jyoti Prasad Jain stands at the top, have clearly pointed out the antiquity and independent origination of Jainism and have thus established its prestigious position. Let alone the master pieces of revd. Jyoti Prasad Jain, even the extracts of his writings in the Shodhadarsha speak of his eminence and the same can be witnessed in the article on Mahakavi Swayambhu in the present issue (41).

Dr. Shashi Kant's articles, on whichever topic they may be, are thought stimulants. His `Tradition of co-existence' in the present issue (41) presents an

aspect of our history from a new angle of vision. It points out marvellously the only way how today our world can be saved from the imminent disaster by the principle of co-existence, which, historically, is the contribution of our India and, as such, of which we feel very proud.

Discussion about Kharavela, Hathigumpha inscription, centred around Kalinga Jina, is very interesting.

As far as I know there is no other Jaina Magazine which exposes in its editorial fearlessly the wrongs, misdeeds and unholy acts committed by the so-called religious heads of our society and in this regard I respectfully wish to mention the name of Ajit Prasad as a dynamic personality.

– (प्रो. डॉ.) एम. डी. वसन्तराज, मैसूर

अलविदा!

शोधादर्श का प्रारंभ पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन द्वारा फरवरी १९८६ में एक अभाव की पूर्ति के लिए किया गया था। जैन विद्या से सम्बन्धित कोई ऐसी शोध पत्रिका नहीं थी जो सभी जैन परम्पराओं को तटस्थ दृष्टि से समाहित कर सके और भारतीय एवं वृहत् मानव सांस्कृतिक परिदृश्य के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक मूल्यांकन को प्रोत्साहित कर सके। इस प्रकार की पत्रिकाओं में पं. नाथूराम प्रेमी के सम्पादन में **जैन हितैषी,** बा.जुगल किशोर मुख्तार के सम्पादन में **अनेकान्त,** डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के सम्पादन में **जैन संदेश – शोधांक** और **जैन सिद्धान्त भास्कर** व **Jaina Antiquary,** श्री गणेश ललवानी के सम्पादन में **Jain Journal** और **तित्थयर,** तथा डॉ. परमेश्वर सोलंकी के सम्पादन में **तुलसी-प्रज्ञा** का उल्लेख किया जा सकता है।

श्रद्धेय पिता जी एक निष्ठावान शुद्ध तेरह पंथ दिगम्बर आम्नायी जैन श्रावक अपनी व्यक्तिगत आस्था में थे, परन्तु इतिहास के आलोक में और धर्म-दर्शन साहित्य की समीक्षा में उनकी दृष्टि एक न्यायाधीश के सदृश थी जिसमें वह पंथ-व्यामोह से निरपेक्ष और ज्ञात तथ्यों के सापेक्ष एक युक्तियुक्त मत निर्धारित करते थे। वह शोध के क्षेत्र में सत्यान्वेषण पर आधारित विवेकपूर्ण न्यायिक निरुपण के पक्षधर थे, न कि सैद्धान्तिक या पंथिक पक्ष के पिष्टपेषण को प्रोत्साहित करने के। यही कारण था कि समग्र जैन समाज के सभी आम्नायों के विद्वत् वर्ग के वह श्रद्धाभाजन थे और अजैन विद्वत् जगत में वह एक प्रामाणिक जैन-विद्या-विद् के रूप में समादृत थे। धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में छाती जा रही कुरीतियों और अनीतियों पर भी उनकी पैनी दृष्टि थी और वह अपनी मुखर स्पष्टवादिता के लिए विख्यात थे।

११ जून, १९८८, को उनके महाप्रयाण के बाद तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के तत्कालीन अध्यक्ष श्री सुमेरचन्द पाटनी और महामंत्री, आदरणीय चाचा जी, श्री अजित प्रसाद जैन के आग्रह पर **शोधादर्श** के सम्पादन का दायित्व मेरे जिम्मे आ गया। श्री अजित प्रसाद जैन के मार्ग दर्शन में और अनुज श्री रमा कान्त जैन के सक्रिय सहयोग से, डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की विधा को आगे बढ़ाते हुए मेरे सम्पादन में जुलाई १९८८ से नवम्बर २००० तक ३६ अंक (७ से ४२) प्रकाशित हुए। सभी ४२ अंकों की समग्र अनुक्रमाणिका अन्त में दी जा रही है।

विद्वान लेखकों ने अपनी विवेचनाओं, रचनाओं और समीक्षाओं को प्रकाशनार्थ भेजकर और सम्पादकीय धृष्टता को सहज भाव में स्वीकार कर जो आत्मीयता प्रदर्शित की और मुझे सद्भाव व सम्मान दिया उसके लिए मैं उनके प्रति हृदय से आभारी हूँ। आग्रह यही रहा कि लेख-रचना के माध्यम से आधुनिक सोच को वर्तमान लेखकों द्वारा प्रस्तुत किया जाय। एक अपवाद डॉ. ज्योति प्रसाद जी के एक लेख का प्रकाशन अंक ८ से प्रत्येक अंक में अनवरत रहा, और अंक १३ से २३ में The Jaina Gazette के प्राचीन अंको से कतिपय आलेख रहे, जिन सभी का आज भी सामयिक महत्व है।

जिन विद्वान मनीषियों की कृतियों और पत्र-पत्रिकाओं पर मैनें अपनी निष्पक्ष और

वस्तुपरक समीक्षा दी और उसे उन्होंने विचारणीयता के साथ स्वीकार किया, उनकी इस आत्मीयता के लिए मैं सदा आभारी रहूंगा।

श्री अजित प्रसाद जैन अंक ८ से सक्रिय रूप से जुड़े और 'चिन्तन कण', 'विचार विन्दु' तथा 'साहित्य सत्कार' स्तम्भों के अन्तर्गत उनके विचार प्रकाशित हुए। अंक १० से विविध महत्वपूर्ण विषयों पर उनके स्वतंत्र लेख, और अंक १५ से ज्वलन्त समस्याओं पर उनके सम्पादकीय अग्रलेख तथा अंक २० से 'समाचार विमर्श' में निर्भीक टिप्पणी ने **शोधादर्श** को समाज के एक सजग प्रहरी का स्वरूप प्रदान किया।

श्री रमा कान्त जैन के सहयोग के बिना **शोधादर्श** का सम्पादन व प्रकाशन संभव नहीं था। 'गुरुगुण-कीर्तन' के अन्तर्गत गहन शोधपरक आलेखों, विविध विषयों पर शोधपूर्ण एवं विचारप्रेरक आलेखों, भावपूर्ण पद्य रचनाओं और साहित्य सत्कार के अन्तर्गत समीक्षाओं के अतिरिक्त अभिनन्दन, समाचार विविधा, शोक संवेदन एवं आभार सम्बन्धी सूचनाओं का संकलन व विविध आयोजनों की रिपोर्ट आदि प्रस्तुत करने में उनका महती योगदान रहा, साथ ही प्रेषण और पत्राचार में भी उनका विशेष योगदान रहा।

यदि १ले अंक से ही समयानुसार मुद्रण की व्यवस्था श्री नलिन कान्त जैन ने न की होती तो सम्पादकों व लेखकों का श्रम व्यर्थ ही जाता। मुद्रण की व्यवस्था मात्र लागत मूल्य पर करके, साथ ही प्रूफ शोधन और पैकिंग व डिस्पैच का भी दायित्व अपने व्यय पर वहन करके, श्री नलिन ने जैन विद्या की श्लाघनीय सेवा की है और उसके लिए वह विशिष्टतः साधुवाद के पात्र हैं।

जिन सुधि पाठकों ने अपने पत्रों द्वारा सद्भावपूर्ण सहमति व्यक्त करके, सुचिन्त्य प्रतिक्रिया सूचित करके, अतिरिक्त सूचना उपलब्ध कराके और उद्बोधक उद्गारों, जिज्ञासाओं और अन्य विविध प्रकार से हमें सम्बल दिया तथा 'पाठकों की दृष्टि में', 'जिज्ञासा' और 'परिचर्चा' के स्तम्भों को रोचक बनाया, तथा जिन्होंनें आजीवन शुल्क देकर और साधारण शुल्क वर्षानुवर्ष देकर आर्थिक सहयोग भी प्रदान किया, उन सभी के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा प्रथम कर्त्तव्य बनता है।

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., के नितान्त प्रारंभ से मैं उससे जुड़ा रहा हूँ और २५ वर्ष पहले उसके बीजांकुर से ही तथा शासन की सेवा से अवकाश प्राप्ति के बाद विगत १० वर्षों से विशेष रूप से अपना समय, श्रम व धन निस्संकोच व स्वान्तः सुखाय इसके हित में लगाता रहा, परन्तु अब यह प्रतीति हुई कि इस संस्था के लिए मेरे सम्बद्ध रहने की कोई उपयोगिता अथवा उपादेयता नहीं है। निस्संगता और अनासक्ति, जो निर्ममता या संवेदना-हीनता अथवा संवेदन-शून्यता का पर्याय नहीं हैं, जीवन में महत्वपूर्ण हैं। मैं समिति के सभी माननीय सदस्यों के प्रति उनके सद्भाव के लिए आभारी हूँ। दूसरों के समान मुझे भी अपना विवेक प्रयोग करने की जनतांत्रिक स्वतंत्रता है और उसी का प्रयोग कर समिति की प्रबन्ध व्यवस्था से तथा **शोधादर्श** से मैं विदा ले रहा हूँ। यदि किसी के प्रति कुछ अप्रिय मुझसे हो गया हो तो उसके लिए मैं विनम्रता पूर्वक क्षमा प्रार्थी हूँ।

३०-११-२००० — **शशि कान्त**

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ-२२६ ००४

अनुक्रमणिका : शोधादर्श १-४२

खण्ड-क : लेखक वृंद

	लेखक		लेखन	अंक	पृष्ठ
१.	श्री अंशु जैन 'अमर'	१.	पृथ्वीराज के इतिहास के जैन साधन	४	१५-२१
		२.	कृतित्व जिसने एक व्यक्ति को महान बना दिया	७	४२-४४
		३.	रिपोर्ट : डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ति (६.२.१९९६)	२८	६१
			श्री रमा कान्त जैन की षष्ठिपूर्ति		६१-६२
		४.	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की पुण्यतिथि पर काव्य संध्या (११.६.१९९८)	३५	१३८-४०, १४२
		५.	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ति (६.२.२०००)	४०	५३-५४, ५६
२.	श्री अगर चन्द नाहटा	६.	कल्याणमन्दिर स्तोत्र के रचयिता	१५	२६-३२
३.	डॉ. (श्रीमती) अनीता श्रीवास्तव	७.	**शो.सा.** - आचार्य हेमचन्द्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व **(शो.सा.=शोध-प्रबन्ध सार-संक्षेप)**	२५	३६-४५,४६
४.	डॉ. अनिल कुमार जैन	८.	जिज्ञासा : तीर्थंकर मूर्ति पर दाढ़ी-मूंछ नहीं?; आहार और पूजा-प्रक्षाल के लिए वस्त्र?	२६	१६३
		९.	चर्चा : ऋषभदेव की निर्वाण भूमि	३७	७७
		१०.	बनारसीदास और कबीर	३६	२८३-८४
५.	श्री अनिल बांके	११.	कवि स्वतंत्र है सब कहता है (पद्य)	३८	१८२
६.	डॉ. अनुपम जैन व डॉ. सुरेश चन्द्र अग्रवाल	१२.	हेमराज और उनका गणितसार	६	१७-१८
७.	अबुल फज़ल	१३.	A Mahomedan estimate of a Jaina layman (J.G., Oct. 1905)	१८	६५-६६
८.	डॉ. अभय प्रकाश जैन	१४.	हथफोर गुफा की रंगशाला	८	१०-१३
		१५.	मांडू और संगीतज्ञ मण्डन	९	२८-३०
		१६.	'संगीत समयसार' और नादोत्पत्ति	१०	१९-२३
		१७.	काम्पिल्य	११	१५-१७

		१८. राजा भोज का भोजपुर मन्दिर	१४	२०-२२
		१९. ग्वालियर अंचल की जैन पुरा सम्पदा	१८	३५-३८
		२०. पवाया के प्रेक्षागृह	२०	५८-६०
		२१. ग्वालियर के जैन मन्दिरों की अनुपम भित्तिचित्र शैली	२८	३७-३९
		२२. पुनीत स्मरण : डॉ. जगदीश चन्द्र जैन	३८	१४९-५१
९.	पं. अमरचन्द्र जैन	२३. जिज्ञासा : नवधाभक्ति और आर्यिका	४१	१५७-५८
१०.	डॉ. अमर पाल सिंह	२४. इतिहास-मनीषी की अनन्त यात्रा	७	४-०६
		२५. क्रान्तिकारी अर्जुन लाल सेठी	२९	१४४-५३
		२६. अध्यक्षीय सम्बोधन – सारस्वत सम्मान समारोह ११-६-१९९८	३५	१३७
		२७ शिवमहिम्नः स्तोत्र विमर्श	४२	२४६-५८
११.	पं. अमृतलाल शास्त्री	२८. प्रतिक्रिया (मुनियों का शिथिलाचार)	२१	१३-१६
१२.	क्रान्तिकारी अर्जुन लाल सेठी जैन	२९. अपनी बीती (पद्य)	२९	१५२-५३
१३.	डॉ. अरविन्द कुमार श्रीवास्तव	३०. रिपोर्ट : लखनऊ में 'जैन विद्या के विविध आयाम' पर संगोष्ठी	३२	१५३-५५
१४.	डॉ. (कु.) अरूणा आनन्द	३१. **शो. सा.** : प्रमुख जैनाचार्यो की योग दर्शन को देन	१८	७३-७७
१५.	डॉ. (श्रीमती) अलका अग्रवाल (कान्त/जैन)	३२. पदार्थदीपिका के कर्त्ता	२	२१-२३
		३३. प्राकृत मुक्तक काव्य "वज्जालग्गं"	८	२-३,२७
		३४. प्राकृत रसेतर मुक्तक काव्य	९	३१-३३
		३५. **शो. सा.** : प्राकृत मुक्तक काव्य "वज्जालग्गं" – एक अध्ययन	१९	१८-२२
		३६. वैदिक साहित्य में सामाजिक चेतना	३३	२५१-५२
१६.	डॉ. अवतार सिंह	३७. सिख धर्म और गुरु ग्रन्थसाहब	२६	१४६-४८
१७.	ब्र. अशोक जैन	३८. सिद्धशिला का आकार	४१	१५६
१८.	श्री आदित्य जैन	३९. चर्चा : भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि	३६	७८-७९
		४०. कर्मबन्ध	४१	१६७
१९.	डॉ. आर. पी. अग्रवाल	४१. Inhuman Act.	१६-१७	५४
२०.	श्रीमती आशा सहारिया	४२. स्वास्थ्य व आध्यात्मिकता का पारस्परिक सम्बन्ध	१८	४६-४९
२१.	डॉ. इन्दु राय (रस्तोगी)	४३. 'बन्धन मुक्ति' : महावीर	१	१०-१२

		४४.	प्रद्युम्न काव्य परम्परा	२	१०-१७
		४५.	नेमिचन्द्रिका : एक अध्ययन	५	८-११
२२.	श्री इन्द्र जीत जैन	४६.	चर्चा : तीर्थंकरों की संख्या आदि	३४	६४
२३.	श्री ई. आई. एल. जैक्सन	४७.	The Bible, Sacred Scripture of the Christians	२६	१४६-५१
२४.	मेजर ई. एच. कैन्टीनवाला	४८.	पारसी धर्म	२८	२२-२३
२५.	डॉ. ऋषभ चन्द्र जैन 'फौजदार'	४९.	गुजरात में आचार्य कुन्दकुन्द की प्राचीन पाण्डुलिपियां	१८	३१-३५
		५०.	नियमसार के प्रकाशित संस्करण	२१	३२-३६
		५१.	अनेकान्त का उपयोग	२४	२२-२४
		५२.	पार्श्वनाथ विषयक प्राकृत साहित्य	२६	१५४-५८
		५३.	आवश्यकों की प्राचीन परम्परा	३३	२२१-३०
		५४.	प्राकृत भाषायें	३८	१५१-५७
२६.	डॉ. ए. एल. (आशीर्वादी लाल) श्रीवास्तव	५५.	समीक्षा : श्रमण, व. ४६, अं. १०-१२	२८	१०१-०२
		५६.	ई. सन् की २०वीं सदी की समाप्ति और २१वीं का प्रारम्भ	४१	१५२-५४
		५७.	समीक्षा : The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka (Dr. Shashi Kant)	४२	३१२-१३
२७.	डॉ. एन. एल. (नन्द लाल) जैन	५८.	The Jains Abroad	२३	३२-३७
२८.	जस्टिस एम. एल. (मांगी लाल) जैन	५९.	'ध्यान' पर ध्यान?	२२	२३-२५
		६०.	सम्भेदशिखर - वस्तुस्थिति	२४	२५-३३
		६१.	चर्चा : तीर्थंकरों की संख्या आदि	३४	६६-७०
		६२.	उद्गार (पद्य)	३५	२४२
		६३.	चर्चा : जीव और कार्मण शरीर	३६	३०६-०९
		६४.	समीक्षा : 'जरा सोचिये' (पं. पद्मचन्द्र शास्त्री)	३८	१५७-६२
		६५.	कामदेव मन्दिर - एक विमर्श	३९	२६५-६६
		६६.	चर्चा : तीर्थंकरों की संख्या और जैन धर्म की प्राचीनता	४२	२८५-८७

२९.	डॉ. एम. डी. वसन्तराज	६७.	षड्दर्शन संग्रह - परिचय	२४	३६-४१
		६८.	जैन मतानुसार विवाह पद्धति का आरम्भ	३२	१३५-३८
		६९.	आचार्य श्री विद्यानन्दी और माणिक्यनन्दी का समय निर्धारण	४१	१२९-३३
३०.	डॉ. एल. एम. (लक्ष्मी मल्ल) सिंघवी (एम. पी.)	७०.	The Jain Declaration on Nature	३८	१७२-७३
३१.	डॉ. एल. सी. (लख्मी चन्द) जैन	७१.	संक्लेश और विशुद्धि	२६	१५९-६२
३२.	डॉ. कपूर चन्द जैन	७२.	प्राकृत एवं जैन विद्या सम्बन्धी शोध-प्रबन्धों की सूची	१२	५२-५६
		७३.	**शो. सा.** : डॉ. (ब्र.) मनोरमा जैन : जैन दर्शन में कर्म सिद्धान्त - एक अध्ययन		५७-५८
		७४.	**शो. सा.** : डॉ. हेमन्त कुमार जैन : भट्टाकलंककृत लघीयस्त्रय - एक दार्शनिक अध्ययन	१३	१२-१८
३३.	डॉ. कमल सिंह	७५.	समीक्षा : हिन्दी भाषा (डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया)	२६	१८६
३४.	डॉ. (श्रीमती) कमला पन्त (जोशी)	७६.	जैन दर्शन एवं अन्य भारतीय दर्शनों में मान्य मोक्ष मार्गो का तुलनात्मक विवेचन	१२	१८-२३
		७७.	जैन दर्शन में लेश्या एवं विज्ञानसम्मत विद्युत धारा - एक तुलनात्मक दृष्टि	१५	३२-३६
		७८.	न्याय-वैशेषिक दर्शन और जैन दर्शन में परमाणु	१६-१७	२३-३०
३५.	कु. कल्पना देवी	७९.	**शो. सा.** : संस्कृत के जैन सन्देश काव्य	१०	५३-५६
३६.	श्री कुन्दन लाल जैन	८०.	काव्य शास्त्र के मर्मज्ञ जैन कवि - विजयचन्द्र वर्णी	१२	३२-३५
		८१.	कुन्दकुन्दाचार्य बनाम ककूदाचार्य	१४	३५-३७
		८२.	गोलाराड् - एक ऐतिहासिक विवेचन	१६-१७	३१-४०
		८३.	पं. देवीदास भायजी कृत 'प्रवचनसार'	२०	४७-५३
		८४.	बुन्देली जैन कवि श्री चन्दनन्द	२४	३४-३६
३७.	डॉ. कुंवर लाल जैन	८५.	आदिदेव ऋषभ और महादेव शिव	१०	२४-२८
३८.	डॉ. (श्रीमती) कुसुम पटोरिया	८६.	तीर्थंकर अरिष्टनेमि व कृष्ण	२१	३७-४३
		८७.	विश्वलोचनकोशगत कतिपय नूतन शब्द	२७	२३३-३६

३९.	डॉ. कृष्ण पाल त्रिपाठी	८८.	**शो. सा.** : नलविलास : एक आलोचनात्मक अध्ययन	२१	७०-७६
		८९.	महाकवि रामचन्द्र सूरि : व्यक्तित्व एवं कृतित्व	२२	३४-४७
		९०.	नलविलास नाटक का काव्य सौन्दर्य	२८	४४-५४
४०.	डॉ. केशव प्रसाद गुप्ता	९१.	**शो. सा.** : बालचन्द्र सूरि कृत बसन्तविलास महाकाव्य का आलोचनात्मक अध्ययन	१६-१७	६९-७६
		९२.	जैन स्रोतों के आधार पर चौलुक्यों का इतिहास	२१	४४-५८
		९३.	'बसंत विलास' में वर्णित धार्मिक तथ्य	२२	४८-५६
४१.	श्री कैलाश चन्द्र जैन	९४.	संस्मरण-समीक्षा : गिलास आधा भरा है !	३९	२६६-६७
		९५.	मान-स्तम्भ	४०	४२
४२.	डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी	९६.	जैन धर्म एवं दर्शन के प्रतिष्ठापक नाटककार हस्तिमल्ल	२७	२३७-३९
४३.	श्री कैलाश भूषण जिन्दल	९७.	पं. अजित प्रसाद	२४	४४-५२
		९८.	जैन धर्म बिकाऊ है!	२५	२२-२७
		९९.	मूक पशु की आवाज : संवैधानिक स्थिति	२७	२५४-५६
		१००.	मांसाहार आवश्यक नहीं	२८	८५-८८, ९०
		१०१.	पशुओं के प्रति क्रूरता निवारण अधिनियम	३१	३७-३९
		१०२.	दयाभाव (Compassion) - संविधान की अपेक्षा	३३	२५३-५७
		१०३.	भारत में पशुवध : सरकारी संरक्षण में	३५	१५६-५८
		१०४.	Man - made God	३७	५५-५७
४४.	प्रो. खुशाल चन्द्र गोरावाला	१०५.	अथ समयसार शुद्धि प्रकरण	२०	२३-२५
		१०६.	समीक्षा : 'समयसार' (प्र. कुन्दकुन्द भारती)	२६	१७७-८२
४५.	श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी	१०७.	साहित्य की पठनीयता	३५	१४१-४२
४६.	श्रीमती गीता जैन	१०८.	महंगा धर्म या महंगी साधना	१६-१७	५६-५८
		१०९.	क्षमापना पत्र या वैभवी दिखावा	२०	६४-६७
		११०.	वृक्ष में भी प्राण हैं	३०	२७७-८०
४७.	श्री गुलाब चन्द्र जैन	१११.	विदिशा-वैभव	२७	२४४-४७
		११२.	ग्यारसपुर के दिगम्बर जैन मन्दिर	३२	११५-२१

		११३.	जैन संस्कृति : भारतीय डाक टिकटों पर	३५	१५२-५५,१५६
		११४.	जैन परम्परा में देव समूह	३७	४३-४७
		११५.	चर्चा : ऋषभदेव की निर्वाण भूमि		७७-७८
		११६.	साधु सामाज में फैलता शिथिलाचार	४२	२७२-७३
४८.	स्वामी गौरीश्वरानन्द	११७.	वैदिक-हिन्दू धर्म	२८	२०-२१,२६
४६.	भिक्षु चन्द्र रत्न	११८.	बौद्ध धर्म	२८	२४-२६
५०.	श्री जमनालाल जैन	११६.	दिगम्बर जैन सैंतवाल समाज के प्रति आचार्य समन्तभद्र महाराज का योगदान	२०	५४-५६
		१२०.	केलझर का पुरातात्विक वैभव	२३	४५-४६
		१२१.	समीक्षा : इतिहास के अधखुले पृष्ठ (श्री शरद कुमार साधक)	२७	२६६-७०
		१२२.	जिज्ञासा : केशलोंच?	३०	२७५
५१.	कु. ज़रीन विक्काजी	१२३.	Zoroastrianism and the Zend-Avesta	२६	१५२-५४
५२.	श्री जे. एल. (जगमन्दर लाल) जैनी	१२४.	Editorial Notes-The Jaina Gazette, Jan-Feb. 1905	१४	४१-४८
		१२५.	-The Jaina Gazette, May 1905	१५	५४-५७
५३.	डॉ. (श्रीमती) जैनमती जैन	१२६.	'कलिकाल सर्वज्ञ' आचार्य हेमचन्द्र सूरि	२२	१७-२२, २६
		१२७.	**शो. सा.** : पंचास्तिकाय का समीक्षात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन	२६	१६७-७०, १७२
		१२८.	भगवान पार्श्वनाथ द्वारा उपदिष्ट चातुर्याम धर्म	३७	२७-३२
५४.	श्री जौहरीमल जैन (I.P.S.)	१२६.	समाज भयमुक्त क्यों नहीं	३५	१३२-३६
५५.	श्री जौहरीमल पारख	१३०.	आत्म-घाती मांग (अल्पसंख्यक की)	२८	७८-८५
५६.	श्री ज्ञानचन्द्र खिन्दूका	१३१.	श्री बाहुबलि महामस्तकाभिषेक विमर्श	२१	२०-२३
५७.	श्री ज्ञानचन्द जैन	१३२.	राष्ट्र का वर्तमान परिदृश्य चिन्ताजनक	३५	१२६-३१
		१३३.	शोध समीक्षा : कलिंगराज खारवेल का हाथीगुम्फा शिलालेख (डॉ. शशि कान्त की सद्यः प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा)	४०	३६-४१, ४४
		१३४.	शोध विमर्श : कलिंग-जिन	४१	१७०-७१
५८.	डॉ. टी. वी. जी. शास्त्री	१३५.	प्राचीन जैन स्थल बड्डमानु का संरक्षण	२३	४६-४७

५९.	पं. ताराचन्द्र 'प्रेमी'	१३६.	इतिहास-मर्मज्ञ ज्योति प्रसाद (पद्य)	३	कवर ३
६०.	श्री तिलोक मुनि	१३७.	चर्चा : कर्मबन्ध	४१	१६७-६९
६१.	श्री त्रिभुवन प्रसाद तिवारी (I.A.S.)	१३८.	भगवान महावीर	३२	१०६-१०९
६२.	श्री त्रिलोक चन्द जैन शास्त्री	१३९.	श्री बाहुबलि महामस्तकाभिषेक विमर्श	२१	२३-२५
६३.	सरदार त्रिलोचन सिंह भसीन	१४०.	सिक्ख धर्म	२८	३०-३१,३६
६४.	फादर थियो पिन्टो	१४१.	ईसाई धर्म	२८	२७, २९
६५.	पं. धन्य कुमार जैन (पूर्व विधायक)	१४२.	मन्दिर, मूर्ति और वैराग्यता	३७	२९९-३०१
		१४३.	जिज्ञासा : कर्म और धर्म	३९	२८२-८३
		१४४.	ज्वलन्त प्रश्न : मुनिचर्या पर	४२	२७६-७७
६६.	श्री धर्मवीर	१४५.	मेरे धार्मिक गुरु (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन)	७	४०-४१
६७.	श्री धर्मेन्द्र मोहन सिन्हा (I.A.S.)	१४६.	वर्ण-व्यवस्था और अस्पृश्यता	३८	१६२-६६
६८.	श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन	१४७.	पिच्छि की मर्यादा का अवमूल्यन न हो	३५	१५९-६०
६९.	श्री नरेन्द्र सिंह चौधरी	१४८.	धर्म का मर्म - अहिंसा	३९	२६०-६४
७०.	डॉ. नरेन्द्र सिंह राजपूत	१४९.	**शो. सा.** : संस्कृत काव्य के विकास में बीसवीं शताब्दी के जैन-मनीषियों का योगदान	१९	५३-५५
७१.	श्री नरेश गुप्त	१५०.	जिज्ञासा : भारत में मानव इतिहास	३९	२८४
७२.	श्री नलिन कान्त जैन	१५१.	रिपोर्ट : श्रद्धांजलि सभा (२५.६.१९८८)	७	७-१२
		१५२.	सारस्वत सम्मान समारोह (११.६.१९९८)	३५	११५-२३
		१५३.	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ति और शोध की विधा पर संवादगोष्ठी (६.२.१९९९)	३७	८१-८३
		१५४.	डॉ. ज्योति जैन की ११ वीं. पुण्यतिथि (११.६.१९९९९) और 'गिलास आधा भरा है' का विमोचन	३८	१७९-८३
७३.	पं. नाथूलाल जैन शास्त्री	१५५.	सचित-अचित विमर्श	४०	२९-३२
७४.	श्री नीरज जैन	१५६.	जिज्ञासा : पार्श्वनाथ की फणावलियुक्त प्रतिमा?	२९	१६४-६५
			बाहुबलि की तपस्या अवधि?		१६५-६६

७५.	डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी	१५७.	जैन कला, एक सर्वेक्षणात्मक परिचय	२०	२७-३१
७६.	कु. नीलम जैन	१५८.	व्यासकृत हरिवंशपुराण एवं जिनसेनकृत हरिवंशपुराण के आलोक में श्रीकृष्ण चरित	३६	२७२-७८
७७.	पं. नेमचन्द डोणगांवकर	१५९.	षट्खण्डागम का खण्ड विभाग	३७	३८-४२
७८.	पं. पद्मचन्द्र शास्त्री	१६०.	कैन्सर में तबदील होती शौरसेनी की गांठ	३७	४६-५४
७९.	श्री पन्ना लाल जैन	१६१.	कबीर साहित्य में जैन अध्यात्म की झलक	३७	३५-३७
८०.	डॉ. परमानन्द जड़िया	१६२.	समीक्षा : 'गिलास आधा भरा है' (श्री रमा कान्त जैन)	३८	१६२-६३
८१.	श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'	१६३.	भक्तामर स्तोत्र - भाषा पद्यानुवाद	१०	२९-३६
		१६४.	भगवान महावीर जन्म-स्तुति	११	१४
		१६५.	कल्याणमन्दिर स्तोत्र - पद्यानुवाद	१२	३६-४३
		१६६.	समणसुत्तं - पद्यानुवाद :		
			मङ्गलसूत्र	१६-१७	६४-६७
			जिनशासन सूत्र		६७-६८
			संघसूत्र	१८	६९-७०
			निरूपणसूत्र		७०-७२
			संसारचक्र सूत्र	१९	७८-८०
			कार्यसूत्र		८०-८१, ८३
			मिथ्यात्वसूत्र	२०	७९
			रागपरिहार सूत्र		७९-८१
			धर्मसूत्र	२३	४१-४४,
				२४	५८-६१
			संयम सूत्र	२५	५०-५३
			अपरिग्रह सूत्र	२६	१७४-७५
			अहिंसा सूत्र	२७	२६२-६४
		पद्य रचनायें :			
		१६७.	डॉ. ज्योति प्रसाद - श्रद्धांजलि	१०	६३
		१६८.	ज्योति स्मृति	१२	६०
		१६९.	जीवनी तेरी बनी इतिहास की अब कहानी है	१४	५८-५९
		१७०.	ज्योति प्रसाद तुम पुरुष श्रेष्ठ	१६-१७	८२, ८४

		१७१.	जला ज्ञान दीपक जगत में हे ज्योति	१९	८५
		१७२.	हम याद करते हैं ज्योति तुम्हारा नाम था	२०	८५-८६
		१७३.	आज ज्योति प्रसाद तुझको याद हम सब करते है	२६	१७६
		१७४.	सरस्वती के पुत्र मानस प्रेरणा के स्रोत थे	३१	४६-४७
		१७५.	सोचो, कैसे निर्मल मन होगा	३४	७४
		१७६.	जिज्ञासा : तीर्थंकरों की संख्या आदि		६४-६६
		१७७.	जीव और कार्मण शरीर	३६	३०६-०७
		१७८.	पुद्गल और चेतन	३९	२८०-८२
		१७९.	कर्मबन्ध	४१	१६६
८२.	श्री प्रणव देव	१८०.	'वीर विनोद' में वर्णित जैन धर्म	३६	२६९-७१
८३.	डॉ. प्रयाग नारायण मिश्र	१८१.	जैन साहित्य में 'लोकानुयोग साहित्य'	२७	२४०-४४
८४.	डॉ. (श्रीमती) प्रेम कुमारी जोशी	१८२.	जैन धर्म - आधुनिक परिप्रेक्ष्य में	२०	६७-७०
८५.	श्री बाबू लाल जैन पाटौदी	१८३.	श्री बाहुबलि महमस्तकाभिषेक विमर्श	२१	१९-२०
८६.	बा. बिहारी लाल जैन	१८४.	Jaina Vairagya Shataka १-२६	१८	६६-६८
			२७-५७	१९	७४-७७
			५८-७६	२०	७६-७८
			७७-१००	२३	३८-४०
८७.	डॉ. बी. के. खड़बड़ी	१८५.	Sravakachara : Its signficance and relevance in the pesent times	१५	५९-६०
८८.	श्री बी. सी. धवते	१८६.	The Southern Mahratta Jain Sabha	१५	५१-५४
८९.	डॉ. बीजेन्द्र कुमार जैमिनी	१८७.	डॉ. शशि कान्त को 'बीसवीं शताब्दी रत्न' सम्मान	४२	२९८-३००
९०.	श्रीमती बीना जिन्दल	१८८.	काव्य सुमन (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	७	१४
९१.	डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर'	१८९.	जीवन की निष्कपटता ही ऋजुता है	३६	२६५-६८
९२.	कविवर भूधर दास	१९०.	आया रे बुढ़ापा मानी, सुधिबुधि बिसरानी (पद्य)	३३	२१०

९३.	श्रीमती मंजरी जैन	१९१.	काव्य सुमन (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	७	१३
		१९२.	In Bad Taste	१६-१७	५४-५५
९४.	श्री मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त'	१९३.	'नए वर्ष' पर 'नव जीवन' (पद्य)	१६-१७	५९-६०
		१९४.	'शिव' का सही स्वरूप	२०	६१-६३
		१९५.	जैन धर्म : कुछ परिभाषायें, कुछ जिज्ञासायें	४२	२७५, २७७
९५.	डॉ. (ब्र.) मनोरमा जैन	१९६.	जैन दर्शन में कर्म का स्वरूप - एक तुलनात्मक अध्ययन	१६	२८-३३
		१९७.	आत्म शोधन	३८	१४६-४८
९६.	डॉ. (श्रीमती) मनोरमा जैन	१९८.	**शो. सा.** : पं. राजमल्ल कृत पञ्चाध्यायी में प्रतिपादित जैन दर्शन	३७	५८-६४
९७.	डॉ. मनोहर भण्डारी	१९९.	ॐ - एक विमर्श	३७	४८
९८.	डॉ. महावीर प्रसाद जैन		पद्य रचनायें :		
		२००.	काव्य सुमन (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	७	१५
		२०१.	डॉ. ज्योति प्रसाद तुम्हारा अभिनन्दन है	१६	८४
		२०२.	तीर्थंकर श्री महावीर का शत-शत वन्दन है	२०	८३
		२०३.	धन्यवाद शशिकान्त जी, लिखता पत्र सहर्ष		१०६-०७
		२०४.	याद तुम्हारी फिर आयी है ज्योति पर्व का ले आह्वान	२२	६४-६५
		२०५.	विद्यावारिधि ज्योतिपुंज जय ज्योति प्रसाद नमन है	२६	१७४
		२०६.	विद्यावारिधि काल पुरुष हे ज्योति पुंज सुखकारी	३१	४७-४८
		२०७.	ज्योतिर्मय ज्योति प्रसाद	३७	८२-८३
		२०८.	अन्तर से निकले हुए रमाकान्त के लेख	३८	१८२-८३
९९.	डॉ. महेन्द्र नाथ सिंह	२०९.	उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित जैन साधना मार्ग	६	१८-२४
१००.	डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया	२१०.	बारहमासा में बारहभावना	३१	२६-३६
		२११.	जैन वाङ्मय में अनुयोग : स्वरूप और स्वभाव	३४	४१-४५
१०१.	डॉ. (कु.) मालती जैन	२१२.	गंगा : आचार्य जिनसेन की दृष्टि में	३०	२४८-५१, २५५

		२१३.	हिन्दी रासोकाव्य परम्परा में जैन कवियों का योगदान	३३	२३०-३८
		२१४.	आदिपुराण में नारी का चित्रण	४२	२६५-६८
१०२.	मौलाना मुहम्मद इरफान	२१५.	इस्लाम धर्म	२८	२८-२६
१०३.	श्री मूलचन्द जैन	२१६.	समाज चिन्तन : कलंकित होने से बचाओ	४०	३२-३५
		२१७.	संस्मरण : दानी कर्ण आज भी हैं	४१	१५६-६१
१०४.	डॉ. यदुनाथ प्रसाद दुबे	२१८.	**शो. सा.** : मेरूतुङ्गाचार्य कृत प्रबन्धचिन्तामणि का एक आलोचनात्मक अध्ययन	१६	५६-६४
१०५.	डॉ. योगेश चन्द्र जैन	२१६.	कुन्दकुन्द की दृष्टि में जैन श्रमण	६	१२-१७
		२२०.	समयसार और प्रवचनसार : एक अध्ययन	१०	३७-४४
१०६.	डॉ. रज्जन कुमार	२२१.	जैन दर्शन की कर्म सम्बन्धी अवधारणा	११	२७-३७
		२२२.	वैदिक-ब्राह्मणीय परम्परा में भगवान ऋषभ	१५	३७-४४
		२२३.	आकाश द्रव्य : एक विवेचन	२०	३२-४०
		२२४.	जैन एवं जैनेतर परम्परा में जीव तत्व	२३	१३-२०
		२२५.	योग-परम्परा	३७	१७-२६
		२२६.	Jaina-Dharma	४१	१३८-४३
१०७.	डॉ. रत्न लाल जैन	२२७.	**शो. सा.** : जैन कर्मसिद्धान्त और मनोविज्ञान	२१	६२-६६
१०८.	डॉ. रमेश चन्द्र जैन	२२८.	चर्चा : विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन	३६	२७२-७३
१०६.	डॉ. (श्रीमती) राका जैन	२२६.	**शो. सा.** : जीवनन्धर चम्पू : एक समीक्षात्मक अध्ययन	३६	२७८-८२
११०.	श्री राकेश पाण्डेय	२३०.	महोपाध्याय समयसुन्दर - जीवनवृत्त	२०	४०-४६
१११.	आचार्य राजकुमार जैन	२३१.	जैनायुर्वेद वाङ्मय - संक्षिप्त परिचय	३	१६-२१
		२३२.	आडम्बर में जकड़ा हुआ धर्म	३२	११०-१५
११२.	डॉ. राजदेव दूबे	२३३.	वैदिक वाङ्मय और पुरातत्त्व में तीर्थंकर ऋषभदेव	३	१५-१६
		२३४.	जैन आचार-पद्धति में अचौर्य एवं अपरिग्रह अणुव्रत की अवधारणा	१८	३६-४२
११३.	डॉ. राजमल बोरा	२३५.	पउमचरियं	४२	२५६-६३
११४.	डॉ. राजाराम जैन	२३६.	चर्चा : विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन	३६	२७३-७५

११५. श्री राजीव कान्त जैन	**पद्य रचनायें :**			
	२३७.	जल	९	३६
	२३८.	दीप जला दो	१०	७४
	२३९.	गणतंत्र दिवस बना प्रश्न-चिन्ह	२८	८९-९०
	२४०.	मैं (भटकन से सुलझन तक)	३०	२६७-६८
	२४१.	पूत कपूत से माँ बांझ भली	३३	२८३
	२४२.	आइये, प्रण करें (स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ति पर)	३४	७२-७३
	२४३.	बहुत चले, अभी पर बहुत जाना है	३७	६५-६६
	२४४.	कारगिल के जवान	३९	२७१
	२४५.	आइये प्रण करें आज (गणतंत्र की स्वर्ण जयन्ति पर)	४०	४३
	२४६.	जनगण नादान, टोपी महान!	४२	२६६-६७
११६. श्री राजेन्द्र कुमार जैन	२४७.	जैन समाज के समक्ष चुनौती	२५	३०-३२
११७. डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	२४८.	आचार्य कुन्दकुन्द : मोक्ष और मोक्षार्थी	६	९-१५
११८. डॉ. (श्रीमती) रानी मजमूदार	२४९.	जैन साहित्य के महाविद्वान हरमन जैकोबी	१८	४९-५२
	२५०.	लोथर वेण्डेल	२४	४२-४४
	२५१.	लुड्विग अल्सडोर्फ	३०	२४३-४७
११९. श्री रामजीत जैन	२५२.	विजयवर्गीयान्वय	१३	५-११
	२५३.	सुप्रतिष्ठ निर्वाण क्षेत्र (गोपाचल)	१४	१८-१९
	२५४.	गोलश्रृंगार	१६-१७	४१-४३
	२५५.	गंगेरवाल	१९	३४-३५
	२५६.	बुढ़ेले	२०	५७-५८
	२५७.	गोपाचल - इतिहास के आलोक में	२२	६०-६२
	२५८.	गिरनार सिद्धक्षेत्र - ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में	३०	२५२-५५
	२५९.	जिज्ञासा : निर्वाणकाण्ड और उसके रचनाकार; नंग-अनंग कुमारों की निर्वाण भूमि		२६९-७०
१२०. प्रो. रामसरन शर्मा	२६०.	Jainism	३४	२८-४०
१२१. डॉ. रामसजीवन शुक्ल	२६१.	**शो. सा.** : हरिभद्रसूरि कालीन भारत	१४	१४-१७,२०
	२६२.	जनपद ललितपुर के जैन स्मारक	४१	१३४-३७
१२२. बा. रिखबदास	२६३.	Whom do the Jains worship?	१३	४४-४६
	२६४.	The form of spirit and religion	१५	४६-५१

१२३.	श्री लक्ष्मी नारायण कुरील	२६५.	बौद्ध धर्म - त्रिपिटक का विकास एवं लिपिकरण	२६	१५४-५८
१२४.	श्री लाभशंकर लाख्मीदास नगरवाडो	२६६.	Cruelty to Animals (Report in the Jaina Gazette, May 1905)	१६-१७	६१-६३, ६६
१२५.	श्रीमती लीलावती जैन	२६७.	चमत्कार या वीतरागता	३०	२५६-६०
१२६.	श्रीमती वासंती शहा	२६८.	विज्ञानवादी धर्म का अवैज्ञानिक रूपान्तरण	२५	२८-३०
		२६९.	सत्यान्नास्ति परो धर्म : मुनि व धनी का मोर्चा	३४	५३-५५
		२७०.	जैन पंथोपपंथी बांधव अपनी भूमिका पर विचार करें	३७	६८-७०
१२७.	डॉ. विजय कुमार	२७१.	जैन एवं बौद्ध दर्शनों में आत्मवाद	१८	१६-२४
		२७२.	**शो. सा.** : जैन एवं बौद्ध शिक्षा दर्शन - एक तुलनात्मक अध्ययन	२१	५६-६२
१२८.	डॉ. विजय कुमार जैन	२७३.	जैन-दर्शन और पर्यावरण-संरक्षण	४०	२०-२४
१२९.	डॉ. विनोद कुमार तिवारी	२७४.	जैन सिद्धान्त में अजीव-तत्त्व की उपयोगिता और महत्व	३	११-१४
		२७५.	जैन दर्शन में मुक्ति : स्वरूप और प्रक्रिया	५	२१-२३
		२७६.	तीर्थंकर महावीर का निर्वाण स्थल : पावानगर	१२	२४-३१
		२७७.	तीर्थंकर पार्श्वनाथ : एक ऐतिहासिक अध्ययन	१४	३१-३४
		२७८.	वर्तमान भारतीय सन्दर्भ में महावीर के उपदेशों का महत्व	१६-१७	४३-४६
		२७९.	जैन ऐतिहासिक पुरुष : सम्राट सम्प्रति	२८	३२-३६
		२८०.	जैन तत्त्व विचार में जीव तत्त्व : एक समीक्षा	३४	४६-४९
१३०.	कु. विभा जैन	२८१.	दिगम्बर मुनियों की जीवन चर्या	६	२४-२७
		२८२.	जैन दर्शन में ईश्वर तत्त्व	१०	४५-४७
		२८३.	शब्द और भाषा	११	१८-२०
१३१.	पं. विमल कुमार जैन सोरैया	२८४.	आंगम परम्परानुसार पूजन विधि	२३	२१-२६

१३२.	डॉ. विलास संगवे	२८५.	Jaina society through the ages	१५	५७-५८
१३३.	श्री विवेक काला	२८६.	श्री विद्या विनोद काला : एक क्रान्तिकारी व्यक्तित्व	३८	१८५-८६
१३४.	डॉ. विश्वनाथ मिश्र	२८७.	जैन दर्शन, अध्यात्मवादी काव्य और कबीर	३१	१६-२३
१३५.	श्री वी. एन.	२८८.	The Irrelevance of It All	१९	६७-६८
	(वीर नन्दन) जिन्दल	२८९.	Prayer Power	२३	४७
१३६.	श्री वीरेन्द्र अंशुमाली	२९०.	अपनी पीड़ा का भी तुम उपचार करोगे (पद्य)	३७	६७
१३७.	श्री वेद प्रकाश गर्ग	२९१.	'अग्रवाल' शब्द की प्राचीनता	२२	६३-६५
		२९२.	कवि छीहल और उनकी रचनाएं	२५	३४-३९
		२९३.	वाचक कुशल लाभ और उनकी रचनाएं	२८	५५-६३
		२९४.	राजा चन्द्रगुप्त और आचार्य भद्रबाहु	३३	२३९-४४
		२९५.	कवि धनपाल रचित 'सच्चरिउ महावीर उत्साह'	३८	१४३-४६
		२९६.	श्रावक कवि आसिगु	४०	२५-२८
		२९७.	'भरत' : शब्द यात्रा	४२	२६९-७१
१३८.	श्री शान्तिलाल के. शहा	२९८.	जिज्ञासा : तीर्थंकारों की आयु, नाम	३०	२७२
		२९९.	पुण्य क्या है? श्रमण कौन है? उपादेय किम्?	३२	१३९-४०
		३००.	तीर्थंकरों की संख्या व स्वरूप आदि	३३	२६६-६७
		३०१.	जीव और कार्मण शरीर	३५	१६२
		३०२.	संस्थापक तीर्थंकर और जैन धर्म की प्राचीनता	३६	२८३
		३०३.	श्री णमोकार मंत्र	४०	५५
१३९.	श्रीमती शारदा जैन	३०४.	हे विद्या वारिधि तुम्हें नमन (पद्य)	३८	१८०
१४०.	आचार्य शिवचन्द्र शर्मा	३०५.	समीक्षा : 'देह से विदेह की ओर' (डा. अम्बा प्रसाद 'सुमन')	३६	१८४-८५
		३०६.	क्या वेदों में पशु हिंसा का उल्लेख है?	३०	२६०-६४
		३०७.	क्या वेद में इतिहास है?	३२	१३१-३४, १३६
		३०८.	विकासवाद : एक समीक्षा	३४	५०-५३

१४१.	डॉ. शिव प्रसाद	३०९.	काशहृदगच्छ का इतिहास : एक अध्ययन	२२	२६-३३
		३१०.	यशोभद्रसूरि गच्छ	२७	२४७-४९
१४२.	डॉ. शील चन्द्र जैन	३११.	आचार्य सन्मतिसागर जी कृत कुरल-काव्य (कुन्दकुन्द गीता) - एक अनुचिन्तन	१९	६४-६६
		३१२.	समीक्षा : सन्मतिसागर कृत 'मुक्तक निकुञ्ज"	२१	७९-८१
		३१३.	भाव तरंग (पद्य)	२३	७३-७४
		३१४.	'शोधादर्श' पत्रिका मिली, पढ़ी बैठकर शान्त (पद्य)	२५	८९-९०
१४३.	श्रीमती शेफाली मित्तल	३१५.	कलिकाल वन्दना (पद्य)	२०	१०८
१४४.	डॉ. शैलनाथ चतुर्वेदी	३१६.	हिन्दू धर्म ग्रन्थ - वाचिक परम्परा और पुस्तक-लेखन	२६	१५९-६१
		३१७.	भगवान ने बनाया एक समान (जी. एफ. एलेक्ज़ेंडर) (पद्यानुवाद)	२९	१७१-७२
१४५.	डॉ. शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी	३१८.	थुवैन-हनुमान और मुनियुगल	१	१७-१९
		३१९.	**शो. सा.** : राज्य संग्रहालय, लखनऊ, की जैन प्रतिमायें (एक प्रतिमाशास्त्रीय अध्ययन)	१३	४०-४३
		३२०.	पुरातत्त्व में पुस्तक-धारिणी सरस्वती	२६	१६७-६९
१४६.	डॉ. शोभा लाल जैन	३२१.	समीक्षा : 'जैन अभिलेख परिशीलन' (डॉ. कस्तूर चन्द जैन 'सुमन')	२७	२६८-६९
१४७.	डॉ. (श्रीमती) सन्तोष जैन	३२२.	मुनिवेशी कलियुग के (पद्य)	२०	१०७
१४८.	श्री सन्दीप कान्त जैन	३२३.	एक मूर्धन्य जैन विद्वान का अवसान	७	४३
१४९.	डॉ. सागरमल जैन	३२४.	जटासिंहनन्दि का वराङ्गचरित और उसकी परम्परा	१९	३७-५०
१५०.	श्रीमती सितारा देवी जैन	३२५.	संस्मरण : ब्र. पंडिता विदुषी-रत्न श्रद्धेया चंदाबाई	३५	१४९-५१, २४३
१५१.	श्री सुखमाल चन्द जैन	३२६.	स्थापना-निक्षेप की अवधारणा	३१	४०-४२
		३२७.	लोक रचना, पंच मेरु, नरक भूमियों और स्वर्गों की अवधारणा	३४	५६-६१

		३२८.	Precious Human Life	४१	१६१
		३२६.	उपेक्षा-अपेक्षा द्वन्द	४२	२७४
१५२.	डॉ. सुदर्शन लाल जैन	३३०.	जैन आगम ग्रन्थों का लिपिकरण	२६	१६२-६७
१५३.	श्रीमती सुधा जिन्दल	३३१.	मगधराज कुणिक-अजातशत्रु (नाटिका)	१८	५३-६४
१५४.	डॉ. (श्रीमती) सुधा जैन	३३२.	भारतीय ध्यान पद्धति : एक दृष्टि	२८	३६-४४
		३३३.	**शो. सा.** : जैन योग और बौद्ध योग का तुलनात्मक अध्ययन	३२	१२२-२६
१५५.	डॉ. सुधांशु कुमार जैन	३३४.	हमारी आस्थाएं और प्रकृति	३६	३०४-०६
१५६.	डॉ. (श्रीमती) सुनीता कुमारी	३३५.	जैन पुराणों में लोक संबंधी अवधारणा	१८	२४-३१
		३३६.	पौराणिक सृष्टि : वैज्ञानिक विश्लेषण	१६	५०-५३
		३३७.	भारतीय दर्शन में सृष्टि वर्णन	३०	२३३-४८
१५७.	डॉ. सुरेन्द्र कुमार आर्य	३३८.	पश्चिमी मालवा के जैन हस्तलिखित-ग्रन्थ भण्डार	३६	२५६-६०
१५८.	श्री सुरेश जैन (I.A.S.)	३३६.	Save Planet through Eco-Jainism	२५	४६-४६
१५६.	मुनि सुशील कुमार	३४०.	पंजाब की शान्ति के लिए अपील	६	२३-२४
१६०.	डॉ. (कु.) सुषमा जैन	३४१.	आचार्य अमितगति : व्यक्तित्व और कृतित्व	८	४-०६
		३४२.	'सुभाषितरत्नसंदोह' - नैतिक शिक्षाओं का अपूर्व भण्डार	१३	१६-२४
१६१.	डॉ. (श्रीमती) सूरजमुखी जैन	३४३.	जैन दर्शन में मोक्ष तत्त्व - एक वैज्ञानिक विश्लेषण	३६	२४७-५७
१६२.	डॉ. हुकुम चन्द्र भारिल्ल	३४४.	जैन दर्शन के तीन अकार : अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह	२२	७०-७४
१६३.	डॉ. (श्रीमती) हेमलता जोहरापुरकर	३४५.	**शो. सा.** : प्राचीन मराठी जैन आख्यान-काव्य	३६	२८३-८८
१६४.	कु. हेमा सक्सेना	३४६.	रिपोर्ट : श्रुतपचंमी और पुस्तकालय स्थापना दिवस (३०.५.१६६८)	३५	१४५-४८, १५१
		३४७.	-तदैव- (१८.६.१६६६)	३८	१८४

खण्ड-ख : सम्पादक मण्डल

१. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, संस्थापक एवं आद्य सम्पादक

(अ)	लेख शीर्षक	अंक	पृष्ठ
१.	मुनीश्वर कुन्दकुन्दाचार्य	१	३-०६
२.	कुन्दकुन्द-युग के अन्य ग्रन्थकार (१)	२	३-०६
	-तदैव- (२)	३	३-१०
	-तदैव- (३)	४	३-०६
३.	जैन रामकथा साहित्य की वर्गीकृत सूची	५	२४-३१
४.	जैन इतिहास का एक स्वर्णिम युग -	५	२-०७,
	होयसल साम्राज्य काल	६	२-०६
५.	नदिया एक, घाट बहुतेरे	६	१६-२२
६.	क्षेमकीर्ति और क्षेमेन्द्रकीर्ति नाम के विभिन्न गुरु	८	१३-१६
७.	कुमारसेन नाम के विभिन्न गुरु	६	३३-३८
८.	कमलकीर्ति नाम के विभिन्न गुरु	१०	५-०७
६.	कुलचन्द्र नाम के आचार्य	११	१३-१४
१०.	अहिच्छत्रा - इतिहास के आलोक में	१२	६-१४
११.	मानव या पशु?	१३	२५-३४
१२.	भारतवर्ष का एक प्राचीन जैन विश्वविद्यालय	१४	५-१३
१३.	भारतीय साहित्य के निर्माण में जैनों का योगदान	१५	६-१८
१४.	महावीर और बुद्ध	१६-१७	७-१२
१५.	श्रमण संस्कृति की प्राचीनता	१८	६-०८
१६.	जैन न्याय के सर्वोपरि प्रस्तोता श्रीमद्भट्टाकलंकदेव	१६	८-१७, ३५-३६
१७.	समाज चेते, देश जागे!	२०	४-०८
१८.	धर्म क्या सिखाता है?	२१	५-०८
१६.	आवश्यकता है धर्म को जीवन से जोड़ने की	२२	४-०७
२०.	मनुष्य के त्राण का अमोघ उपाय : धर्म	२३	५-०६
२१.	Pre-Mediaeval Jain Novels	२४	३-०५
२२.	जैन धर्म और संस्कृति	२५	५-१२
२३.	समाज के सामने चुनौती	२६	१३५-३७
२४.	शुभराग की हेयोपादेयता	२७	२२२-२५
२५.	जैन धर्म	२८	१७-१६
२६.	व्यसन-जाल	२६	१४१-४४

२७.	Jainism is not a Rebellious Child of Vedicism or Hinduism	३०	२२३-२७
२८.	Mahavira in the Early Buddhist Literature	३१	८-१०
२९.	Some Common Features in Jaina and Buddhist Traditions and Art	३२	९८-१०१
३०.	वृद्धों की समस्या	३३	२०८-११
३१.	Essence of Jainism	३४	१०-१४
३२.	सारस्वत सम्मान : क्यों और कैसे	३५	११४
३३.	देवी-देवताओं की पूजा-उपासना	३६	२५३-५८
३४.	दोषाणां कारणं मद्यम्	३७	९-११
३५.	Keynote of the Jaina Path : Renunciation	३८	१३५-३८
३६.	Proto - historic Tradition	३९	२३१-३५
३७.	Relevance of Lord Mahavira's Message Today and Tomorrow	४०	९-१३
३८.	महाकवि स्वयंभू	४१	११७-२३
३९.	जैन स्तोत्र-साहित्य	४२	२३८-४१
(आ)	**पद्य रचनायें :**		
१.	जय त्रिभुवन स्तोत्र	५	४४
२.	वीतराग स्वरूपं	२३	७६
३.	महावीर कीर्तन	३५	१४३
(इ)	**शोध कण :**		
१.	सन् १८५७ के अमर शहीद हुकम चन्द जैन	१	२४-२५
२.	प्राचीन जैन मृण्मूर्ति		२५-२७
३.	खतरगच्छ पट्टावली का लक्ष्मीपुर		२७
४.	महान गणितज्ञ महावीराचार्य	२	२८-२९
५.	पद्मावतीपुरवालों की पद्मावती		२९-३१
६.	प्राचीनतम हस्तलिखित कागदीय प्रति		३१-३२
७.	रामकथा विषयक जैन साहित्य	३	२१-२३
८.	आन्ध्र प्रदेश का प्राचीनतम जैन केन्द्र		२३-२५
९.	'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दो जैन शहीद		२५
१०.	जैन रामकथा विषयक शोध-प्रबन्ध	४	२४-२८
११.	अमर शहीद साबूलाल जैन		२८-२९
१२.	मांडु के किले से निकली पार्श्व प्रतिमायें		२९

१३.	वज्रपाणि पंडित	५	३२-३३
१४.	सहारनपुर का एक ऐतिहासिक उल्लेख		३३-३४
१५.	दानवीर बाबू हर प्रसाद जैन		३४-३५
१६.	कुन्दकुन्द-द्विसहस्राब्दि?	६	२५-२६
१७.	पार्श्व-पद्मावती का एक विचित्र मूर्तांकन		२६-२७
१८.	महान क्रान्तिकारी देशभक्त पं. अर्जुन लाल सेठी		२७-२६
(ई)	**गुरुगुण-कीर्तन :**		
१.	अमृतचन्द्राचार्य	१	१
२.	आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त-चक्रवर्ती	२	१
३.	आचार्य अमितगति प्रथम एवं द्वितीय	३	१
४.	महापण्डित प्रभाचन्द्राचार्य	४	१
५.	वादिराज देव 'षट्तर्क्कषण्मुख', 'जगदेकमल्लवादि'	५	१
६.	वादीभसिंह अजितसेन	६	१
(उ)	**सम्पादकीय : (निवेदन/प्रास्ताविक/टिप्पणी/रिपोर्ट) :**		
१.	अपनी बात	१	२
२.	आचार्य अनन्त प्रसाद जैन 'लोकपाल'	२	२७
३.	प्रासंगिक	४	२
४.	पं. कैलाश चन्द्र शास्त्री सिद्धान्ताचार्य	५	३६
(ऊ)	**पुस्तक खण्ड :**		
१.	'आत्म दर्शन' (कवि नाथूराम कृत)	१	१-१२
२.	कवि मनोहर दास विरचित 'ज्ञानचिन्तामणि'	२	१-१२
३.	कविवर आसाराम विरचित 'नेमिचन्द्रिका'	३ व ४	१-२२
४.	जैन-ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्तिकोश	१ से ७	१-१४०
(ए)	**समीक्षा :**		
१.	Political and Cultural History of Mid-North India (Dr. Shashi Kant)	६	२८-३०
(ऐ)	**साहित्य परिचय/समीक्षा : ८८ पुस्तकें, १२ पत्रिकायें :**		
	१ (२८-३२), २ (३२-४०), ३ (२६-३२), ४ (३०-३५), ५ (३७-४३), ६ (३०-३४)		

(कोष्ठक में पृष्ठ सं. है)

२. श्री अजित प्रसाद जैन, प्रकाशक व प्रबन्ध/प्रधान सम्पादक

(अ) सम्पादकीय अग्रलेख :

१.	कलिकाल सर्वज्ञ	१५	१६-२३
	यह कैसा जीर्णोद्धार?		२३-२७
	हस्तिनापुर क्षेत्र पर आतंक की काली छाया		२८
२.	षष्ठम पट्टाचार्य	१८	२-०५
३.	कर्मयोगी	१९	३-०८
४.	विद्वानों ने पास किये प्रस्ताव	२१	९-१३
५.	आगम और अवर्णवाद - एक चिन्तन	२२	७-१६
६.	श्री सम्मेदशिखर विवाद विमर्श	२३	७-१२
	यह कैसी पत्रकारिता		१२
७.	श्रमणाचार के नये आयाम	२४	६-१२
८.	पंच-कल्याणक प्रतिष्ठाएं	२५	१३-१९
९.	वाग्देवी के अवतरण का पर्व - श्रुत पंचमी	२६	१३९-४२
१०.	जयति ज्योति पर्व	२७	२२६-३२
११.	प्रथम इतिहास पुरुष	२८	५-१३
१२.	वीर शासन जयन्ति	२९	१३६-४०
१३.	शिथिलोन्मुख दिगम्बर साध्वाचार पर एक तीखा प्रहार	३०	२२६-३२
१४.	मन्दिरों में चोरियां	३१	११-१५
१५.	कलिकाल तीर्थंकर	३२	१०१-०५, १०९
१६.	जैन समाज को अल्पसंख्यक की मान्यता	३३	२१२-२०, २५७-५९
१७.	तीर्थक्षेत्रों पर भट्टारक पीठों की स्थापना की वकालत	३४	१५-२६
१८.	प्रधानमंत्री जी द्वारा समवशरण-रथ का प्रवर्तन	३५	१०८-१३
१९.	तीर्थक्षेत्रों का विकास	३६	२५८-६४, २९२-९८
२०.	पदवियों की मर्यादा का भी ध्यान रखें	३७	१२-१७
२१.	न भूतो न भविष्यति : तीस-चौबीसी मन्दिर का प्रतिष्ठा महोत्सव	३८	१३९-४२, १७५-७८
२२.	बालाचार्य जी की विचित्र आध्यात्मिक यात्रा से उभरे कुछ प्रश्न	३९	२३६-४३
२३.	भट्टारक छुल्लक भी नहीं	४०	१३-१९
२४.	समन्वय समिति के महत्वपूर्ण निर्णय	४१	१२४-२९
२५.	बदरीनाथ धाम में जैन मन्दिर में भ. ऋषभदेव-मूर्ति स्थापना का विरोध	४२	२४२-२४५

(आ) अन्य लेख-आदि :

१.	णमोकार महामंत्र की ऐतिहासिकता पर एक दृष्टि	८	१७-२१
२.	चम्पा के राजा श्रीपाल		२२
३.	यह कैसी पत्रकारिता	९	४-०८
४.	महाराष्ट्र के जैन कासार		८-११
५.	भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य और उनका समय	१०	८-१८
६.	श्राद्धपर्व दीपावली		६०-६१
७.	अग्रवाल जाति और जैन धर्म	११	२०-२७
८.	णमो लोए सव्व साहूणं	१२	४४-४६
९.	वीर शासन जयन्ति		४६-४७
१०.	आधुनिक युग के आद्य शिक्षाविद् राजा शिव प्रसाद (जैन) सितारे हिन्द	१३	३५-३७
११.	राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द	१४	२३-३०
१२.	अंग्रेजी जैन गजट		४०
१३.	८६ वर्ष पूर्व अंग्रेजी जैन गज़ट	१५	४५-४६
१४.	पहला विवाह क्या विधवा विवाह ही नहीं था?	१६-१७	४६-४७
१५.	क्या Kalanos (कल्याणमुनि?) दिगम्बर जैन मुनि थे?		४८-५३, ५५
१६.	जैन पत्रकारिता पर कुछ प्रश्न चिन्ह		१०५-०८
१७.	देवगढ़ जीर्णोद्धार		११९-२०
१८.	एक ऐतिहासिक दस्तावेज़	१८	९-१६
१९.	समयसार शुद्धि प्रकरण	२०	२५-२६
२०.	श्री बाहुबलि महामस्तकाभिषेक विमर्श	२१	१६-१९,२३
२१.	श्री अयोध्या जी तीर्थक्षेत्र का विकास		२६-३०
२२.	और अब सिंहरथ भी		३०-३१
२३.	सन् १९२० के दशक की एक लघु तीर्थयात्रा : एक संस्मरण	२२	५६-५९
२४.	उमास्वामी श्रावकाचार - एक अध्ययन	२४	५३-५७
२५.	कासी-कोसल के नौ-मल्ल नौ-लिच्छवि राजा	२७	२५६-५७
२६.	भगवान महावीर का अन्तिम धर्मोपदेश और उनका धर्म परिवार		२५८-५९
२७.	तीर्थंकर गर्भावतरण पर रत्नवृष्टि	२८	६४-६५
२८.	छप्पन कुमारी देवांगनाएं		६५
२९.	सुमेरू पर्वत पर जन्माभिषेक		६५-६७
३०.	कुछ रोचक प्रश्न एवं समाधान		६७-६९
३१.	मध्य लोक	३०	२६४-६६

३२.	निर्वाण काण्ड और उसके रचनाकार		२६६-७०
३३.	सोनागिरि		२७०-७१
३४.	तीर्थंकरों की आयु, नाम		२७२-७५
३५.	केशलोंच		२७५-७६
३६.	भक्तामर स्तोत्र की एक सचित्र प्रति	३१	४३-४५
३७.	चक्रवर्ती भरत	३२	१२७-३१
३८.	स्वर्ग-नरक चिन्तन	३४	६२-६३
३९.	संस्मरण-श्रद्धांजलि (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	३५	१२४-२६
४०.	पिच्छि की मर्यादा		१६०-६१
४१.	भगवान ऋषभदेव की निर्वाण भूमि	३६	२६२-६८
४२.	निगंठ नातपुत्त	३७	७१-७४
४३.	चर्चा : भगवान ऋषभदेव की निर्वाण भूमि		७५-८१
४४.	विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन	३६	२७२-७६
४५.	भट्टारक - तब और अब		२७७-७६
४६.	समाज-चिन्तन : परिषद का हीरक जयन्ति अधिवेशन	४०	४४-४७
(इ)	**तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र. :**		
१.	परिचय एवं प्रकाशन	१	कवर ३-४
२.	अधिवेशन दि. ६.२.१९८७	३	३५-३६
३.	महावीर निर्वाण जयन्ति दि. १०.११.१९८८	८	४०-४२
४.	समिति की मुख्य प्रवृत्तियाँ	१४	७१-७२
५.	प्रगति प्रतिवेदन १९८७-९१	१५	८१-८७
६.	प्रगति प्रतिवेदन १९९१-९२	१८	८३-८५
७.	साधारण सभा दि. ६.१२.१९९२ की कार्यवाही	१९	८९-९०
८.	वीर शासन जयन्ति दि. ५.७.१९९३	२०	८२-८४
९.	कार्यकलाप १९९३-९४	२२	९६
१०.	सदस्यता शुल्क सम्बन्धी आवश्यक सूचना	२३	६९
११.	शोध पुस्तकालय	२४	६६
१२.	प्रगति प्रतिवेदन १९९२-९५	२५	८१-८४, ८६-८७
१३.	प्रगति प्रतिवेदन १९९५-९६	२६	९३-९७
१४.	प्रगति प्रतिवेदन १९९६-९७	३२	१४५-५०
१५.	प्रगति प्रतिवेदन १९९७-९८	३५	१८१-८४
१६.	प्रगति प्रतिवेदन १९९८-९९	३६	२८५-८९
१७.	प्रगति प्रतिवेदन १९९९-२०००	४२	३०१-०४

(ई) समाचार विमर्श :

१.	ज्ञान मन्दिर का उद्घाटन	२०	६
२.	तीन-चौबीसी मन्दिर का शिलान्यास		१०
३.	श्री दिगम्बर जैन त्रिमूर्ति मन्दिर पंचकल्याणक		१०-११
४.	आचार्य सुशील कुमार द्वारा मुखपत्ति के त्याग की घोषणा		११-१२
५.	युग प्रधान दानवीर		१२-१३
६.	प्रतिमा लेख मिटाने का कुकृत्य		१३
७.	अलकबीर		१४-१५
८.	कर्नाटक के मुख्यमंत्री/सरकार व आचार्य विद्यानन्द		१६
६.	फरिश्तों के उतरने का स्थान		१६-२२
१०.	धूम महा-महोत्सवों की	२२	८४-८६
११.	नेपाल में दो तीर्थंकरों के जन्मकल्याणक तीर्थ की स्थापना		८६-६०
१२.	सल्लेखना भंग कराई गई		६०-६१
१३.	तीस-चौबीसी मन्दिर का शिलान्यास		६१-६२
१४.	जब मुनियों ने सामूहिक अनशन किया		६२-६३
१५.	आचार्य पद त्याग		६३
१६.	दान महोत्सव	२३	५३-५४
१७.	ब्रह्मोत्सव सम्पन्न		५४-५५
१८.	सिंहरथ प्रवर्तन - एक नाटक		५५
१६.	जैन विश्वविद्यालय का शिलान्यास		५६
२०.	राजर्षि		५६-५७
२१.	भगवान महावीर का जीवन्त अभिनय - आचार्य श्री ने भी अभिनय किया		५७-५८
२२.	'जैन प्रकाश' का आवरण चित्र		५८-५६
२३.	आचार्य श्री शान्तिसागर महाराज की स्वर्ण पादुका		५६-६०
२४.	क्या मिलता है जैन धर्म का उपहास कराने में		६०-६२
२५.	श्री सम्मेदशिखर विवाद : दो आचार्यों के मध्य सौहार्द वार्ता	२४	६७-६८
२६.	करोड़पति दम्पति की वैराग्य साधना		६८
२७.	मुनि कुमुदनंदि महाराज का आचार्य पद अलंकरण		६८-६६
२८.	जैन विश्वविद्यालय की प्रगति		६६
२६.	और अब आचार्य कल्याणसागर महाराज की चरणपादुका		६६
३०.	सदाचार भारती का भ्रष्टाचार प्रकोष्ठ	२५	६५
३१.	उपवास तपस्या का कीर्तिमान स्थापित		६५

३२.	एक और राष्ट्रसंत हुए		६६
३३.	साहित्य सम्राट बने		६६
३४.	जैन एकता		६७
३५.	भगवान महावीर फाउन्डेशन		६७
३६.	आचार्य श्री का मोक्ष गमन		६७-७०
३७.	गिरनार जी में लाडू मेले		७०-७२
३८.	अभिनव श्रमणाचार		७२-७५
३९.	शास्त्री परिषद का अधिवेशन	२६	१९०-९२
४०.	स्थानकवासी समाज के अनुकरणीय निर्णय		१९२-९३
४१.	मंहगे चातुर्मास		१९४-९५
४२.	श्री मानतुंगाचार्य की चरणपादुका		१९५
४३.	नवोदित भाग्योदय तीर्थ, अमरकंटक	२७·	२७३-७४
४४.	पंचम, षष्टम और अब तृतीय पट्टाचार्य भी		२७४
४५.	परमागम मन्दिर निर्माण योजना		२७५-७६
४६.	श्री चैत्यालय जी की स्थापना		२७६
४७.	विद्वत् परिषद के प्रस्ताव		२७६-७८
४८.	चमत्कार को नमस्कार	२८	१०७-०९
४९.	क्या मिल रहा है कटुता बढ़ाने में		११०-१४
५०.	त्रय गजरथ सहित पंच कल्याणक तथा गुरुमन्दिर स्थापना		११४-१५
५१.	त्रिमूर्ति स्थापना		११५-१६
५२.	दीक्षायें		११६
५३.	सम्मेदशिखर पर निर्माण कार्य	२९	१९२
५४.	मांगीतुंगी पर पंचकल्याणक व आचार्य श्री की अवमानना		१९२-९४
५५.	नवोदित तीर्थक्षेत्र		१९४-९७
५६.	श्रमणाचार के बदलते आयाम - यत्र-तत्र-सर्वत्र		१९७-२०२
५७.	आचार्य द्वय के जन्म जयन्ति समारोह	३०	३०५-०७
५८.	तीर्थक्षेत्रों के नाम से भारी धोखा-धड़ी		३०७-१०
५९.	शौरसेनी प्राकृत गोष्ठी		३१०-१४
६०.	अतिशय क्षेत्र केशवराय पाटन में भूगर्भ विस्तारीकरण		३१४-१५
६१.	श्री सम्मेद शिखर जी		३१५-१७
६२.	कुन्दकुन्द अंग्रेजी भाषा के समर्थक थे - मुनि श्री की अभूतपूर्व खोज		३१७-१८

६३.	आचार्य श्री का निर्वाण महोत्सव	३१	७२-७४
६४.	अनशन तप का नया कीर्तिमान		७५
६५.	मुस्लिम बालिका द्वारा अठाई तप		७५-७६
६६.	गोशाला शिलान्यास		७६
६७.	वीर सेना का गठन		७६-७७
६८.	ॐ ह्रीं ज्ञानमत्यै नमः	३२	१६६-७५
६९.	आचार्य सन्मतिसागर प्रकरण - जस का तस ,		१७५
७०.	भट्टारक जी द्वारा वाहन प्रयोग का त्याग		१७५-७८
७१.	एक नई भट्टारक पीठ की स्थापना		१७८-७९
७२.	पावापुरी में प्राचीन चरण चले गये?		१७९-८३
७३.	महासभा प्रबन्धकारिणी की बैठक		१८३-८६
७४.	आशा की एक किरण (आ. श्री धर्मभूषण)	३३	२७६-८१
७५.	भट्टारक जी के वाहन-त्याग की पृष्ठभूमि	३४	८३-८४
७६.	बलात्कार के आरोपी दिवंगत मुनि निर्दोष सिद्ध		८४-८६
७७.	दिगम्बर जैन समाज के शीर्ष नेताओं की बैठक	३५	२०८-१०
७८.	शास्त्री परिषद का वार्षिक अधिवेशन		२१०-१६
७९.	तीर्थ संरक्षिणी महासभा का गठन		२१६-१९
८०.	गोलाकोट मूर्ति तस्करी काण्ड		२१९-२३
८१.	और दो तीर्थों का उदय	३६	३१०-१३
८२.	जम्बूद्वीप, तीस-चौबीसी, और अब त्रिलोक मन्दिर निर्माण की महायोजना		३१३-१४
८३.	गोलाकोट क्षेत्र - कटे सिरों की बरामदगी		३१४-१५
८४.	नवोदित तीर्थ - योगीन्द्र गिरि	३७	६६-६७
८५.	बिच्छु और विद्वान		९७-९९
८६.	सेलोफोन से बात करते मुनि श्री		९९-१००
८७.	विद्वत् परिषद के चुनाव और विभाजन		१०१-०४
८८.	शास्त्रि परिषद - हीरक जयन्ति व वार्षिक अधिवेशन	३८	१९४-९७
८९.	कामदेव मन्दिर		१९७-२००
९०.	विमल समाधि मन्दिर - साधु मन्दिर		२००-०२
९१.	बालाचार्य का वर्षायोग	३९	३०२-०३
९२.	पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें - सादगी से		३०३
९३.	आर्यिका-द्वय की मनोव्यथा	४०	७६-७८

९४.	हैप्पी बर्थ-डे टू यू		७८-८०
९५.	२१वीं सदी का प्रारम्भ कब से		८०-८१
९६.	दवाइयों पर शाकाहारी या मांसाहारी लिखा जाना जरूरी बना		८१-८२
९७.	वैष्णवीकरण के बढ़ते चरण		८२-८३
९८.	दानपर्व अक्षयतृतीया का जीवन्त अभिनय	४१	१९९-२०२
९९.	जिनवाणी वेदी प्रतिष्ठा		२०२-०३
१००.	जैन महातीर्थ पालीताना में मांस बिक्री		२०३-०४
१०१.	मोरों की हत्या		२०४-०५
१०२.	शिखर जी में पानी-बिजली व्यवस्था फिर चरमराई	४२	३२१
१०३.	श्री सम्मेदशिखर जी में जैन हास्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर		३२२
१०४.	'वीर' और अब 'अति वीर' भी		३२२
१०५.	पाठ्य पुस्तक से आपत्तिजनक अंश हटाये जाने की घोषणा		३२३
१०६.	जैन संत 'पामिस्ट ऑफ दि मिलेनियम' अवार्ड से सम्मानित		३२३
१०७.	२१वीं सदी का पुरुषमेघ सोत्रामणी महायज्ञ		३२४
१०८.	चन्द्रमा पर इंसान के पैर अभी पड़े ही नहीं - अमरीकी दावा झूठा		३२५
१०९.	भाषा समिति का विचित्र पालन		३२६
११०.	जैन मन्दिर बनाम मैरिज हाउस		३२६
१११.	नन्दीश्वर भगवान का महामस्तकाभिषेक		३२७
(उ)	**समीक्षा :**		
१.	आचार्य समीक्षा (मुनि श्री सरल सागर)	३३	२६७-७०
२.	जैन डायरी - अ.भा. जैन तीर्थ दर्शन (श्री विमल चन्द जैन, १९९८)	३५	१६३-६४
३.	प्रतिष्ठा-रत्नाकर (पं. गुलाब चन्द्र जैन 'पुष्प')		१६४-६७
४.	महाराष्ट्र का जैन समाज (श्री महावीर सांगलीकर)	३६	३१७-१९

(ऊ) **साहित्य परिचय/समीक्षा :** १८८ पुस्तकें, ११ पत्रिकायें :

८ (२२), ९ (४७-४९), १० (६५-७१), ११ (३८-४१), १२ (६१-६५), १३ (५१-५३), १४ (४९-५५), १५ (६६-७०), १८ (७७-७९), १९ (९१-९३), २० (८६-८७), २१ (७६-७८), २२ (७४-७६), २३ (५२), २४ (६५-६६), २५ (५४-५६), २७ (२६५-६७), २८ (९८-१०१); २९ (१७५-८४), ३० (२८५-९३), ३१ (४९-५८), ३४ (७९-८०), ३५ (१६७-६९), ३६ (३१६-१७), ३७ (८४), ३८ (१८७-८८), ३९ (२८८-९०), ४० (५७-६२), ४१ (१७५-७७), ४२ (३०५-३०८)

(कोष्ठक में पृष्ठ सं. है)

३. श्री रमा कान्त जैन, सह-सम्पादक

(अ)	लेख शीर्षक	अंक	पृष्ठ
१.	वड्डकहा	१	१३-१६
२.	कोण्डकुन्दे और आचार्य कुन्दकुन्द	२	१७-२१
३.	जैन कवियों की होली	४	२१-२३
४.	बीसवीं शताब्दी पूर्व के मराठी जैन लेखक	{ ५	१२-२०,
		६	१५-१६
५.	जनगणना और जैन - १९९१ की जनगणनां	१२	४८-५१
६.	अनेकान्तवाद - व्यावहारिक जीवन में	२४	१२-२१
७.	भारत में जैन धर्मावलम्बी	२७	२५०-५३
८.	चर्चा-समाधान	२९	१६३-६६
९.	भारत के इतिहास के पुनर्निर्माण में जैन सामग्री के उपयोग की आवश्यकता	३३	२४६-५०
(आ)	पद्य रचनायें :		
१.	काव्य सुमन (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति)	७	१२
२.	ज्ञान की ज्योति जो जलाते रहे	२८	९१
३.	क्षणिका - सन्मतिसागर प्रकरण पर	३२	१७५
४.	श्री महावीर जी सहस्राब्दि	३३	२८२
५.	भवसागर पार लगेगा कैसे?	३४	७३
६.	वन्दना के इन स्वरों में एक स्वर मेरा मिला लो		७६
७.	वाणी वन्दना	३५	१४४
८.	सामयिक परिदृश्य : क्षणिकायें	४२	२९५
(इ)	गुरुगुण-कीर्तन :		
१.	अकलंक-माणिक्यनन्दि-प्रभाचन्द्र	७	१
२.	श्री पद्मनन्दि-श्री सकलकीर्ति	८	१
३.	श्री सिद्धसेन	९	१-०३
४.	कुन्दकुन्द	१०	१-०३
५.	उमास्वाति	११	१-०२
६.	समन्तभद्र	१२	१-०३
७.	शिवकोटि	१३	१-०४
८.	कवि परमेश्वर	१४	१-०४
९.	महाकवि वीरनन्दि	१५	१-०४
१०.	पात्रकेसरि	१६-१७	१-०३
११.	गुणनन्दि	१८	१, ५

१२.	वीरसेन	१६	१-०२
१३.	स्वयम्भू	२०	१-०३
१४.	वादिराज	२१	१-०४
१५.	जटासिंहनन्दि	२२	१-०४
१६.	महाकवि धनञ्जय	२३	१-०४
१७.	आचार्य रविषेण	२४	१-०२
१८.	आचार्य अमृतचन्द्रसूरि	२५	१-०४
१९.	देवनन्दि पूज्यपाद	२६	१३३-३४
२०.	आदिपुराणकार जिनसेन	२७	२१६-२१
२१.	हरिवंशपुराणकार जिनसेन सूरि	२८	१-०५
२२.	नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती	२९	१३३-३५
२३.	अमितगति	३०	२१६-२२
२४.	सोमदेव सूरि	३१	५-०७, १०
२५.	वादीभ सिंह	३२	६३-६७
२६.	भट्टारक सकलकीर्ति	३३	२०५-०७
२७.	मल्लिषेण	३४	५-०६
२८.	भट्ट अकलंकदेव	३५	१०३-०७,११३
२९.	माणिक्यनन्दि	३६	२४६-५१
३०.	प्रभाचन्द्र	३७	५-०८, ३२-३४
३१.	गुणधर	३८	१३१-३४
३२.	विमलार्य	३९	२२७-३०, २५७-५८
३३.	हेमचन्द्र सूरि	४०	५-०८, १६
३४.	विद्यानन्द	४१	११३-१६, १६२-६३
३५.	महाकवि पुष्पदन्त	४२	२३१-३७

(ई) इतिहास-मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन : रिपोर्ट :

१.	अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा सम्मान (१४.१२.१९८६)	३	३३-३४
२.	अमृतोत्सव (६.२.१९८७)		३५
३.	महाप्रयाण पर श्रद्धासुमन	७	१६-४०
४.	पुण्यतिथि (११.६.१९९०)	१२	६०
५.	पुण्य स्मरण (६.२/११.६.१९९१)	१४	५८-५९
६.	८० वीं जन्म जयन्ती एवं चतुर्थ पुण्यतिथि (१९९२)	१६-१७	८०-८२, ८४
७.	८१ वीं जन्म जयन्ती (६.२.१९९३)	१९	८४-८५

८.	५ वीं पुण्यतिथि (११.६.१९९३)	२०	८५-८६
९.	८२ वीं जन्म जयन्ती (६-२-१९९४)	२२	९४-९६
१०.	छठी पुण्यतिथि (११.६.१९९४)	२३	४८
११.	८३ वीं जन्म जयन्ति (६.२.१९९५)	२५	७७
१२.	७ वीं पुण्यतिथि (११.६.१९९५)	२६	१७५-७६
१३.	स्मृति दिवस (११.६.१९९६)	२९	१७३-७४
१४.	जन्म जयन्ति (६.२.१९९७)	३१	४६-४८
१५.	८ वीं पुण्यतिथि व काव्य गोष्ठी	३२	१५०-५२
१६.	जन्म जयन्ति (६.२.१९९८)	३४	७५-७६
१७.	१२ वीं पुण्यतिथि (११.६.२०००)	४१	१६४-६५

(उ) अन्य रिपोर्ट :

१.	वीर शासन जयन्ती (३०.७.१९८८)	७	४४
२.	महावीर निर्वाण जयन्ति (१०.११.१९८८)	८	४०-४२
३.	जैन पत्र-पत्रिकाएं	१०	७१-७३
४.	जैन पत्र-पत्रिकाएं : कहां क्या?	१४	६५-६७
५.	जैन पत्र-पत्रिकाएं	१६-१७	१०२-०५
६.	जैन धर्म, दर्शन और संस्कृति पर अंग्रेजी में प्रकाशित पुस्तकें		१०१-०२
७.	डॉ. शशि कान्त की षष्ठिपूर्ति (१२.२.१९९२)		८३-८४
८.	दूरदर्शन और आकाशवाणी, लखनऊ (मार्च-अप्रैल १९९२)		८५-८६
९.	श्री अजित प्रसाद जैन का अमृत महोत्सव (१.१.१९९३)	१९	८२-८३
१०.	श्री अजित प्रसाद जैन का अभिनन्दन (६.२.१९९८)	३४	७५-७६
११.	श्री अजित प्रसाद जैन का अभिनन्दन (२.१.२०००)	४०	५२-५३

(ऊ) विविध स्तम्भ :

१. **श्री महावीर वचनामृत :**
९ (३), १० (४-५), ११ (२,१२), १२ (३), १३ (४), १४ (४), १५ (५), १६-१७ (४), २१ (४), २८ (१३), २९ (१४०), ३० (२२२), ३६ (२५१-५२)

२. **सुभाषित :** ३५ (१३१)

३. **आइये इन्हें भी स्मरण कर लें :** ९ (५३-५४), १० (६२-६३)

४. **समाचार विविधा :**
९ (५४-५७), १० (७७-८२), ११ (४५-४९), १२ (६७-७०), १३ (५६-५९), १४ (५९-६४), १५ (६२-६५), १६-१७ (८६-९०, १११-१३), १८ (८६-८७), १९ (९७-१०१), २० (१००-०२), २१ (८५-९०), २२ (९६-९७), २३ (६४-६७), २४ (७१-७२), २५ (७७-८०), २६ (१९७-९९), २७ (२८०-८४), २८ (११९-२५), २९ (२०४-०९), ३० (३२१-२६), ३१ (७९-८०), ३२ (१९०-९२), ३३ (२८६-९०),

३४ (८८-६०), ३५ (२२५-३२), ३६ (३३४-३६), ३७ (१०८-१४), ३८ (२०५-०८), ३६ (३१०-१८), ४० (८६-६४), ४१ (२०८-१४), ४२ (३३०-३२)

५. **अभिनन्दन - शोध की सफलता आदि :**

६ (५०-५३), १० (७५-७६), ११ (४१-४४), १२ (५६, ६१,६६-६७), १३ (५४-५६), १४ (६७-६६), १५ (८८-६२), १६-१७ (१०८-१०), १८ (८७-८६), १६ (८८), २० (६६-१००), २१ (८४-८५), २२ (६७-६८), २३ (६३-६४), २४ (७०), २५ (७६), २६ (१६६-६७), २७ (२७६-८०), २८ (११७-१६), २६ (२०३-०४), ३० (३१६-२१), ३१ (७७-७८), ३२ (१८७-८६), ३३ (२८४-८५), ३४ (८७), ३५ (२२४-२५), ३६ (३३१-३४), ३७ (१०५-०८), ३८ (२०३-०५), ३६ (३०७-१०), ४० (८४-८६), ४१ (२०५-०८), ४२ (३२८-२६)

६. **शोक संवेदन :**

८ (३६), ६ (५८), १० (८३-८४), ११ (४७-४८), १२ (७०-७१), १३ (६०), १४ (६६-७१), १५ (६५-६७), १६-१७ (११४-१६), १८ (८६), १६ (१०१-०२), २० (१०३), २१ (६०-६१), २२ (६८), २३ (६७-६८), २४ (७२-७४), २५ (८०), २६ (१६६), २७ (२८५-८६), २८ (१२५-२६), ३० (३२६-२७), ३१ (८१), ३२ (१६२-६५), ३३ (२६०), ३४ (६०-६१), ३५ (२३३), ३६ (३४०), ३७ (११४-१५), ३८ (२०६), ३६ (३१८-२०), ४० (६४-६५), ४१ (२१४-१५), ४२ (३३३)

७. **आभार :**

१६-१७ (११६), १८ (८२), १६ (१०१), २० (१०२), २१ (८६-६०), २६ (१६६), २७ (२८४), २८ (१२७), २६ (२०६), ३० (३२७), ३१ (८२), ३२ (१६५), ३३ (२६१), ३५ (२३४), ३६ (३४१), ३७ (११५-१६), ३८ (२१०), ३६ (३२०), ४० (६५), ४१ (२१५)

(ए) **समीक्षा :**

१. वन्दना (पुष्पेन्दु)	२७	२१६-२१
२. नवप्रभात : सर्वतोभद्र इष्टसिद्धि छत्तीसी (विवित्सु अजित सौंरई)	३६	३१६-२०

(ऐ) **साहित्य परिचय/समीक्षा :** १३८ पुस्तकें, १२ पत्रिकायें :

८ (३०-३८), १५ (७०-७५), १६-१७ (६१), २३ (५०-५२), २४ (६२-६५), २५ (५६-६१), २६ (१८२-८५), २६ (१८४), ३० (२६४-६८), ३१ (५८-६३), ३२ (१५६-६२), ३३ (२७०-७३), ३४ (८०-८२), ३५ (१६६-७५), ३६ (३२०-२४), ३७ (८४-६१), ३८ (१८८-८६), ३६ (२६१-६४), ४० (६२-६६), ४१ (१७७-८५), ४२ (३०८-१२)

(ऊ और ऐ में कोष्ठक में पृष्ठ सं. है)

४. डॉ. शशि कान्त, सम्पादक

(अ)	लेख	अंक	पृष्ठ
१.	भारत में लिपि की प्राचीनता	१	२०-२३
२.	गुप्त साम्राज्य के जैन अभिलेख	२	२४-२७
३.	इतिहास के प्रति दृष्टि	४	१०-१५
४.	जीव और जगत के सम्बन्ध में विचारणा	६	४०-४६
५.	धर्म : आडम्बर और यथार्थ	१०	४८-५३
६.	वर्द्धमान महावीर	११	३-१२
७.	संस्कृति का स्वरूप	१२	१४-१७
८.	२१ वीं सदी में जैन धर्म की भूमिका	१३	३७-३६
९.	The Jaina Gazette		४६-५१
१०.	जिन शासन और सामाजिक न्याय	१४	३८-३६
११.	Environment and Religion	१५	६१-६६
१२.	मानव सभ्यता के आदि प्रस्तोता - ऋषभदेव	१६-१७	१२-२३
१३.	भगवान महावीर और उनका जीवन दर्शन	१८	४३-४५
१४.	चीन और जापान के राष्ट्रीय चिन्तन पर भारत की बौद्ध विचारधारा का प्रभाव	१६	२३-२८
१५.	डॉ. माइकेल टोबियास की फिल्म		६६-७३
१६.	Non-Violence in Action	२०	७१-७५
१७.	अग्रवाल जाति का उद्भव	२२	६५-६६
१८.	भगवान महावीर और उनकी विश्वमंगल की भावना (वार्ता)	२३	२७-३१
१९.	भगवान महावीर : दार्शनिक चिन्तन को नई दिशा	२५	२०-२१
२०.	The Occult	२७	२६०-६१, २६४
२१.	मानव धर्म : प्रास्ताविक	२८	१४-१६
२२.	श्री सम्मेदशिखर विवाद		६६-७७
२३.	जैनविद्या सम्बन्धी अध्ययन/अनुशीलन	३०	२८२-८५
२४.	चक्रवर्ती भरत का ऐतिह्य	३१	२३-२६,
		३२	१६६
२५.	Jainism (edited text of chap. in *Ancient India*)	३४	२६-४०
२६.	तीर्थंकरों की संख्या आदि		७०-७१
२७.	'हिमवन्त थेरावली' की वास्तविकता	३६	२८६-६१
२८.	समाज दर्शन	३८	१६८-७१
२९.	राष्ट्र की अस्मिता संकट में	३६	२६८-७१
३०.	समय रहते समाज चेते : अहिंसा महाकुम्भ - एक नया तमाशा		३०४-०६

३१.	Prevention of Cruetly to Animals	४०	४८-५०
३२.	Tradition of Co-existence in India	४१	१४४-५१
(आ)	विचार बिन्दु :		
१.	राम जन्मभूमि और बाबरी मस्जिद : नया विभ्रम	८	२३-२५
२.	बाहुबलि की पूजनीयता		२५-२७
३.	भगवान महावीर की प्राकृत	२६	१७०-७३
४.	जैन समाज का यथार्थ-बोध	४२	२७८-८४
(इ)	चिन्तन कण :		
१.	आसक्ति, अनासक्ति और विरक्ति	२४	७९
२.	नास्तिक क्यों	३३	२६०-६५
(ई)	शोध विमर्श :		
१.	कलिंग जिन	४१	१७१-७४
२.	खारवेल का हाथीगुम्फा शिलालेख : कुछ विचारणीय बिन्दु	४२	२८८-९४
(उ)	टिप्पणी :		
१.	जैन सन्देश काव्य	१०	५९
२.	अंग्रेजी जैन गज़ट	१४	४०
३.	तिरुकुरल	१९	६६
४.	स्व. पं. अजित प्रसाद की स्मृति में	२४	५२
५.	जैन धर्म का स्वतंत्र अस्तित्व और अल्पसंख्यक प्रास्थिति	२५	३२-३३
६.	समाज के सामने चुनौती	२६	१३७-३८
७.	द्वादशांग वाचना का सर्वप्राचीन उल्लेख		१६७
८.	हिन्दू	२८	८२
९.	पुण्य क्या है? श्रमण कौन है? उपादेय किम्?	३२	१४०-४४
१०.	सन्मतिसागर प्रकरण		१७५
११.	वृद्धों की समस्या	३३	२०८
१२.	राजा चन्द्रगुप्त और आचार्य भद्रबाहु		२४४-४५
१३.	अल्पसंख्यकवाद		२९९-३०१
१४.	वर्ण व्यवस्था और अस्पृश्यता	३८	१६६-६८
१५.	कर्मबन्ध, जैन धर्म की प्राचीनता, कबीर	३९	२८४
१६.	श्री णमोकार मंत्र	४०	५६
१७.	२१ वीं सदी का प्रारंभ	४१	१५४-५५
१८.	जैन परम्परा में शिव	४२	२५७-५८
१९.	रामकथा और विमल सूरि		२६३-६४

२०.	पउमचरियं, तत्त्वार्थसूत्र और तिलोयपण्णत्ति		२८५
(ऊ)	**पद्य रचनायें :**		
१.	क्या खोया, क्या पाया	१६-१७	८३-८४
२.	साठ बसन्त देख लिये तुमने	२८	६२
३.	बहो, बहो, बहते चलो	३०	२६८
४.	शाश्वत राग	३५	१४४
५.	मैं कगार पर खड़ा	३८	१७४
६.	क्रान्ति की स्वर लहरी	३६	२६६
७.	जनमन का आक्रोश		२७०
८.	बीस सूत्री कार्यक्रम		२७१
(ए)	**रिपोर्ट :**		
१.	उत्तर प्रदेश जैनविद्या शोध संस्थान	१६-१७	७६-७६
२.	प्राकृत एवं जैनविद्या की शोध में लखनऊ विश्वविद्यालय का अवदान	१६	८६-८७
३.	श्रुतपंचमी पर्व पर संगोष्ठी (३.६.१६६५)	२६	१४३-४६
४.	तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति - नव निर्वाचित प्रबन्ध समिति (२.१.२०००)	४०	५१
(ऐ)	**परिचय :**		
१.	डॉ. अरविन्द कुमार जैन, राज्य मंत्री, उ. प्र. सरकार	३४	७७-७८
२.	श्री अजित प्रसाद जैन, लखनऊ	३५	१८६
३.	डॉ. अमर पाल सिंह, लखनऊ		१८६-६०
४.	श्री अमृत लाल नागर		१६०-६१
५.	श्री कैलाश भूषण जिन्दल, लखनऊ		१६१
६.	श्री खुशाल चन्द्र गोरावाला, वाराणसी		१६१-६२
७.	श्री गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी, लखनऊ		१६२
८.	श्री जगजोत सिंह जैन, लखनऊ		१६२-६३
६.	श्री जौहरीमल जैन, लखनऊ		१६३
१०.	डॉ. दरबारी लाल कोठिया, बीना		१६३-१६४
११.	डॉ. नन्द किशोर देवराज, लखनऊ		१६४
१२.	श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी		१६४-६५
१३.	श्री परिपूर्णानन्द वर्मा		१६५
१४.	श्री प्रेम बिहारी, लखनऊ		१६६
१५.	इतिहास-मनीषी डॉ. बहादुर चन्द्र छाबड़ा, बंगलौर		१६६-६७

१६.	श्री महेश्वर पाण्डेय, लखनऊ		१६७
१७.	श्री लक्ष्मी चन्द्र जैन, नई दिल्ली		१६७-६८
१८.	सौ. लीलावती जैन, जलगांव		१६८
१६.	श्रीमती वासंती शहा, पुणे		१६८-६६
२०.	श्री वीर नन्दन जिन्दल, लखनऊ		१६६-२००
२१.	श्री शरत कुमार कौशिक, लखनऊ		२००
२२.	श्री शांतिलाल के. शहा, सांगली		२००-०१
२३.	श्री श्रवण कुमार श्रीवास्तव		२०१
२४.	श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी		२०१-०२
२५.	श्री सत्यन्धर कुमार सेठी		२०२-०३
२६.	श्री सी. एम. अडवानी, लखनऊ		२०३
२७.	श्री सी. के. नागराजा राव		२०३-०४
२८.	डॉ. सैयद इर्तिज़ा हुसैन, अलीगढ़		२०४
२६.	डॉ. हर्बर्ट वी. गुन्थर, सास्केछ्वान (कनाडा)		२०४-०५
३०.	श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, लखनऊ		२०५
३१.	श्री ज्ञान चन्द्र द्विवेदी		२०५-०६
३२.	श्री ज्ञानचन्द जैन, लखनऊ		२०६-०७
३३.	श्री राजीव कान्त जैन, राजकोट	४२	२६६
(ओ)	**सम्पादकीय :**		
१.	निवेदन	७	२-०३
२.	मील का पत्थर	१०	८७
३.	सम्पादकीय	१२	४-०५
४.	सम्पादकीय	१६-१७	५-०६
५.	पुनरावलोकन	२५	६७-१००
६.	आत्म निवेदन	३०	२८०-८२
७.	अलविदा!	४२	३३६-४०
(औ)	**समीक्षा :**		
१.	सम्मिश्र संस्कृति और सर्वधर्म-समता के प्रवाद (डॉ. हर्ष नारायण)	१०	६४-६५
२.	प्राकृत एवं जैन विद्या शोध-सन्दर्भ (डॉ. कपूर चन्द जैन)	१५	७५-७८
३.	The Illustrated Manuscript of Jaina Ramayana (मुनि केशराज)		७८-८१
४.	यापनीय और उनका साहित्य (डॉ. कुसुम पटोरिया)	२०	८७-८८

५.	जैन श्रमण : स्वरूप और समीक्षा (डॉ. योगेश चन्द्र जैन)	२६	१८७-८८
६.	हिन्दी भारती के कुछ जैन साहित्यकार (श्री रमा कान्त जैन)	२८	१०२-०४
७.	Jain Journal ,xxix, (July 1994)		१०४-०५
८.	जैन न्याय की भूमिका (डॉ. दरबारी लाल कोठिया)		१०५-०७
९.	अपभ्रंश का जैन रहस्यवादी काव्य और कबीर (डॉ. सूरजमुखी जैन)	२९	१८८-९०
१०.	India as known to Haribhadra Suri (डॉ. राम सजीवन शुक्ल)		१९०-९१
११.	जिनवाणी, सम्यग्दर्शन विशेषांक (अग-१९९६)	३०	२९९-३००
१२.	History of Jainism in Bihar (डॉ. विनोद कुमार तिवारी)	३४	८२-८३
१३.	पयाम-ए-रहबर (श्री जितेन्द्र मोहन सिन्हा)	३६	२९८-९९
१४.	Jinamanjari, XX, 2 (Oct. 1999)		३००
१५.	Jainism : A Pictorial Guide to the Religion of Non-Violence (Herr Kurt Titze)		३००-०१
१६.	प्राचीन भारतीय देव मूर्तियां (डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव)	४०	६६-६७
१७.	जैन विद्या, १९९८		६९-७०
१८.	Dr.A.N. Upadhye : His life and Accomplishments (डॉ. बी. के. खड़बड़ी)	४१	१८५-८६
१९.	Nandyavarta : An Auspicious symbol (डॉ.ए. एल. श्रीवास्तव)		१८७-८८
२०.	प्राकृत और जैन धर्म का अध्ययन (डॉ. प्रेम सुमन जैन)		१९४-९६
२१.	मांस-भक्षण-परिवर्त : लंकावतार सूत्र (डॉ. विजय कुमार जैन - डॉ. राका जैन)	४२	३१७
२२.	भारतीय कला-प्रतीक (डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव)		३१७

(अं) **साहित्य परिचय/समीक्षा :** ११५ पुस्तक, ८८ पत्रिका :
१३ (५३-५४), १४ (५५-५७), १५ (७५-८१), १६-१७ (९१-१००), १८ (८०-८१), १९ (९३-९७), २० (८८-९९), २१ (८१-८३), २२(७६-८३), २३ (४९-५०), २५ (६१-६४), २६ (१८५-८६, १८८-८९), २७ (२७०-७२), २९ (१८७-८८, १९०), ३० (३००-०४), ३१ (६३-७१), ३२ (१६२-६६),३३ (२७३-७६), ३५ (१७५-८०), ३६ (३२४-३०), ३७ (९१-९५), ३८ (१८९-९२), ३९ (२९४-९८, ३००), ४० (६७-७५), ४१ (१८६-९८), ४२ (३१४-१६, ३१८-२०)

(कोष्ठक में पृष्ठ सं. है)

(अः) **अनुक्रमणिका : शोधादर्श १-४२** — ४२ — ३४१-८६

खण्ड-ग : पारखी पाठक

१.	डॉ. अजय कोठारी, चेन्नई	३६ (३५१)
२.	ब्र. अजित विवित्सु, ललितपुर	२६ (२१८)
३.	आचार्य अनन्त प्रसाद जैन, गोरखपुर	२ (२)
४.	डॉ. अनिल कुमार जैन, अंकलेश्वर/अहमदाबाद	४ (३६), १० (८५-८६), २६ (२११), ३४ (६२), ४२ (३३६)
५.	डॉ. अनुपम जैन, सारंगपुर/इन्दौर	२५ (८६)
६.	डॉ. अभय प्रकाश जैन, ग्वालियर	११ (४६), १५ (६७), १६-१७ (१२२), १८ (६१-६२), २२ (१००), २६ (२०८), ३७ (११७), ३६ (३२०)
७.	पं. अमृत लाल शास्त्री, लाडनूं/वाराणसी	१५ (६८), १६ (१०३), २३ (७०), २४ (७७-७८), २५ (८४), २६ (२१४), २७ (२८६), २८ (१२८), ३१ (८३), ३२ (१६८), ३४ (३६), ३५ (२३५), ३६ (३४७)
८.	डॉ. अशोक कुमार कालिया, लखनऊ	२६ (२०२)
९.	डॉ. अशोक सहजानन्द, दिल्ली	४० (६६)
१०.	श्री आदित्य जैन, लखनऊ	२० (१०८), २७ (२८८), ३० (३२६-३०), ३१ (८४), ३२ (१६६)
११.	श्री आनन्द प्रकाश जैन, हास्तिनापुर	३२ (२००), ३६ (३४६), ४१ (२१६)
१२.	डॉ. आर. एस. शर्मा, पटना	४१ (२१६)
१३.	डॉ. आर. सी. गुप्ता, मेसरा, रांची/झांसी	१६ (१०२), २६ (२११), २८ (१३०)
१४.	डॉ. (कु.) आराधना जैन 'स्वतंत्र', गंज बासौदा	३६ (३२६)
१५.	श्री इन्द्रजीत जैन, कानपुर	२८ (१२७), ३४ (६४)
१६.	श्री उत्तम चन्द जैन, लखनऊ	२७ (२८७-८८)
१७.	डॉ. ऋषभ चन्द्र जैन 'फौजदार', वैशाली	२६ (२१३), २७ (२८८), ३२ (२०३)
१८.	डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, इलाहाबाद/लखनऊ	२१ (६४-६५), २३ (७३), २६ (२०४), २८ (१२६), २६ (२१४-१५), ३२ (१६६), ३५ (२३६-४०), ३७ (१२३-२४), ४१ (२१७-१८)
१९.	जस्टिम एम. एल. जैन, नई दिल्ली	२२ (१०२), २५ (६०-६२), २८ (१२६-३०), २६ (२१६), ३५ (२४२), ३६ (३३१-३२),

		४० (१०६-०७), ४१ (२२४)
२०.	डॉ. एम. के. राय, छिन्दवाड़ा	२१ (६५)
२१.	डॉ. एम. डी. बसन्तराज, मैसूर	२१ (६५), २५ (६३-६४), ४२ (३३७-३८)
२२.	डॉ. एस. ए. भुवनेन्द्र कुमार, आन्टेरियो, कनाडा	२२ (१०३)
२३.	श्री एस. एन. मित्तल, नई दिल्ली	३ (२)
२४.	डॉ. ओम प्रकाश अग्रवाल जैन, लखनऊ	३१ (८६-८७)
२५.	डॉ. ओम प्रकाश त्रिवेदी, लखनऊ	३७ (१२३-२५), ४१ (२१६)
२६.	डॉ. अंगने लाल, फैजाबाद/लखनऊ	२६ (२१४)
२७.	डॉ. कन्छेदी लाल जैन, शहडौल	३ (२)
२८.	श्री कपिल कुमार जैन, मेरठ	३८ (३१०)
२९.	डॉ. कपूर चन्द जैन, खतौली	१६-१७ (१२०), १८ (६३)
३०.	श्री कमल कुमार जैन, सिरसा	३२ (२०४)
३१.	डॉ. कमल चन्द सोगाणी, उदयपुर/जयपुर	२ (२)
३२.	डॉ. कमलेश कुमार जैन, दिल्ली	३४ (६६)
३३.	श्री किरण कुमार जैन, सारणी	३५ (२४१), ३६ (३४७)
३४.	श्री कुन्दन लाल जैन, शाहदरा, दिल्ली	४ (३६), १३ (६०), १६-१७ (११८-१९), १९ (१०२), २३ (७२), २४ (७८), २६ (२०१), ३५ (२३८), ३९ (३२५)
३५.	डॉ. कुलभूषण लोखंडे, सोलापुर	४२ (३३४)
३६.	प्रो. कृष्ण दत्त बाजपेयी, सागर	१० (८५), १२ (७२)
३७.	डॉ. कृष्ण पाल त्रिपाठी, बलीपुर टाटा, इलाहाबाद	२० (१०४), २३ (७१), २४ (७४-७५), २७ (२८६), ३३ (२६६)
३८.	प्रो. के. डी. मिश्रीकोटकर, चांदूर बाजार	२६ (२०८-०९), ३६ (३५०)
३९.	डॉ. केशव प्रसाद गुप्त, चरवा, इलाहाबाद	२१ (९२-९३), २७ (२८८-८९)
४०.	श्री कैलाश चन्द्र जैन, सलावा, मेरठ	२ (२), १६-१७ (१२१)
४१.	पं. कैलाश चन्द्र जैन 'पंचरत्न', लखनऊ	२२ (१००)
४२.	डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी, कोंच	२७ (२९०), ३१ (८७), ३३ (२९५), ३७ (११७), ३८ (२१२-१३), ४० (९७), ४१ (२२१)
४३.	श्री कैलाश भूषण जिन्दल, लखनऊ	२७ (२९१-९२)
४४.	प्रो. खुशाल चन्द्र गोरावाला, वाराणसी	२० (१०५-०६), २३ (७२)
४५.	डॉ. गिरजा शंकर शर्मा, बीकानेर	१९ (१०४), २८ (१२७)

४६. श्रीमती गीता जैन, मुम्बई	१६ (१०४), ३० (३२८), ३१ (८४), ३६ (३२७-२८)
४७. श्री गुलाब चन्द्र जैन, विदिशा	२६ (२०७), २७ (२८६), २६ (२१५), ३५ (२३६), ३६ (३२७)
४८. श्री गोपीलाल अमर, दिल्ली	३६ (३२४)
४६. श्री चन्द्रकान्त बाली, दिल्ली	३६ (३२४)
५०. भट्टारक चारुकीर्ति पंडिताचार्यवर्य, मूडबिद्री	२६ (२००)
५१. डॉ. चीरंजी लाल बगड़ा, कोलकाता	३६ (३२६)
५२. श्री जमना लाल जैन, सारनाथ, वाराणसी	३ (२), १६-१७ (११८), २१ (६३), २६ (२१४), २७ (२८७), ३० (३२६), ३१ (८४), ३५ (२३७), ३६ (३४४-४५), ३८ (२१८-२०)
५३. ब्र. जय निशान्त, टीकमगढ़	२६ (२१२)
५४. डॉ. जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, नई दिल्ली/वृन्दावन/आगरा	२० (१०५), २६ (२०७), ३२ (१६६), ३७ (१२५), ३८ (२१७), ३६ (३२५-२६), ४० (६८-६६)
५५. श्री जालम सिंह मेड़तवाल, ब्यावर	२ (२), १० (८६)
५६. ब्र. जिनेन्द्र कुमार जैन, जबलपुर	२२ (१०२-०३)
५७. डॉ. (श्रीमती) जैनमती जैन, वैशाली/आरा	२२ (१०३-०४), २६ (२११), २८ (१३२), ३२ (२०१), ४१ (२२२-२३)
५८. श्री ज्ञान चन्द्र खिन्दूका, जयपुर	२१ (६२), ३६ (३२६)
५६. श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, लखनऊ	२६ (२०६)
६०. श्री डाल चन्द जैन, सागर	२६ (२१२), ४० (६७)
६१. श्री तारा चन्द्र जैन अग्रवाल, पचेवर	२६ (२०६)
६२. श्री तारा चन्द्र 'प्रेमी', फिरोजपुर झिरका	२८ (१२८)
६३. श्री तिलोक मुनि, राजकोट	३१ (८५), ३२ (२०४), ३५ (२४१), ३८ (२१२), ४१ (२१८)
६४. डॉ. दरबारी लाल कोठिया, बीना (सागर)	१६ (१०४), २० (१०५), २३ (७०), २६ (२०१), २८ (१३०)
६५. श्री दामोदर जैन, टीकमगढ़	४२ (३३४-३३५)
६६. डॉ. दामोदर शास्त्री, जयपुर	२२ (१००)
६७. श्री दिग्दर्शन चरण जैन, नई दिल्ली	१६-१७ (१२४), २० (१०५), ३३ (२६५)
६८. डॉ. दिनेन्द्र चन्द्र जैन, आरा	२६ (२११), ३१ (८४)

६९.	श्री दुलीचन्द जैन, चेन्नई	४१ (२१७)
७०.	श्री देवेन्द्र कुमार जैन, दिल्ली	४० (९६)
७१.	डॉ. देवेन्द्र हाण्डा, चण्डीगढ़	३६ (३४६)
७२.	पं. धन्य कुमार जैन, सिहोरा (जबलपुर)	३६ (३४६), ४० (१०५-०६), ४१ (२२४)
७३.	डॉ. धर्मचन्द्र जैन, कुरुक्षेत्र	३४ (९२-९३)
७४.	श्री धर्मानन्द, नई दिल्ली	२६ (२०९)
७५.	डॉ. नन्द लाल जैन, रीवां	२६ (२०२)
७६.	श्री नरेन्द्र कुमार जैन, देहरादून	२६ (२०६), २७ (२८७), २९ (२०९-१०), ३२ (१९६)
७७.	प्रा. नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद	२६ (२००)
७८.	श्री नरेश चन्द्र जैन, लखनऊ	२७ (२९०-९१)
७९.	डॉ. नलिन कुमार शास्त्री, बोधगया	२७ (२९०)
८०.	श्री नवनीत जैन, मेरठ	३२ (२०३)
८१.	पं. नाथू लाल जैन शास्त्री, इन्दौर	३६ (३४१-४२)
८२.	डॉ. निजामुद्दीन, बालैनी (मेरठ)	१८ (९०), २० (१०५), २८ (१३२), ४० (९६)
८३.	श्री निर्मल कुमार जैन, I.A.S., लखनऊ	१९ (१०३)
८४.	श्री निर्मल सेनानी, सिरोंज	३५ (२४०)
८५.	डॉ. (कु.) नीना जैन, शिवपुरी	२६ (२१२)
८६.	श्री नीरज जैन, सतना	२९ (२११-१२), ३१ (८५), ३४ (९७)
८७.	डॉ. नीलकण्ठ पुरुषोत्तम जोशी, वाराणसी	९ (५१), १२ (७२), १५ (९८), १८ (९२), १९ (१०४), २१ (९२), २२ (१००), २५ (८८), २६ (२०२), २९ (२११)
८८.	डॉ. (श्रीमती) नीलम जैन, सहारनपुर/मीरपुर	२६ (२०४), २९ (२१६), ३० (३३१), ३१ (८५)
८९.	पं. नेमचन्द डोणगांवकर, देऊलगांवराजा	३७ (१२३)
९०.	डॉ. नेमीचन्द, इन्दौर	३३ (२९१-९२), ३६ (२४३)
९१.	श्री नेमीचन्द जैन, कानपुर	१९ (१०५)
९२.	श्री पद्म कुमार जैन, अजमेर	३५ (२४१)
९३.	पं. पद्म चन्द्र जैन शास्त्री, नई दिल्ली	१० (८५), २५ (८५), २६ (२०६), ३२ (२००), ३३ (२९४), ३४ (९१),

		३६ (१२०), ३८ (२११), ४० (९८)
९४.	श्री पन्ना लाल जैन, रीवां	२२ (१०२)
९५.	डॉ. पन्ना लाल जैन साहित्याचार्य, सागर	२ (२)
९६.	डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ	३३ (२९६-९७), ३४ (९४-९५), ३५ (२३८), ३६ (३४४), ३७ (१२१-२२), ३८ (२१३-१४), ४१ (२२०-२१)
९७.	डॉ. परमेश्वर सोलंकी, लाडनूं	३४ (९७-९८)
९८.	पं. पवन कुमार शास्त्री 'दीवान', मुरैना/सांगानेर	२८ (१३२)
९९.	श्री पार्श्व कुमार जैन, लखनऊ	२६ (२०९)
१००.	डॉ. पी. जी. मिश्रीकोटकर, नागपुर	३६ (३४८), ३७ (११९)
१०१.	श्री प्रकाश पालावत, अहमदाबाद	३५ (२४१), ३६ (३४८-४९)
१०२.	पं. प्रकाश हितैषी शास्त्री, दिल्ली	४ (३६)
१०३.	श्री प्रताप चन्द्र जैन, आगरा	१० (८५), ११ (४९-५०)
१०४.	श्री प्रेम कुमार जैन, विदिशा	३९ (३२५)
१०५.	श्री प्रेम चन्द्र जैन, अहिंसा मन्दिर, नई दिल्ली	२१ (९१)
१०६.	डॉ. प्रेम सुमन जैन, उदयपुर	३ (२), १६-१७ (१२३), २६ (२०३-०४)
१०७.	डॉ. फूलचन्द जैन 'प्रेमी', वाराणसी	२९ (२१३)
१०८.	डॉ. बारे लाल जैन, रीवां	२३ (७१)
१०९.	पं. बालचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री, हैदराबाद	४ (३६)
११०.	बालासाहेब सातप्पा बलवान, बेडकीहाल	२८ (१३०)
१११.	डॉ. बी. के. खड़बड़ी, संकेश्वर/मिरज	२६ (२०१)
११२.	श्री भगत राम जैन, दिल्ली	१० (८६)
११३.	पं. भंवर लाल न्यायतीर्थ, जयपुर	३ (२)
११४.	श्री भंवर लाल नाहटा, कलकत्ता	१६-१७ (११७-१८)
११५.	डॉ. भाग चन्द्र जैन 'भागेन्दु', भोपाल/दमोह	२२ (१०१), २६ (२०१)
११६.	डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर', नागपुर/ वाराणसी	२६ (२१२), ३० (३३०), ३३ (२९३)
११७.	पं. भुवनेन्द्र कुमार जैन शास्त्री, सागर	२२ (९९)
११८.	श्री मदन मोहन वर्मा, ग्वालियर	२१ (९२), ३० (३३२), ३२ (१९६-९७), ३३ (२९८), ३४ (९६-९७) ३५ (२४०), ३६ (३४५-४६), ३७ (११७), ३८ (२१५-१६), ३९ (३३०), ४१ (२२२), ४२ (३३४)
११९.	श्री मनोज कुमार जैन 'निर्लिप्त', अलीगढ़	१६-१७ (१२३), १८ (९०-९१), २०

(१०६), २१ (६३-६४), ३७ (१२०-२१), ३८ (२१४-१५), ३६ (३३०-३१), ४० (१०३), ४१ (२२३), ४२ (३३६)

१२०. डॉ. (ब्र.) मनोरमा जैन, रोहतक — २६ (२०४)
१२१. पं. मनोहर मारवड़कर, नागपुर — ३३ (२६७-६८), ३४ (६४), ३६ (३२३)
१२२. पं. मल्लिनाथ जैन शास्त्री, चेन्नई — २६ (२१६-१७)
१२३. श्री महाबीर प्रसाद जैन सर्राफ, नई दिल्ली — १६-१७ (११७), २१ (६५), ३२ (२००), ३३ (२६५), ३६ (३५०), ३८ (२१२), ४० (६८), ४१ (२१६), ४२ (३३४)
१२४. डॉ. महावीर प्रसाद जैन, लखनऊ — २० (१०६-०७), २६ (२१०)
१२५. श्री महेन्द्र कुमार भारिल्ल, इटारसी — २६ (२१५-१६)
१२६. डॉ. महेन्द्र राजा जैन, इलाहाबाद — २४ (७६-७७), २७ (२८७), २६ (२१८), ३६ (३२२)
१२७. डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया, अलीगढ़ — १६-१७ (१२४), २६ (२०७), ३१ (८३), ३४ (६१)
१२८. श्री मानिक चन्द जैन लुहाड़िया, नई दिल्ली — ४० (६८)
१२६. डॉ. मानिक चन्द मालू, हावड़ा — २६ (२१३)
१३०. डॉ. (कु.) मालती जैन, मैनपुरी — २६ (२१३-१४), ३२ (२०२), ३३ (२६५)
१३१. श्री मिलाप चन्द डंडिया, जयपुर — ४२ (३३७)
१३२. डॉ. (कु.) मीरा जैन, ग्वालियर — २२ (६२), २६ (२०६)
१३३. डॉ. (श्रीमती) मीरा द्विवेदी, वनस्थली — २७ (२६०)
१३४. श्री मुकुल मोतीलाल जैन, कटनी — ३७ (१२३), ४० (१०३), ४१ (२२२)
१३५. श्री मुन्नालाल जैन, फिरोजाबाद — २६ (२०५)
१३६. डॉ. (श्रीमती) मुन्नी पुष्पा सिंघई, वाराणसी — ३५ (२३७)
१३७. श्री मूलचन्द जैन अजमेरा, हरदा — ३६ (३२८), ४२ (३३४)
१३८. श्रीमती मृदुला गोयल, मेरठ — १८ (६२-६३), २२ (६६)
१३६ श्री मोती लाल 'विजय', कटनी — २ (२), २६ (२१३), २८ (१३१), ३२ (२०४), ३३ (२६३-६४), ३४ (६२), ३५ (२३५), ३७ (१२२-२३), ४० (१०१), ४१ (२१६-२०)
१४०. क्षु. मोती सागर, मांगीतुंगी/हस्तिनापुर — ३० (३३०-३१)
१४१. श्री मोहन लाल जैन छाजेड़, मनमाड — २७ (२६०)
१४२. कु. रचना जैन, कटनी — ४० (१०२-०३), ४१ (२२२)

१४३. डॉ. रज्जन कुमार, वाराणसी/बरेली ३० (३३०), ३८ (२१२)
१४४. श्री रणजीत सुन्दर दास जैन, आरा ३२ (२००)
१४५. डॉ. रतन चन्द्र जैन, भोपाल ३६ (३५०)
१४६. श्री रतन लाल बनाड़ा, आगरा ४१ (२२३-२४)
१४७. श्री रत्न चन्द्र अग्रवाल, जयपुर १८ (६२)
१४८. डॉ. रत्न लाल जैन, हांसी १८ (६३), १९ (१०५), २० (१०७), २२ (१०२), २६ (२०३), ३३ (२६३)
१४९. श्री रत्नेश कुमार जैन, रांची २५ (८८)
१५०. डॉ. (श्रीमती) रमा जैन, छतरपुर २६ (२१७), ३७ (१२०), ४० (१०३-०४)
१५१. डॉ. रमेश चन्द्र जैन, बिजनौर १६-१७ (१२४), २१ (६२), ३० (३३०), ३८ (२१७)
१५२. डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा, कलकत्ता/वाराणसी २ (२), १० (८५), २६ (२०९), ३५ (२४०)
१५३. डॉ. रवीन्द्र कुमार जैन, चेन्नई २६ (२०५), ३१ (८५)
१५४. श्री राकेश पाण्डेय, दिल्ली १८ (६४), १९ (१०३)
१५५. कु. राखी जैन, कटनी ३७ (१२७), ४१ (२२२)
१५६. आचार्य राजकुमार जैन, दिल्ली ३२ (१९९)
१५७. श्रीमती राजदुलारी जैन, कानपुर २२ (९९), २४ (७८), २७ (२८९), २८ (२३१), ३५ (२३८), ३६ (३४७), ४१ (२२२)
१५८. श्री राजमल जैन, नई दिल्ली २१ (६३), २६ (२०८)
१५९. डॉ. राजा राम जैन, आरा ३८ (२२१)
१६०. श्री राजेन्द्र कुमार जैन, लखनऊ २६ (२०५)
१६१. श्री राजेन्द्र नगावत, नोएडा/इन्दौर २६ (२१२), ३१ (८५-८६), ३५ (२३५-३६), ३६ (३४८), ३८ (२११)
१६२. डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, अमलाई २६ (२१२), २७ (२८८), ४२ (३३५-३६)
१६३. श्री रामजीत जैन, लश्कर, ग्वालियर १० (८६), १२ (७२), १८ (६४), २० (१०८)
१६४. डॉ. राम सजीवन शुक्ल, कोंच २८ (१३३), ३० (३३०), ३४ (९२), ४१ (२२०)
१६५. श्री रूपचन्द्र कटारिया, दिल्ली २६ (२०९)
१६६. श्री रोहित कुमार जैन, लखनऊ ३७ (११७-१८)

१६७. डॉ. लक्ष्मी मल्ल सिंघवी, नई दिल्ली	३८ (२१०)
१६८. प्रो. लख्मी चन्द जैन, जबलपुर	१६-१७ (१२३), २१ (६२), २६ (२०१), ३१ (८६)
१६९. डॉ. लाल चन्द्र जैन, वैशाली	२१ (६१), २२ (१०३-०४), २८ (१३२), ३३ (२९८), ४० (१००), ४१ (२२५-२६)
१७०. श्री लाल चन्द्र जैन, टिकैतनगर	४ (३६)
१७१. श्री लाल चन्द्र जैन 'राकेश', गंज बासौदा	३८ (२१०-११), ३९ (३२६), ४० (१०१-०२)
१७२. प्रा. सौ. लीलावती जैन, जलगाँव/पुणे	१८ (६२), २३ (७२), २५ (८८), ३३ (२६३), ३९ (३२२)
१७३. श्रीमती वासंती शहा, पुणे	२७ (२८७), ३१ (८४), ३६ (३४८), ३९ (३२९-३०)
१७४. डॉ. विजय कुमार जैन, लखनऊ	३९ (३२१)
१७५. सुश्री विद्या देवी, हजारीबाग	३४ (९३)
१७६. ब्र. विद्युल्लता शहा, सोलापुर	२६ (२०५)
१७७. मुनि विनयभद्र सागर, पालिताना	४१ (२१८)
१७८. डा. विनोद कुमार तिवारी, रोसेड़ा (समस्तीपुर)	४ (३६), ११ (५०), १८ (९०), २४ (७५), २५ (९४), २६ (२०२), ३२ (२००), ३३ (२९५), ३४ (९२), ३५ (२३५), ३७ (११९), ४१ (२२०)
१७९. पं. विमल कुमार जैन सौरैया, टीकमगढ़	२६ (२०३)
१८०. डॉ. विमल प्रकाश जैन, दिल्ली	३७ (१२५)
१८१. श्रीमती विमला जैन, कटनी	२८ (१३१), ३२ (२०४), ३५ (२३५), ३७ (१२२-२३), ४० (९९-१००)
१८२. श्रीमती विमला जैन, भोपाल	२९ (२१०)
१८३. डॉ. विलास संगवे, कोल्हापुर	१६-१७ (१२१-२२)
१८४. श्री विवेक काला, जयपुर	३८ (२२०)
१८५. डॉ. विश्वनाथ याज्ञिक, लखनऊ	३५ (२३८)
१८६. पं. वीरचन्द्र जैन शास्त्री, हजारीबाग	३० (३३०)
१८७. श्रीमती वीर बाला जैन, सहारनपुर	२४ (७४)
१८८. श्री वीरेन्द्र जैन पहाड़वाले, नजीबाबाद (बिजनौर)	२४ (७७)
१८९. श्री वेद प्रकाश गर्ग, मुजफ्फरनगर	१९ (१०५), २० (१०४), २२ (१००), २३ (७२-७३), २५ (८५), २६ (२०४),

	२७ (२८९), २८ (१३०), ३१ (८३), ३२ (१९९), ३६ (३५१), ३७ (११७)
१९०. श्री शरद कुमार जैन, नजीबाबाद	३२ (२०१)
१९१. श्री शान्ति प्रकाश जैन, I.A.S.,मेरठ	३९ (३२८-२९), ४१ (२१६-१७)
१९२. श्री शान्तिलाल के. शहा, सांगली	१९ (१०४), २६ (२०५), २७ (२८९), २९ (२१३), ३० (३२९), ३१ (८४), ३३ (२९४), ३५ (२४०)
१९३. श्री शान्ती लाल जैन बैनाड़ा, आगरा	४० (९७)
१९४. श्रीमती शारदा जैन, लखनऊ	३३ (२९४)
१९५. श्री शिरीष कान्त, मवाना (मेरठ)	३९ (३२८)
१९६. आचार्य शिव चन्द्र शर्मा, सहारनपुर	२९ (२१२-१३), ३० (३२९), ३२ (१९९), ३३ (२९६)
१९७. पं. शिव चरन लाल जैन, मैनपुरी	३९ (३२८)
१९८. डॉ. शिव दत्त शर्मा चतुर्वेदी, वाराणसी	३६ (३४६)
१९९. डॉ. शिव प्रसाद, वाराणसी	२६ (२१२)
२००. डॉ. शीतल चन्द जैन, जयपुर	२६ (२१०)
२०१. प्रो. शील चन्द्र जैन, छिन्दवाड़ा	१८ (९०), २२ (१०१), २३ (७३-७४), २५ (८९-९०)
२०२. श्री शुक्ल चन्द्र जैन, नई दिल्ली	३६ (३४८-४९)
२०३. डॉ. शेखर चन्द्र जैन, अहमदाबाद	२६ (२०३)
२०४. श्रीमती शेफाली मित्तल, दिल्ली	२० (१०८)
२०५. साहू शैलेन्द्र कुमार जैन, खुर्जा	१६-१७ (१२४), २१ (९३), २३ (७१), २६ (२०८), ३४ (९४)
२०६. डॉ. शैलेन्द्र कुमार रस्तोगी, लखनऊ	११ (५०), १८ (९०), २२ (९९-१००), ३३ (२९३), ३४ (९५-९६), ३७ (१२०), ३९ (३२४)
२०७. डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, उज्जैन	३४ (९७), ३६ (३४७), ४० (९६), ४१ (२१९)
२०८ श्री शैलेश कापड़िया, सूरत	४२ (३३६)
२०९. डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव, पटना	३१ (८६), ३३ (२९६), ३६ (३४९), ३९ (३२१-२२), ४० (९७-९८)
२१०. श्री श्रेणिक अन्नदाते, डोंबिवली (पूर्व)	२३ (७०), २६ (२११)
२११. डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत	३६ (३४२)
२१२. श्री सतीश कुमार जैन, दिल्ली	३६ (३४९-५०)

२१३. पं. सत्यन्धर कुमार सेठी, उज्जैन	१६-१७ (१२२-२३), २० (१०४), २४ (७५), २६ (२००)
२१४. डॉ. संघसेन सिंह, दिल्ली	३३ (२९९-३००)
२१५. ब्र. संदीप जैन 'सरल', बीना (सागर)	३१ (८६), ३२ (२००), ३३ (२९८), ३४ (९१-९२), ३५ (२३७), ३६ (३४९), ३८ (२१७-१८)
२१६. डॉ. (श्रीमती) सन्तोष जैन, सेरीटोस (यू.एस.ए.)	२० (१०७)
२१७. डॉ. सन्तोष कुमार तिवारी, सागर	२६ (२१५)
२१८. डॉ. सन्तोष कुमार बाजपेयी, सागर	२६ (२०६-०७), ३५ (२३९), ३६ (३५१)
२१९. श्रीमती समता जैन, आरा	२९ (२१२)
२२०. श्री. सी. के. नागराज राव, बंगलौर	१५ (६८), २० (१०४)
२२१. श्री सुकुमार चन्द्र जैन, मेरठ	२६ (२०५)
२२२. श्री सुखमाल चन्द जैन, नई दिल्ली	३० (३२८), ३३ (२९२-९३), ३५ (२३७), ३७ (११८-१९), ३८ (२२०-२१), ३९ (३२२)
२२३. डॉ. सुदीप जैन, नई दिल्ली	३२ (१९७-९८)
२२४. डॉ. (श्रीमती) सुधा जैन, वाराणसी	३३ (२९३)
२२५. श्रीमती सुधा जैन रानीवाला, खुर्जा	२५ (८९)
२२६. श्रीमती सुधा बेन सेठ, अगास/राजकोट	२९ (२१८), ३८ (२११)
२२७. डॉ. सुधांशु कुमार जैन, लखनऊ	२३ (७१)
२२८. श्री सुन्दर सिंह जैन, दिल्ली	२६ (२११), ३२ (२००), ३५ (२४१), ३६ (३५०-५१), ३८ (२११-१२), ३९ (३२४), ४० (९८), ४१ (२१८)
२२९. डॉ. (श्रीमती) सुनीता कुमारी, रूड़की	२६ (२०८), ३२ (२०३), ३७ (११७)
२३०. पं. सुनील जैन 'संचय', नरवां (सागर)	४० (१०४-०५), ४१ (२१९)
२३१. श्री सुबोध कुमार जैन, आरा	१३ (६०), १८ (९४), २३ (७०), २४ (७५-७६), २६ (२०७), २९ (२१०), ३७ (१२०), ४० (१०२)
२३२. श्री सुभाष जैन, नई दिल्ली	२४ (७५)
२३३. श्री सुभाष रणदिवे, डोंबिवली (प.)	३९ (३२६)
२३४. पं. सुमेर चन्द्र जैन, मुजफ्फरनगर	११ (४९), १९ (१०२), २६ (२०६), ३९ (३२६)

२३५. प्रा. सुमेरचन्द जैन, सोलापुर — ४१ (२२१-२२)
२३६. डॉ. सुरेन्द्र कुमार आर्य, उज्जैन — २३ (७२), २६ (२१०), ३६ (३४३-४४)
२३७. डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन, बुरहानपुर — ४० (१०२)
२३८. प्रो. सुरेन्द्र कुमार जैन, सिहोरा (जबलपुर) — ३६ (३२७)
२३९. श्री सुरेश 'सरल', जबलपुर — २२ (१०१-०२), २६ (२०७)
२४०. डॉ. (कु.) सुषमा जैन, सागर — १३ (६०), १६-१७ (११६)
२४१. डॉ. (श्रीमती) सूरजमुखी जैन, मुजफ्फरनगर — ४० (१००-०१)
२४२. श्री हजारी मल बाँठिया, कानपुर — १५ (६८), २० (१०५), २३ (७१), २७ (२८६), ३० (३२८-२६), ३४ (६३-६४)
२४३. डॉ. हरिश्चन्द्र जैन शास्त्री, मुरैना — २५ (८८), २६ (२१३-१४), ३० (३३१-३२), ३४ (६१), ३५ (२३८-३६)
२४४. डॉ. हिमाद्रि बनर्जी, कलकत्ता — २६ (२११)
२४५. श्री हुकम चन्द जैन, मेरठ शहर — २५ (८५,८८), २८ (१३१), ३२ (२०३), ३८ (२१६-१७)
२४६. श्री हुकम चन्द महात्मा, उदयपुर — १२ (७२)
२४७. डॉ. हेमन्त कुमार जैन, वाराणसी — १८ (६३)
२४८. डॉ. (सौ.) हेमलता जोहरापुरकर, काटोल (नागपुर) — ३५ (२४१)

(कोष्ठक में पृष्ठ सं. है)